प्रकाशक—
चतुरसेन गुप्त
अध्यक्ष—
इन्द्रप्रस्थ-पुस्तक-भण्डार
दरीबा कलाँ, दिल्ली।

मुद्रक—
भारत प्रिंटिङ्ग वर्क्स,
बाजार सीताराम,
दिल्ली।

कान्यकुब्जों की ओर।

—:०—०:—

सज्जनों

अपने हृदय पर हाथ रखकर विचारिये कि वास्तव में हम लोग कितने पतित होगये हैं। कितने गहरे गड्ढे में गिर गये हैं। जब कि भारतवर्ष के समस्त अन्यान्य समाज अपनी प्रगति को उन्नति के पथ पर बढ़ा रहे हैं, सभी अपने भले बुरे को सोच चुके हैं, तब फिर कितनी लज्जा की बात है कि श्रेष्ठ कहलाने वाला कान्यकुब्ज समाज ज्यों का त्यों अजगर की भांति पड़ा रहे। उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन हो न जान पड़े। सभी गहरी नींद में खर्राटे भरते रहें।

विचारिये और अच्छी तरह विचारिये कि कान्यकुब्ज समाज ने ऐसी कौनसी संस्था खोल रक्खी है जिसके द्वारा अविवाहित कन्यायें वर प्राप्त कर सकें, दहेज की प्रथा उखाड़ फेंकी गई हो, विधवाओं को जीविका का प्रबंध किया गया हो, अनाथों का पालन हो रहा हो और नारियों के अधिकारों में सुधार किया गया हो।

केवल दो चार इने गिने हाईस्कूल बना देने से ही इति नहीं हो जाती, उन पाठशालाओं में ऐसे वीर उत्पन्न किये

अपने जीवन की कहानियों से इनका मिलान न करें नहीं तो मुझे बड़ा कष्ट होगा।

बड़े बूढ़े मुझे क्षमा करें, नवयुवक मैदान में आवें, छोटे २ बालक समाज सुधार के गीत गावें, मातायें आशीर्वाद दें, बहिनें अपने अधिकारों के लिये सत्याग्रह करें और छोटी २ बच्चियाँ भारत माता का अंचल थाम कर खड़ी हों। तब मैं समझूंगा कि मेरा परिश्रम निष्फल नहीं बीता।

बूढ़े हँसें मुझे परवाह नहीं है, विरोधी विरोध करें मुझे चिन्ता नहीं है, आपत्ति करने वाले आपत्तियाँ करें मुझे शंका नहीं है, और लफंगे खिल्ली उड़ावें मुझे मलीनता नहीं है, केवल समाज के नवयुवक मुझ से न रुठें, वे मेरा साथ दें, अपने हृदय में मुझे स्थान दें बस यही एक चित्त में अभिलाषा है

ऊगू, बुधवार आषाढ़ शुक्ल १५ सम्वत् १९८८	विनीतः— कान्ति कृष्ण शुक्ल

दो बातें।

~~~

पुस्तक आप के हाथ में है। आप पढ़ें-देखें और समझें कि ढोंगी कान्यकुब्ज समाज किस पथ का अनुकरण कर रहा है। "कान्यकुब्जाः द्विजा श्रेष्ठाः" का पाठ पढ़नेवाले किस अन्धकारमय परिस्थिति में पड़े हुए हैं, बीस बिस्वा मर्यादा के अधिकारी कैसे कैसे अत्याचार करते हैं और अपने को देवता माननेवाले कितने भयानक राक्षस हो रहे हैं।

—लेखक।
~~~

नम्र-निवेदन।

—:○※::○:—

श्री कान्तिकृष्ण जी शुक्ल कान्यकुब्ज समाज के होनहार नवयुवक हैं आप के हृदय में जाति-प्रेम कितना कूट कूट कर भरा है, आप जाति की दुर्दशा से कितने दुखित हैं, आप जाति का भविष्य कितना उज्ज्वल देखना चाहते हैं, आप जाति की कुरीतियों का किस प्रकार मर्दन करना चाहते हैं, यह आपको इस पुस्तक के पढ़ने से ज्ञात हो जायगा, निःसन्देह आपने यह पुस्तक सद्भावना से लिखी है, इसलिये हम इसे प्रकाशित कर रहे हैं, हमें आशा ही नहीं, किन्तु विश्वास है कि कान्यकुब्ज समाज तथा अन्यान्य महानुभाव लेखक महोदय के परिश्रम का स्वागत करेंगे।

आपका प्रकाशक,

श्रावणी १९८८] चतुरसेन।

समर्पण ।

देश एवं कान्यकुब्ज समाज के उन नवयुवकों के कर-कमलों में यह पुस्तक बड़े सम्मान तथा आशा के साथ अर्पण की जाती है जो, साहस रखते हैं, दहेज की प्रथा को मेटना चाहते हैं, नारियों पर नित्य होनेवाले अमानुषिक अत्याचारों के विरोधी हैं और जो बिखरे हुओं को संगठित करना चाहते हैं ।
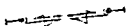
विनीत:—

"कान्ती" ।

विषय-सूची ।

बिटिया

१

सन्ध्या का समय था। सूर्य भगवान का रथ सारे दिन में आकाश मण्डल का रास्ता समाप्त करके चन्दनपुर के लोगों की दृष्टि से ओझल हो चुका था। पशु-पक्षीगण अपने अपने स्थानों को लौट रहे थे। भूखे कृषक दिन भर खेतों में परिश्रम करके कन्धों पर हल लिये अपनी झोपड़ियों की ओर लपके जा रहे थे। ठीक उसी समय गाँव के एक कोने वाले छोटे से घर में रोने का शब्द सुनाई पड़ा। चन्दन पुर के किसान जो पास ही के रास्ते से जा रहे थे सहसा उस ओर तेजी से भागे।

घर के अन्दर रोने का शब्द पूर्ववत जारी था। बीच-बीच में कोई करुणा स्वर से चिल्ला रहा था हाए लुट गया, भगवान ने हमारे साथ बड़ा अन्याय किया रुदन लगभग १ घन्टे तक होता रहा किन्तु इसका मूल कारण उन किसानों की समझ में बिल्कुल न आया। घर से न कोई बाहर ही आ रहा था और न कोई अन्दर ही जा रहा था जिससे इसका

दोपहर का समय था। मंगली अपने खेत में हल चला रहा था इतने में मुरली वहाँ आ पहुँचा। मुरली, मंगली का अभिन्न-हृदय से मित्र था, कभी २ अपना काम समाप्त करके मन बहलाने के लिये उसके पास आ बैठता था।

हल की मुठिया मंगली के हाथ से छीनते हुए मुरली बोला—मंगली भाई, उस दिन गंगू पंडित के लड़की हुई थी—घर वाले इस प्रकार रो रहे थे जैसे कोई मर गया हो। मुझे तो बड़ा आश्चर्य हुआ, आखिर इसका कारण क्या है?

मंगली—भाई वे कनौजिया बाम्हन हैं न।

मुरली—तो क्या बिटिया होने से रोया जाता है।

मंगली—अरे उसके विवाह में २०००) की थैली देनी पड़ेगी इसी से रो रहे होंगे।

मुरली—लेकिन थैली का प्रश्न अभी कहाँ है?

मंगली—अभी नहीं, दस बारह साल के बाद तो देना ही पड़ेगा जब अभी से जोड़ेंगे तब कहीं उस समय तक तैयार होगा।

मुरली—क्या बिना थैली दिये विवाह नहीं होसकता।

मंगली—असम्भव है-क्या किसी चमार के यहाँ करेंगे!

मुरली—और इतना रुपया न हो?

मंगली—न होगा तो लड़की को कुँआरी बैठा रक्खेंगे।

किसा धाकर के घर में अपनी बिटिया का विवाह करके पुरखों का नाम नहीं धरा सकते।

गंगू पंडित को चन्दनपुर के सभी स्त्री पुरुष बाल युवा और वृद्ध अच्छी तरह जानते थे। कारण कि उनको कुछ कुछ ज्योतिष का ज्ञान था। किसी को खेत जोतने का मुहूर्त बता देते, किसी को खेत काटने का, किसी को अनाज लाने का, किसी को खेत सींचने का, किसी को पेड़ लगाने का और किसी को विवाह करने का। तात्पर्य्य यह कि आस पास के गाँव वाले गंगू पंडित के नाम से भलीभाँति परिचित थे और बिना मुहूर्त पूँछे रोटी तक न खाते थे। इसके अतिरिक्त गंगू पंडित को भी इस व्यवसाय से पूरा लाभ था कोई न कोई उनके दरवाजे पर बैठा ही रहता था, ऋतु अनुकूल फल, फूल, घास, लकड़ी, मिट्टी के घड़े, कण्डे और पंखा इत्यादि वस्तुएँ घर बैठे ही लोग दे जाते थे। इन्हीं साधनों से उनकी गृहस्थी चलती थी।

मंगली यद्यपि अछूत था किन्तु गंगू पंडित उससे सबसे अधिक स्नेह करते थे। इसका कारण क्या था परमात्मा जानें किन्तु जब कभी वह गंगू पंडित के दरवाजे पर जाता कुछ न कुछ पूजन को सामग्री अवश्य लेजाता था। जो कुछ हो गंगू पंडित उसके पूज्य देवता थे और वह उनका पूजक।

कभी कभी गंगू पंडित के मुहूर्त से किसानों का अनिष्ट भी होजाता था और यदि कोई उन्हें इस बात की सूचना

देता तो वे मुंह बनाकर यही उत्तर देते थे कि तुमने ठीक समय पर कार्यारम्भ न किया होगा।

किसान इस उत्तर से चुप हो जाते थे क्योंकि उनके पास समय देखने के लिये यन्त्र ही कौनसा था।

३

गंगू पंडित का मकान गाँव के किनारे कच्ची ईंटों से बना था यही उसकी पैतृक सम्पत्ति थी। इसके अतिरिक्त उनके पिता संसार में कुछ नहीं छोड़ गये थे। घर में पंडिताइन तथा एक चार वर्ष का पुत्र था जिसे गंगू पण्डित प्राणों से भी अधिक प्यार करते थे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि दरिद्रावस्था होने पर भी आप ने लगभग ५०) का ऋण लेकर उसका जन्मोत्सव मनाया था। वे बहुधा कहा करते थे कि मेरा मुन्नू दर्शनी हुन्डी है। इससे मेरा भविष्य सुधरेगा, अनेकों धनाढ्य विवाह की लालसा से मेरे दरवाजे पर आवेंगे—खुशामद करेंगे। विवाह में दो हजार से कौड़ी कम न लूँगा एक अच्छा मकान बनाऊंगा, बगीचा लगाऊंगा और खेती कराऊंगा घर में छोटी सी बहू आवेगी अपने हाथ से रोटी बनावेगी, अपनी सास की सेवा करेगी और इस प्रकार यह सूखा हुआ घर एक बार फिर हरा भरा होजावेगा। पाठक गंगू पंडित की इस कल्पना से आश्चर्य कर रहे होंगे किन्तु आश्चर्य का इसमें कोई कारण नहीं है। गंगू पंडित ऊंचे घराने के गिनासों के पांडे थे। पूरी २०

मुँहो को लोग राण्ड कहते हैं—क्या राण्ड होजाने पर ही उनके चित्तको शान्ति मिलेगी? हाय संसार भी कितना स्वार्थी है—पैसे के पीछे अपना पराया हो जाता है। इसी चिन्ता में डूबते उछलते उन्हें कुछ नींद आगई और जब आंख खुली तो देखा कि गंगू पंडित भोजन लिये हुए खड़े हैं।

पंडिताइन ने धीमे स्वरसे कहा—आपने भोजन कर लिया?

गंगू पंडित—आ रहा हूं। मुन्नू खा रहा है तो तुम भी खा लो। मैं जाता हूं।

इतना कह कर गंगू पंडित चले गये और पंडिताइन भोजन करने के लिये बैठ गईं।

४

चन्दनपुर की आबादी कुछ अधिक घनी न थ अधिकांश किसान थे—जो दिन भर के लिये गाँव खाली करके अपने २ खेतों को चले जाते। गाँव के किन एक छोटी सी नदी थी—जिसमें छोटे २ लड़के दिन तैरा करते थे। नदी अधिक गहरी न थी और इस गांव वाले उन लड़कों की चिंता न करते थे। गांव में भग ८ घर कनौजिया ब्राह्मणों के एक ही मुहल्ले में इस कारण यह मुहल्ला गांव के अन्य मुहल्लों से था। गंगू पंडित अपने चबूतरे पर नीम के टाट बिछा कर बैठ जाते और प्रत्येक दिन का भ

फल विधि पूर्वक सुनाया करते। मथुरा सुकुल अपनी दूकान में गुड़, नमक, लाल मिर्चों की बोरियों को प्रातः काल से ही सजा देते और जो कोई उस रास्ते से निकलता उसे बिना बुलाये न मानते। बचनू मिसिर के पास केवल एक कनस्तर रानी मार्का मिट्टी का तेल था जिसे वे रात के आठ बजे तक बेचा करते। इस के अतिरिक्त उस मुहल्ले के शेष सभी कनौजिया-पंचादरी-चमौंदार थे ऊंचे कुल के न थे। गंगू पांडे, मथुरा सुकुल और बचनू मिसिर यद्यपि रोटियों के लिये तरसते थे किन्तु कभी भूल से भी उनके यहां पानी न पीते। गंगू पंडित बहुधा कहा करते थे—हैं चमौंदार हुआ तो क्या हुआ, हमारे बराबर पहुंचने में अभी अनेकों जन्म लेने पड़ेंगे। नाक रगड़ कर मर जायेंगे तब कहीं त्रिवेदी से पांडे हो सकते हैं।

मथुरा सुकुल अपना पिचका हुआ मुंह फुला कर कहते "अरे पांडे दादा—एक सुकुल—लाख बिगुल" अभी तो उन्होंने केवल तीन ही वेद पढ़े हैं शेष एक पढ़ने में पूरे हजार वर्ष लगेंगे।

बचनू मिसिर बोल उठते—ठीक कहते हो भइया अरे कभी गीदड़ भी सिंह हुआ है ?

इसी प्रकार उस कनौजिया मुहल्ले में दिन भर चहल पहल रहती थी। पंचादरी-चमौंदार भी किसी बात में कम न थे। परमात्मा की कृपा से घर में धन था और

जहां तक होसकता अपने से ऊंचे ही कुल से सम्बन्ध करते इस विषय में यदि उनका सवर्स्व लुट जाता तो भी चिन्ता न थी। पं० प्रेम नारायण त्रिवेदी इस समाज के अगुवा थे। घर में स्त्री, २ पुत्र तथा ३ कन्यायें थीं। दो कन्याओं का विवाह भी ऊंचे कुलमें हो चुका था। दोनों पुत्र लखनऊ के "कान्यकुब्ज हाई स्कूल में पढ़ते थे। जब कभी छुट्टी मिलती घर आकर ही छुट्टी के दिन बिताते थे। बड़ा लड़का चन्द्रकुमार ८ वीं श्रेणी में और छोटा नन्द कुमार ५ वीं श्रेणी में शिक्षा पा रहा था।

५

रात के लगभग १० बजे होंगे। गंगू पंडित टाट पर बैठे हुए थे पास ही मंगली चमार खड़ा था। गंगू पंडित ने कहा "मंगली हमारी आशाओं पर पानी फिर गया। जिस खेत को खरीदने के लिये मैंने तुम से कहा था उसे अब न खरीद सकूंगा।

मंगली—आखिर बात क्या है पंडित दादा।

गंगू पंडित—बात क्या है ? यही हमारी तक़दीर ! सोचा था मुन्नू के विवाह में जो रुपये मिलेंगे उनसे हमारी तक़दीर चेत जायगी—लेकिन देखता हूँ कि इन्हीं पोथी पत्रों को समेटते २ आँखें बन्द होजायँगी।

मंगली—सो ठीक है पंडित दादा—लेकिन सरला भी तो अपना भाग्य लेकर आई है। क्या पता उसकी तक़दीर

से आप भी पं० प्रेम नारायण की भाँति धनी हो जाँय ।

गंगू पंडित—सो कहाँ मंगली—ऐसा हमारे भाग्य में कहाँ है ।

मंगली—पण्डित दादा—सरला देखने में तो बड़ी भाग्य शालिनी मालूम पड़ती है । पूर्णमासी के चन्द्रमा की तरह उसका मुख हमेशा खिला ही रहता है । स्वभाव में तो उस के बराबर गाँव में कोई दूसरी लड़की ही नहीं है । उस दिन दरवाजे पर खेल रही थी—मैं खेत से आरहा था—हाथ में २—३ ककड़ियाँ थीं—पूछा—सरला बेटी ककड़ी खायगी ! उसने जवाब दिया 'तुम अपने घर लेजाओ—हमारे चाचा मुझे और लादेंगे !" मुझे गोमाञ्च होगया । मैंने स्नेह पूर्ण-नेत्रों से उसे देखते हुए ककड़ी देना चाहा किन्तु वह यह कह कर भीतर घुस गई कि "अम्मा से पूछ आऊं" ऐसी चतुर लड़की तो मैंने आज तक नहीं देखी ।

गंगू पंडित—हाँ लड़की तो ऐसी ही है । किन्तु मेरे किस काम की ? कुछ दिनों के बाद ब्याह होजायगा अपनी ससुराल चली जायगी । मेरा वंश तो कुछ उजागर होगा नहीं ।

मंगली—वंश उजागर करने के लिये तो परमात्मा ने प्रभू को बड़ा कर दिया है आप चिन्ता क्यों करते हैं ?

गंगू पंडित—क्या बताऊँ हमारे जिन्दगी यों ही बीत जायगी । जब से मैंने सब [illegible] होगया ।

बुढ़ापे में पुत्र हुआ था आशा हुई कि अब कुछ दिन आनन्द से कटेंगे। लेकिन भाग्य ही उलट गया—यदि सरला की जगह एक और मुन्नू होजाता तो यही संसार स्वर्ग था। पाँच छः हजार नक़द मिलते घर में २ बहू आतीं—एक अच्छा घर बनवा देता कुछ खेत खरीद लेता और एक बाग लगवा देता। मुन्नू भी जानता कि उसका बाप उससे कितना स्नेह करता है। अब एक दिन इसी प्रकार आँखें बन्द हो जायंगी मुन्नू समझेगा कि उसका पिता उसके लिये कितना बड़ा शत्रु था। उसके ऊपर लगभग ३००) रुपया लेकर खर्च कर चुका हूँ विचार था किसी प्रकार कुछ औरलेकर पढ़ा लिखा दूंगा विवाह होजाने पर उसे चुकाने के बाद भी इतना शेष रह जायगा कि जिससे सारी आवश्यकतायें पूरी होसकें। किन्तु अब तो उल्टा होगया उधर से लाऊंगा और इधर घर बेचकर भिखारी हो जाऊंगा।

मंगली—खैर पंडित दादा—जैसा होगा देखा जायगा क्या किया जाय। चिन्ता करने से लाभ क्या है?

गंगू पंडित—लाभ क्या अब हानि ही हानि है। लड़की क्या हुई घर की कुड़की होगई।

इतने में किसी ने किवाड़ खटखटाये। गंगू पंडित मंगली . उनके घर में घुस गये। पंडितजी ने कहा—
... अब आने ही वाले होंगे गंगू पंडित ने
. . —"नहीं, मैं अभी ही आया था" इतना कह कर

वे अपने शयनागार में जा पहुँचे । देखा कि मुन्नू और सरला दोनों ही उनकी चटाई पर पड़े सो रहे हैं। गंगूपंडित का पारा चढ़ गया। क्रोध से बोले यह सरला यहाँ क्यों पड़ी है ? पंडिताइन—क्या कहूँ उसने नहीं माना कहने लगी आज मैं भी चाचा के साथ सोऊँगी । मुन्नू कहने लगा हाँ सल्लो—आज हम तुम दोनों पास ही सोवेंगे अम्मा से छुट करलो।

इतना सुनना था कि गंगू पंडित लाल २ आँखें करके बोले—देखने से चित्त ठठा होजाता है—और अबोध बालिका के हाथ पाँव पकड़ कर ऊपर उठा लिया। वह चिल्ला पड़ी "चाचा-चाचा आज मैं भी तुम्हारे पास सोऊँगी—अम्मा के पास नहीं १ गंगू पंडित ने कहा—चुप रह रांड रात को सोने में भी बाधा देती है" और धम से पंडिता - के टाट पर उसको पटक दिया। वह चिल्लाने लगी पंडिताइन ने उसे छाती से लगाते हुए कहा—चुप होजा बेटी तुम्हें यहां कोई नहीं चाहता।

गंगू पण्डित ने कहा—हाँ तू तो चाहती है। तुझे यह स्वर्ग में दीपक दिखायेगी। हमें न चाहिये।

पंडिताइन—भला कोई इस तरह पटक देता है। अभी बालिका है विचारी क्या समझे जब बड़ी होजाय तभी डांटना।

गंगू पंडित—बड़ी होकर क्या घर में दीपक रखने के

रीत होने से आगे का कार्य रुक गया। हम यह पहिले लिख चुके हैं कि ये दोनों लड़के स्कूल बन्द होने पर सीधे घर आकर पठन पाठन करते थे। लखनऊ में इनको रहना अच्छा नहीं लगता था। इनके साथ इनके मामा का एक छोटा लड़का भी पढ़ता था उसका नाम था मनोहर। जैसा उसका नाम था वैसा ही वह रूप, गुण और विद्या में भी मनोहर था। यदि कुछ दोष उस मनोहर में हो सकता था तो यही कि वह कान्यकुब्ज होते हुये भी वह बीसों बिसुवा में हल नहीं चला सकता था। चन्द्रकुमार और नन्दकुमार के साथ प्रायः मनोहर भी चन्दनपुर आया करता था। छुट्टी के दिन व्यतीत होजाने पर फिर लखनऊ लौट जाता। जब ये बालक चन्दनपुर आते तो अपने मुहल्ले के सभी घरों में बड़ों की चरणरज स्पर्श करने अवश्य जाते। यद्यपि गंगू पंडित पं० प्रेमनारायण से हृदय में ईर्ष्या रखते थे किन्तु इन बालकों की सुशीलता पर उनका चित्त स्नेह सिन्धु में बरबस डूब जाता था कहने का तात्पर्य यह है कि गंगू पंडित इन बालकों से स्नेह रखते थे। और यह बालक निःसंकोच भाव से घर में आते जाते थे। जिस समय पंडिताइन इन्हें देखतीं बड़े आदर से चटाई बिछा देतीं और कुशल प्रश्न के पश्चात् बिना कुछ खिलाये पिलाये न मानतीं, सरला और मुन्न भी चटाई के पास आ जाते और बड़ी कुतूहलपूर्ण दृष्टि से उन तीनों बालकों को देखने लगते।

लिये दीवट बनेगी ? जहां कल मरती हो वहां आज ही मर जाय। मैं सुचित्त तो हो जाऊँ।

माता के हृदय में स्नेह का अँश पुत्र की अपेक्षा पुत्री के लिये कुछ अधिक होता है। इस बात को धन का स्वप्न देखने वाला पिता नहीं समझ सकता पंडिताइन यद्यपि गंगू पंडित के स्वभाव से भली भांति विज्ञ थीं किन्तु वे इस अन्तिम वाक्य को न सह सकीं, सरला को स्नेह से लिपटाते हुए बोलीं—खैर आप इसकी चिन्ता न करें—इस बच्ची पर आपका एक पैसा भी खर्च न होगा। आप इसके विवाह की चिन्ता दूर कर दें ईश्वर इसका भी मालिक है। इतना कहते ही उनका कण्ठ रुंध गया और कुछ आगे न बोल सकीं। सारी रात उस फटे टाट पर आंसू बहाती रहीं।

६

बात पुरानी है चन्दनपुर में उस समय कोई पाठशाला आदि न थी। पं० प्रेमनारायण त्रिवेदी ने कुछ दिन अपने पुत्रों को घर पर ही पढ़ाकर लखनऊ भेज दिया। लखनऊ में त्रिवेदी जी की ससुराल थी जिससे इन दोनों लड़कों के पढ़ाने में बड़ी सुगमता मिली। धनी परिवार में उत्पन्न होने के कारण इन लड़कों को आर्थिक कष्ट न था। वे कुछ ही काल में प्रयाग विश्वविद्यालय से इन्ट्रेन्स की परीक्षा पास कर घर पर आकर रहने लगे। यद्यपि इन लड़कों का विचार आगे पढ़ने का था किन्तु पिता की राय उनके विप-

रीत होने से आगे का कार्य रुक गया। हम यह पहिले लिख चुके हैं कि ये दोनों लड़के स्कूल बन्द होने पर सीधे घर आकर पठन पाठन करते थे। लखनऊ में इनको रहना अच्छा नहीं लगता था। इनके साथ इनके मामा का एक छोटा लड़का भी पढ़ता था उसका नाम था मनोहर। जैसा उसका नाम था वैसा ही वह रूप, गुण और विद्या में भी मनोहर था। यदि कुछ दोष उस मनोहर में हो सकता था तो यही कि वह कान्यकुब्ज होते हुये भी वह बीसों बिसुवा में हल नहीं चला सकता था। चन्द्रकुमार और नन्दकुमार के साथ प्रायः मनोहर भी चन्दनपुर आया करता था। छुट्टी के दिन व्यतीत होजाने पर फिर लखनऊ लौट जाता। जब ये बालक चन्दनपुर आते तो अपने मुहल्ले के सभी घरों में बड़ों की चरणरज स्पर्श करने अवश्य जाते। यद्यपि गंगू पंडित पं० प्रेमनारायण से हृदय में ईर्ष्या रखते थे किन्तु इन बालकों की सुशीलता पर उनका चित्त स्नेह सिन्धु में बरबस डूब जाता था कहने का तात्पर्य यह है कि गंगू पंडित इन बालकों से स्नेह रखते थे। और यह बालक निःसंकोच भाव से घर में आते जाते थे। जिस समय पंडिताइन इन्हें देखतीं बड़े आदर से चटाई बिछा देतीं और कुशल प्रश्न के पश्चात् बिना कुछ खिलाये पिलाये न मानतीं, सरला और सुख भी चटाई के पास आ जाते और बड़ी कुतूहलपूर्ण दृष्टि से उन तीनों बालकों को देखने लगते।

चन्द्रकुमार मुन्नू को पकड़कर गोद में बिठा लेता पूछता "तुम हमारे साथ पढ़ने चलोगे" ?

पढ़ने के शब्द से मुन्नू कांप उठता, कहता "ना चन्दू दादा हम नहीं पढ़ेंगे"।

नन्दकुमार पूछते "तो क्या करोगे" ?

मुन्नू—चाचा कहते थे तुमको जोतिस सिखायेंगे हम जोतिसी होंगे।

नन्दकुमार—अरे पागल बिना पढ़े कहीं ज्योतिषी हो सकते हो!

मुन्नू—चाचा कहाँ पढ़े हैं?

इतने में सरला माता के पास खिसक कर आ जाती और कहती, अम्मा तो मुझे ही पढ़ने दो, दादा न पढ़ें तो रहने दो मैं पढ़ लूंगी।

माता के नेत्रों में आँसू आ जाते वह कहती अरे तू कहाँ तक मुन्नू का दुख दूर करती रहेगी—पढ़ना उसे ही पड़ेगा—तेरे पढ़ लेने से उसे विद्या कहाँ से आ जायगी।

पंडिताइन मनोहर के रूप और गुण पर मुग्ध थीं। मन में विचारती क्या सरला का विवाह किसी प्रकार उससे हो सकता है? मनोहर लखनऊ का रहनेवाला है धनी पिता का पुत्र है भला उसकी दरिद्र कन्या से उसका विवाह किस प्रकार होगा। दूसरी बात यह कि मनोहर धाकर है ऊँचे कुल की कन्या नीचे कुल में किस तरह जा सकती है।

एक दिन मनोहर गंगू पंडित के घर में बैठा था, उस समय मुन्नू नहीं था। पंडिताइन ने सरला से कहा—बेटी क्या तू इनके साथ जायगी ? सरला ने कातरता से उत्तर दिया—नहीं माँ मैं तो तुम्हारे ही पास रहूँगी। लखनऊ में रात को भूत आते हैं मैं वहाँ न जाऊँगी।

मनोहर बोला—नहीं सरला मैं तुम्हें अपने घर ले चलूंगा वहाँ भूत नहीं हैं, भला कहीं शहर में भूत होते हैं ? भूत तो पेड़ों पर रहते हैं।

सरला इस उत्तर से प्रसन्न हो गई और मनोहर के निकट आकर बोली "तब तो मैं जरूर चलूंगी, कब चलोगे मनोहर दादा ?

मनोहर ने सरला का हाथ पकड़ कर कहा—तुम कब चलना चाहती हो सरला ?

सरला के चेहरे पर उदासी छा गई उसका कारण था उसकी माता का स्नेह। वह अपनी माता की स्नेहपूर्ण गोद को छोड़कर किसी दूसरी जगह जाना पसन्द न करती थी। वास्तव में यदि संसार में कोई उससे स्नेह करनेवाला था तो वह थी उसकी माता। वह माता के इस ऋण से जन्म भर में भी उऋण न हो सकती थी। किसी प्रकार उसने गद्‌गद् कंठ से मनोहर को उत्तर दिया—मैं परसाल चलूंगी मनोहर दादा अभी मुझे अम्मा न जाने देंगी।

पंडिताइन ने स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखकर कहा—बेटी मैं

कब मना करती हूँ तुझे—तू अपने मनोहर दादा के साथ लखनऊ जायगी ?

सरला ने माता की गोदी में छिपकर उत्तर दिया अम्मा मैं पारसाल चली जाऊँगी—अभी नहीं।

पंडिताइन ने प्रेम से पुचकारते हुए कहा—अच्छा परसाल चली जाना—अभी रहने दे।

इसके बाद जब कभी मनोहर सरला से लखनऊ चलने को कहता तो वह यही उत्तर देती—परसाल चलूंगी। पंडिताइन कहती कि भला तेरा परसाल भी कभी आयेगा जब मैं तुझे लखनऊ जाते देख सकूंगी।

७

मुन्नू पढ़ने लिखने वाला लड़का न था। सारे दिन नदी के किनारे पड़ा रहता। कभी किसी बाग से आम तोड़ लाता तो कभी किसी खेत से खरबूजे। जब दिन अस्त होने लगता वह अपनी दिन भर की कमाई को धोती के एक कोने में बांध कर घर को लौटता। गंगू पंडित उसे देख कर पहिले कुछ डांट बताते किन्तु जब वह आँखें नीची करके कहता ? "बाबा मैं आम लेने गया था" तब चुप हो जाते। मनमें कहते मन्नू बड़ा मेहनती है, घर की चिन्ता इसे बहुत रहती है। बड़ा होनहार प्रतीत होता है। क्यों न हो, है तो एक ज्योतिषी का पुत्र। पंडिताइन इस बात

आखिर मैंने कहा था न कि बड़ा विद्वान होगा। अब पढ़ने में चित्त लगाने लगा है।

पंडिताइन ने स्नेह पूर्ण नेत्रों से मुन्नू को देख कर गंगू पंडित की भविष्य वाणी का पूरे तौर से समर्थन किया वे पति की इस असाधारण बुद्धि पर मोहित थीं। गंगू पण्डित गद् गद् हृदय से मुन्नू के पास जाकर बोले बेटा क्या पाठ याद कर रहे हो?

मुन्नू घबड़ा कर पुस्तक को छिपाने का प्रयत्न करने लगा—किन्तु गंगू पण्डित की दृष्टि उस पर पड़ गई थी उन्होंने देखा कि देव नागरी के स्थान में अंग्रेजी के अक्षर थे। आश्चर्य पूर्ण स्वर में पूछा—यह अंग्रेजी की पुस्तक कहाँ से मिली?

मुन्नू—हमें चन्दू दादा ने दिया है।

गंगू पण्डित—चन्दू आजकल लखनऊ में है वहाँ कहाँ है—क्या तुम चुरा लाये हो।

मुन्नू—नहीं चाचा मैं माँग कर लाया हूँ कल वापस कर दूँगा।

गंगू पण्डित—कल यह पुस्तक फिर न देख पड़े। वापस होजाना चाहिये।

मुन्नू—"बहुत अच्छा" कह कर घर में घुस गया।

गंगू पण्डित के चित्त में पहिले कुछ खेद हुआ किन्तु … सोच विचार कर कहने लगे—मुन्नू का यह काम

भी सर्वथा प्रशंसनीय है—उसने सरस्वती देवी की चोरी की है—अब उस पर विद्या देवी बहुत शीघ्र प्रसन्न होंगी।

इतने में पण्डिताइन ने बुला कर कहा—लो देखो अपने सपूत की कमाई—आज किताब चुरा लाया है कल डाका डालेगा।

गंगू पंडित ने हँस कर कहा—अरे इसने सरस्वती की चोरी की है—किसी का धन तो नहीं उठा लाया विद्या की चोरी करने से बहुत शीघ्र विद्वान् होगा।

पिता के मुख से अपनी प्रशंसा सुनकर मुन्नू कोठरी के बाहर निकल कर कहने लगा "चाचा, सल्लो मुझे चोर २ कहती है।"

गंगू पण्डित ने पुकारा—सरला ओ रांड सरला।

सरला पिता की आवाज सुनकर भयभीत होगई और कोठरी के किसी कोने में जा छिपी।

गंगू पंडित ने फिर पुकारा—अरी निकलो नहीं रांड।

भीतर से न तो कोई निकला और न कोई शब्द ही सुनाई पड़ा। गंगू पण्डित कोठरी में घुस कर चारों ओर देखने लगे किन्तु अन्धेरे के कारण वे वहां सरला को न पा सके। खिसिया कर पुकारा—रांड निकलेगी या दरवाजा बन्द करदूं।

सरला भयभीत होगई और ऊँचे स्वर से रोने लगी। पंडिताइन कोठरी में घुसगई—उसे उठाकर बाहर ले आई।

गंगू पंडित कड़क कर बोले "खबरदार, इसका स्वभाव खराब मत करो ?

पंडिताइन—क्या खराब कर रही हूँ ?

गंगू पंडित ने दो तीन तमाचे सरला के गाल पर जमाते हुए कहा—मेरे मुन्नू को चोर बनाती है—बड़ी साहूकार बनी है।

गाल पर तमाचा बैठते ही सरला के होश उड़ गये वह चीख मार कर रो पड़ी। पंडिताइन से यह क्रूरता न देखी गई—उन्होंने उसे आगे बढ़ाते हुए कहा—लो पहले इसे खा डालो—फिर मुझे भी खाकर सुख से रहो।

गंगू पण्डित—अरी दुष्टा मुँह संभालकर बोल।

पण्डिताइन—खूब सम्भाल लिया—तुम लड़की को खाना चाहते हो तो अपनी इच्छा पूरी करो।

इतने में किसी ने आवाज दी-पण्डित जी २......

गंगू पण्डित ने बाहर जाकर देखा पं० प्रेम नारायण गांव के दो तीन छोटे २ बालकों के साथ दरवाजे पर खड़े थे।

पं० प्रेमनारायण ने कहा—मुन्नू हमारे घर से एक पुस्तक उठा लाया है यदि उसके पास हो दिला दीजिये।

गंगू पण्डित घर में घुस गये। मुन्नू को एक ओर ले जाकर धीरे से बोले-तुझे प्रेमनारायण बुला रहे हैं, उनसे कह देना कि मैं कोई पुस्तक नहीं लाया। नहीं तो गांव में ... होगी।

मुन्नू जानता था, कि कैसी निर्दयता-से उसके चाचा ने आज सरला को पीटा है। उसने भयभीत होकर कहा—अच्छा चाचा, बहुत अच्छा।

पं० प्रेमनारायण ने स्नेह-से मुन्नू को अपने निकट बुलाकर पूछा—वह, किताब कहां है मुन्नू ?

मुन्नू—कैसी किताब चाचा! मेरे पास कहां ?

एक लड़का बोल उठा—तुम्हीं ने तो, मेरे सामने धोती में छिपाई थी।

दूसरा लड़का कहने लगा—हां, तुमने नहीं कहा था कि, इसकी तस्वीरें अपने घर में लगाऊंगा ?

मुन्नू—मैंने, ली है ? तुम्हीं तो उसे लाये थे।

पं० प्रेम नारायण ने स्नेह से मुन्नू को गले लगाकर कहा—अच्छा, अगर तुम उसका पता बतादो तो, मैं तुम्हें चार पैसे दूँगा।

बालकों को पैसे की बड़ी ममता होती है। मुन्नू के आगे एक ओर चार पैसे की गड्डी थी और दूसरी ओर वह कागज-वाली किताब! वह किताब की तस्वीरें देख ही चुका था और अब उसके चित्त में उसकी इतनी श्रद्धा न थी, जितनी उन चार पैसों की! एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं, पूरे चार पैसे! बस पुस्तक के बदले में मिल रहे थे। मुँह में पानी आगया—बात ठीक ही थी, गंगू पण्डित ने आज तक कभी उसे चार पैसे न दिए थे। उसने कुछ

"यही कि, मैं मनोहर का विवाह अपनी इच्छानुकूल करना चाहती हूं।"

"कहां? चन्दनपुर में?"

गोमती ने 'हां' कह कर शिर झुका लिया।

पं० श्यामनारायण ने पूछा—"वे कौन लोग हैं, क्या काम करते हैं?

गोमती—हैं तो ऊंचे घरके, गेगासों के पांडे हैं, किन्तु धन से लाचार हैं। लड़की की आयु इस समय १३ वर्ष के लगभग होगी—बड़ी रूपवती है, कुछ पढ़ना-लिखना भी जानती है। काम धन्धे में भी निपुण है। उसकी माता तो पूरी गौ है, जब मुझे मिल जाती है, कन्या की ओर देखकर आंखों में आंसू भर लाती है। उसी ने मुझसे कहा था—जीजी, इसका उद्धार करादो, तो तुम्हारी दासी होकर रहूंगी।

पं० श्यामनारायण—किन्तु वे तो गेगासों के पाण्डे हैं। भला, मुझसे सम्बन्ध कैसे कर सकते हैं?

गोमती—सो ठीक है, लेकिन लड़की का पिता उसे आंखों से अच्छी तरह देख तक नहीं सकता। स्नेह तो उसे छू-तक नहीं गया। ऐसी अवस्था में यदि यह कहीं निकल भी जाय तो उसे कुछ शोक न होगा।

पं० श्यामनारायण—ओ, वह बाप नहीं-पूरा चाण्डाल है।

गोमती ने सारा किस्सा पं० श्यामनारायण को सुना

कर कहा—दादा तुम मानोगे तो नहीं—लड़की, पूर्ण देवी है। मेरा विश्वास है, कि, आपके घरमें एक अपूर्व सौन्दर्य की मूर्ति आजाएगी। मनोहर भी उसे देख चुका है, वह किसी प्रकार से भी असन्तुष्ट न होगा।

पं० श्यामनारायण—विवाह किस तरह होगा।

गोमती—इसकी आप चिन्ता न करें। मैं जो भी कुछ करूँगी, खूब सोच समझ कर करूंगी। आप केवल 'हाँ' करते जाइयेगा।

पं० श्यामनारायण—कहीं ऐसा न हो कि, लोग हँसी उड़ायें।

गोमती—आप, इसकी भी चिन्ता न करें—केवल, स्वीकार कर लीजिये।

पं० श्यामनारायण—मैं, स्वीकार तो कर रहा हूं किन्तु सारी जुम्मेदारी तुम्हीं पर होगी।

गोमती ने 'बहुत अच्छा' कह कर शिर झुका लिया। फिर, कुछ सोचकर बोली—एक बात और है, मनोहर के विवाह में बरात न जा सकेगी!

पं० श्यामनारायण—क्या होगा ?

गोमती—केवल मनोहर को भेज दीजियेगा।

पं० श्यामनारायण द्विवेदी यद्यपि आयु के ५० वर्ष व्यतीत कर चुके थे, किन्तु उनके विचार पुरानी रूढ़ियों के न थे। वे कनौजिया-समाज के कल्याण की सर्वदा चिन्ता

या करते। उनका तिमंज़िला मकान लखनऊ के
राकगंज मुहल्ले में उनकी कीर्ति को अब भी जगा रहा
। आप पहिले नैशनल बैंक के मैनेजर थे किन्तु कुछेक
कारणों से त्याग-पत्र देकर अब घर-ही पर जीवन के शेष
दिन व्यतीत कर रहे थे। स्त्री मर चुकी थी। घर में दो
लड़कियाँ और तीन लड़के थे। लड़कियों का विवाह हो चुका
था—दो बड़े-लड़कों की बहुएं भी घर में मौजूद थीं। एक
लड़का वकील था और दूसरा डाक्टरी पढ़ रहा था। छोटे
लड़के मनोहर का विवाह अभी तक नहीं हुआ था। कारण,
कि द्विवेदी जी २५ वर्ष से नीचे के विवाह को राक्षसी
विवाह कहते थे। दूसरे मनोहर भी अपनी शिक्षा समाप्त
न कर सका था। वह इस वर्ष बी० ए० की परिक्षा देने
वाला था।

गोमती के मुख से 'केवल मनोहर' सुनकर द्विवेदी
जी कुछ देर तक मौन रहे। फिर आँखों-पर हाथ फेरते हुए
बोले—अच्छा, गोमती! जैसी तेरी इच्छा हो, कर! मनोहर
तेरा ही है। इस सम्बन्ध में मैं और कुछ नहीं कह
सकता।

इतना कहकर द्विवेदी जी खड़ाऊँ पहिन कर बाहर चले
गये और गोमती कुछ देर के लिये सोच में पड़ गई।

६

वैशाख की पूर्णमासी थी। गंगू पण्डित स्नान करके नदी के किनारे अपनी आधी-धोती सुखा रहे रहे थे। इतने में सामने से पुलिस के दारोगा आ खड़े हुए। गंगू पण्डित के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। दारोगा ने आगे बढ़कर कहा—तुम्हारा ही नाम गंगू है?

गंगू पण्डित—हाँ हुजूर, मैं ही गंगू हूँ।

दारोगा—तुम्हारा पेशा?

गंगू पण्डित—हुजूर कुछ जोतिस जानता हूँ, उसी के सहारे आप लोगों की कृपा से पेट पाल रहा हूँ।

दारोगा—तुम्हारे लड़के का नाम मुन्नू है?

गंगू पण्डित—हाँ हुजूर। वह संसकिरत पढ़ने के लिये काशी जी गया है आज सातवाँ दिन है। मैंने बहुतेरा कहा कि घर ही पर रहकर पढ़ लिख। लेकिन, उसने एक न सुनी बुढ़ापे में मुझे छोड़कर चला गया। उसकी माता ने मना किया तो उसे गालियाँ देने लगा—क्या हुजूर आप को कहीं मिला था।

दारोगा—हाँ, मिला—उसका चाल चलन कैसा है?

गंगू पण्डित—चाल चलन? चाल चलन तो हुजूर बड़ा अच्छा है। आजतक उसने मुझे कभी एक शब्द भी नहीं कहा—जब कभी उसे क्रोध आजाता तो घर में अपनी माता को केवल गालियाँ ही सुनाकर रह जाता था मारने के

लिये कभी हाथ तक न उठाया। मुझे तो, चूं भी नहीं करता।

दारोगा—क्या, तुम मुझे रामायण सुना रहे हो ?

गंगू पण्डित—हुजूर ! क़सूर माफ़ हो, मैं समझा नहीं।

दारोगा—अच्छा अब समझो और अच्छी तरह समझो—तुम्हारा लड़का मुन्नू उम्र २२ वर्ष, क़ौम ब्राह्मण, बाप का नाम गंगू पांड़े साकिन चन्दनपुर, ज़िला हरदोई कल दिन को यालामऊ में डाका डालने के अपराध में गिरफ़्तार किया गया है। वह पढ़ने के लिये काशी नहीं गया है अब जेल जायगा। बोलो उसकी जमानत दोगे।

गंगू पण्डित के ऊपर वज्र गिर पड़ा—काटो तो खून नहीं ! सजल नेत्रों से चिल्ला चिल्लाकर रोने लगे। "हाय मुन्नू तू गिरफ़्तार कर लिया गया ! तेरे हाथों में हथकड़ी पड़ गई !! बस इतने ही शब्द मुँह से निकले होंगे—उन्हें मूर्छा आगई। दारोगा साहब गाँववालों से मुन्नू के विषय में पूछताछ करके चले गये। नदी के किनारे भीड़ लग गई। कुछ ही क्षणों में यह खबर गाँव के प्रत्येक कोने-कोने में गूंज उठी।

जिस समय गंगू पण्डित नदी में गोते लगा रहे थे ठीक उसी समय उन्हीं के घर में मनोहर और सरला का विवाह हो रहा था। इस मुहूर्त को शोधनेवाला कोई पण्डित पुरुष न था। थी तो अबला।

गोमती ने मनोहर को एक पाटे (पटरा) पर बिठाकर कहा—बेटा, तुम जानते हो मैं आज तुम्हारे साथ यहाँ क्यों आई हूँ ?

मनोहर— फूफू, मैं तो कुछ नहीं जानता ।

गोमती—आज मैं खेलने को तुम्हें एक छोटी-सी गुड़िया दूँगी उसे अच्छी तरह से रखना ।

मनोहर—कैसी गुड़िया फूफू ?

गोमती ने सरला का हाथ पकड़कर कोठरी के बाहर खींच लिया और बलपूर्वक उसे मनोहर के निकट बिठाकर कहा—यही है तेरी गुड़िया ! जिसे मैं आज तुझे देती हूँ ।

मनोहर कुछ भयभीत-सा होकर बोला—फूफू ! तुमने यह क्या किया—कुछ पिता जी से भी पूछा है ?

गोमती—तुम इसकी चिन्ता न करो । मैं तुम्हारी रक्षा के लिये तुम्हारे साथ चलूँगी ।

मनोहर मौन होगया—पंडिताइन ने गंगाजल छिड़ककर उसके माथे पर तिलक लगाया । एक फूलों की माला मनोहर के गले में और दूसरी सरला के गले में डाल दी गई । मनोहर ने सरला के मस्तक पर सिन्दूर लगाकर उसे सौभाग्य प्रदान किया । पंडिताइन ने एक नारियल और एक गिन्नी मनोहर के पैरों पर रखकर अश्रु-पूर्ण नेत्रों से [illegible]—बेटा, यही मेरी छोटी-सी भेंट है—जिसे मैं

अपने जीवन में सबसे पहिले तुम्हें अपर्ण कर रही हूँ। इतना कहकर वह उसके पैरों पर गिरना ही चाहती थी कि मनोहर ने उनका हाथ पकड़कर उठा लिया।

जल-पान करने के बाद मनोहर घर से बाहर होगया। पंडिताइन ने सरला को एक धोती और दो रुपये देकर उसे गले लगाकर कहा—बेटी, परमात्मा की दया से आज मुझे वह दिन देखने को मिला है जब कि मैं तुम्हें लखनऊ जाने को कहूँगी। मेरी बेटी, खूब प्रसन्न चित्त से रहना। फिर शीघ्र ही तुम्हें बुला लूँगी। जाओ, जहाँ तक मुझे विश्वास है, परमात्मा तुम्हारा कल्याण करेगा। मेरी चिन्ता न करो, मैंने तुम्हारे योग्य ही वर ढूंढा है। खूब फलो फूलो।

सरला स्नेह से विह्वल होकर रो रही थी—माता ने बेटी का मुँह चूमते हुए कहा—जा बेटी, अब देर न कर परमात्मा तुम्हारा भला करेंगे।

सरला का हाथ गोमती के हाथ में पकड़ाते हुए पंडिताइन ने कहा—जीजी, मैं तुमसे इस जीवन में उऋण नहीं हो सकती— तुम्हारी यह बेटी है और तुम इसकी मां हो।

गोमती ने प्रत्युत्तर में केवल दो आँसू बहाकर सरला से कहा—चल बेटी, चलें।

घर के बाहर कुछ दूर पर एक बैल गाड़ी तैयार खड़ी थी—उसी में तीनों जाकर बैठ गये। गाड़ी चलदी। रास्ते में गोमती ने अपना एक बक्स खोलकर उसमें से

कुछ आभूषण और वस्त्र निकालकर सरला को प
दिये। दो घण्टे चलने के बाद बैलगाड़ी ठहर गई।
पर गाड़ी तैयार थी, टिकट लेकर तीनों व्यक्ति इन्टर
में जा घुसे। संयोग से उस डब्बे में कोई अन्य मुसा
था, गोमती ने हँसते हुए मनोहर से कहा—घर
क्या कहोगे ?

मनोहर ने उत्तर दिया—मैं तो तुम्हें ही आगे क
मैं कुछ नहीं जानता।

गोमती—अच्छा तुम चिन्ता न करो। यह वि
दादा से पूछकर किया है। घर पहुँचकर देखना व
लोग खुशी मनाते होंगे।

मनोहर—मैं तो कल घर से ही आ रहा हूँ।
सम्बन्ध में कुछ भी पता नहीं है। कल सन्ध्या स
क्रिकेट खेलकर घर आया तो कक्कू ने मुझसे
तुम्हारी फूफू यहाँ आना चाहती हैं—आज रात
से जाकर उन्हें लेकर कल वापस आ जाओ।

गोमती—क्या कक्कू ने कुछ झूठ कहा था।
रही हैं।

मनोहर—लेकिन, इस सम्बन्ध में तो उन्होंने
कहा।

गोमती—तुमसे क्या कहते। कोई कहने की
मनोहर—मैं विवाह न करता—तो ?

आता। लखनऊ पहुँचकर विवाह हो जाता! तुम, बच नहीं सकते थे।

मनोहर—बचने की बात कब कहता हूँ, फूफू!

१०

सरला को ससुराल आये लगभग चार मास बीत चुके थे। उसकी कर्म-निष्ठा पर घर के सभी छोटे बड़े मुग्ध थे। पं० श्यामनारायण द्विवेदी सरला सरीखी पुत्र वधू पाकर अपना भाग्य सराह रहे थे। इसका कारण था, उसकी सरलता। वह नित्य प्रातःकाल चार बजे उठकर, घर के काम काज में लग जाती, अपने हाथ से भोजन बनाती और सबको प्रसन्नता पूर्वक खिला-पिलाकर बाद में स्वयं भोजन करती थी। घर के नौकर चाकर सभी उसकी प्रशंसा करते थे। रात के १० बजे के उपरान्त पति के शयनागार में जाती थी।

एक दिन रात को मनोहर ने सरला से पूछा—क्यों सरला, यहाँ तुम्हें भूत तो नहीं देख पड़ते।

सरला ने आश्चर्य और भययुक्त होकर कहा—नाथ, मुझे भयभीत न करें।

मनोहर ने उसके गाल पर एक हलकी सी चपत जमाते हुए कहा—क्या तुमने चन्दनपुर में मुझसे यह नहीं कहा था कि लखनऊ में भूत रहते हैं? वही तो पूछता हूँ।

सरला पति से लिपटकर बोली—उस पुरानी बात को जाने दो, तब तो छोटी थी ।

सन्ध्या का समय था मनोहर ने कालेज से लौटकर अपना कोट उतारा और जेब से एक लिफाफा निकालकर सरला के सामने फेंककर कहा—मालूम पड़ता है, कि यह पत्र तुम्हारा है ?

सरला ने हाथ बढ़ाकर पत्र उठा लिया और बड़ी उत्सुकता से लिफाफा खोलकर उसे पढ़ने लगी । उस में लिखा था:—

चन्दनपुर
शनिवार १८-२-२९

प्यारी बेटी सरला ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे । यह पत्र मैं तुम्हें बड़े कष्ट और धीरज के साथ लिख रही हूँ इसका कारण तुम को इसके अन्त में विदित होगा उसे यहाँ लिखना मैं उचित नहीं समझती । क्योंकि मेरे हृदय में तुम्हारे लिये कुछ सन्देश शेष हैं—उनके पूरे होजाने पर ही तुमसे कहूँगी ।

यह तो तुम जानती ही हो; कि तुम्हारे चाचा तुम अपनी आँखों के सामने नहीं देख सकते थे। इसका कारण है दहेज में दो हज़ार रुपये देने की प्रथा, इसके अतिरि और कोई द्वेष-भाव नहीं है । उस दिन जबकि तुम चन्दनपु से लगभग दो कोस की दूरी पर होगी मुझे माल कि मुन्नू पढ़ने के लिये काशीजी नहीं गया

वह बहाना करके घर से चला गया था और बालामऊ के निकट किसी गांव में डाका डालने के अपराध में पकड़ा गया है। पीछे पता चला कि उसे ५ वर्ष की क़ैद होगई है और वह आज कल हरदोई की जेल में है। मुन्नू को डाकू बनाने वाले भी तुम्हारे चचा हैं जिसका कारण और कुछ नहीं २०००) का मोह था। इसी लोभ में पड़कर उन्होंने उसके अवगुणों पर ध्यान नहीं दिया। अस्तु।

जिस दिन मुन्नू गिरफ़्तार हुआ था तुम्हारे चाचा रोते और बिलबिलाते हुए घर आये। घर में तुमको न देखकर उन्होंने समझा कि तुम कोठरी में बैठी प्रसन्न होरही होगी। उन्होंने तुम्हें पुकारा लेकिन भीतर से उत्तर कौन देता? क्रोध के आवेश में वे कोठरी में घुस गये—उनके हाथ में एक मोटा सा डंडा था। जिससे बड़ी वीरता-पूर्वक वहां बैठी हुई किसी अभागी बिल्ली पर उन्होंने प्रहार किया। बिचारी बिल्ली के प्राण पखेरू उड़ गये। मेरा विश्वास है यदि तू उस समय उन्हें मिल जाती तो अवश्य ही वह डंडा तुम्हारे प्राण घातक सिद्ध होजाता। एक बिल्ली की हत्या कर डाली, इस आशंका से उनका सारा शरीर कांप गया और कोठरी से बाहर निकलकर उसका प्रायश्चित उन्होंने एक सीधा का दान देकर किया। दुःख का विषय तो यह है कि वे धन के मोह में पड़े हुए तुम्हारी ममता एक

"अच्छा तो तू भी निकल मेरे घर से।"

इतना कहकर उन्होंने मुझे बड़ी निर्दयता से पीटना आरम्भ करदिया और जब मैं घर से न निकली तो घसीटकर बलपूर्वक बाहर निकालकर किवाड़ बन्द कर लिये रातभर मैं बाहर पड़ी हुई रोती रही। सवेरा होते ही उन्होंने दरवाजा खोलकर क्रोध से चिल्लाते हुए कहा—"जाती है अभागिन! या, मंगली चमार को बुलवाकर तेरे दस-जूते और लगवा दूँ? निकल जा हरामजादी, मैं तेरा मुँह नहीं देख सकता।

इतना कहकर मुझे फिर पीटना शुरू कर दिया मेरा सिर फट गया और मुझे होश न रहा। जब चेत आया अपने को पं० प्रेमनारायण के घर में पाया बेटी, अब मैं केवल कुछ क्षणों की मेहमान हूँ—जब तब यह पत्र तुम्हें मिलेगा मैं इस संसार से और अभागे समाज से सदा के लिये विदा हो जाऊंगी। मेरी बच्ची! तुम इससे दुखित न होना। मैंने तुम्हारे योग्य ही मनोहर को समझ कर तुम्हारा हाथ पकड़ाया है। केवल ऊंचे कुल के लोभ में पड़कर मैं तेरा विवाह किसी धनहीन लूले, लंगड़े, काने बधिर और बूढ़े के साथ करके तुझे नरक में ढकेलना पसन्द नहीं करती थी। मेरी प्यारी बेटी! मुझे समाज से भय नहीं है मैं केवल परमात्मा से डरना जानती हूँ—तुम प्रसन्न रहो, सुखी रहो और खूब फलो फलो—यही मेरी आशी

है। परमात्मा तुम्हारा तथा मनोहर का कल्याण करेगा। बस, यही मेरी अन्तिम आशीष है।

तुमसे सदा के लिये विदा होनेवाली
"तेरी दुखिया माँ।"

पत्र समाप्त होते ही सरला उसी समय "माँ माँ" कह कर पृथ्वी पर गिर पड़ी। जब चेत हुआ उसने अपना सिर मनोहर की गोद में देखा वह सजल नेत्रों से उसकी ओर निहार रहा था।

स्वार्थी ससुर

१

प्रभा का विवाह हुए पाँच वर्ष बीत चुके थे किन्तु इस बीच उसके कोई सन्तान न हुई। उसके ससुर, लालू मिसुर (मिश्र) इस बातसे अधिक चिन्तित थे। वे बहुधा उसकी सास से पूछा करते बेनो की अम्मा, अब और कितने दिन राह देखनी पड़ेगी?

सास आँखों में आंसू भरकर कहतीं—क्या बताऊँ, देखो जालिया का विवाह परसाल ही तो हुआ है, परसों अपने भाई के जनेऊ से ससुराल से लौटी है-देखतो हूँ, उसके भी पेट में ८ महीने का लड़का है। हमारी तकदीर ही खोटी है नहीं तो अबतक कम से कम चार नाती तो जरूर खेलते होते।

लालू मिसिर—इसमें तक़दीर का क्या दोष? कुछ बहू में ही दोष होगा।

सास—भगवान जाने क्या कारण है। मुझे तो इस बात से गाँव में आते जाते भी शर्म लगती है।

लालू मिसिर—शर्म की बात ही है। इससे हमारी सबकी बड़ी भारी बदनामी है। पाँच वर्ष होगये, कभी झूठ-मूठ भी एक-आध लड़का नहीं हुआ। जिधर देखो लोग आपस में यही कहते हैं कि लालू मिसुर की छोटी पतोहू बाँझ है।

सास—इससे अधिक और क्या कहा जासकता है, एक यही बात बड़े शर्म की है। जगदीश का भी तो विवाह हुआ था। चार ही महीने बाद यह मन्नी पेट में आगया था।

लालू मिसिर—तो अब क्या करना चाहिये ?

सास—करना क्या—हरीहर पंडित से जाकर बेनी के ग्रह दशा ही पूछ लेते—कुछ खराब हो तो जप आदि करा दिया जाय।

लालू मिसुर—सो मैं पहिले ही पूछ चुका। वे कहते थे कि बेनी के पहिली स्त्री से सन्तान नही लिखी है—दूसरा विवाह कर देने से पुत्र लाभ हो सकता है।

सास—फिर दूसरा विवाह कर देने में क्या हर्ज है ? लोग तो चार-चार करते हैं—क्या किया जाय, लड़के के लिये सब कुछ करना पड़ता है।

लालू मिसुर—हमारी समझ में बेनी इस बात से सहमत न होगा।

सास—सो कैसे ?

लालू मिसुर—उसका साथी देवी मुझसे कहता था।

सास—देवी की बात का कौन ठीक। क्या तुमने भी कुछ उससे इस सम्बन्ध में पूछा है ?

लालू मिसुर—तुम्हारी सलाह बिना भला मैं कैसे पूछता।

सास—अच्छा अभी न पूछना। उसकी परीक्षा हो रही है—पास हो जाने पर ही विवाह करना अच्छा है कुछ रकम भी ज्यादा मिलेगी। इस बात को अभी छेड़ने से सम्भव है उसे चिन्ता उत्पन्न हो जायगी और वह परीक्षा में असफल रहे।

लालू मिसुर—हाँ अभी कुछ दिन और ठहर जाना अच्छा रहेगा।

सास—कह तो रही हूँ।

२

बेनी कन्नौज के 'डाइमन्ड जुबली हाई स्कूल' की दसवीं श्रेणी में पढ़ता था। जब शाम को घर लौटा और पुस्तकें रखने के लिये अपने कमरे में गया वहाँ प्रभा उदास मन से एक किताब के पन्ने उलट रही थी। पति को देखते ही उसकी उदासी कम होगई। उसने पुस्तक को बन्द करके एक ओर रख दिया और उठकर खड़ी होगई। बेनी पुस्तकें अलमारी में रख कर अपना कोट उतारते हुए बोला—आज कुछ उदास मालूम होती हो प्रभा !

प्रभा—ऐसा तो नहीं है, नाथ।

बेनी—नहीं कुछ उदास तो जरूर हो।

प्रभा ने पति का हाथ थामकर अपने वक्षस्थ
और कहा—"एक बात दासी की मानोगे नाथ

बेनी—क्या चाहती हो हृदयेश्वरी ?

प्रभा—पहिले आप वचन दे दीजिये कि मा

बेनी—यदि उचित होगा तो अवश्य पालन

प्रभा—आप को मेरी शपथ है अब मेरी ओ
छोड़ कर अपना दूसरा विवाह कर लीजिये।

बेनी—क्यों ?

प्रभा—यही कि मैं अपने पुत्र का मुँ
चाहती हूँ।

बेनी—सो कठिन है हृदयेश्वरी। दूसरा वि
जन्म में होगा।

प्रभा—नहीं, करना होगा, प्राण नाथ।

बेनी—हृदय, तुम चिन्ता क्यों कर रही हो।
सन्तान उत्पन्न नहीं करना चाहता। अपना अभी
में अभी कुछ दिन और शेष हैं।

प्रभ—किन्तु माता पिता की आज्ञा का उल्
आपका धर्म नहीं है।

बेनी—सो मैं समझता हूँ।

———

३

उस दिन नाग पंचमी (गुड़िया) का त्योहार था। सरायमीरा के प्रत्येक घर में झूला पड़ा था। कजली और बारहमासा की ध्वनि चारों ओर गूंज रही थी। कुमारी और नव-विवाहित लड़कियों की सजधज अपूर्व थी। सभी सड़क का कीचड़ मैंभाती हुई गुड़िया मिलने के लिये एक दूसरे के घरों में आ-जा रही थीं। लालू मिसुर की माँ अपनी बड़ी बहू (जगदीश की स्त्री) और नाती नातिनियों को लिये हुए झूले पर पैंगें मार-मारकर गा रही थीं—"हाय रहे पिया परदेसवा हो राम!"

तख्ते पर प्रभा न थी वह घर के एक कोने में बैठी हुई चूल्हा फूंक रही थी। बड़ी देर तक विरहा उड़ता रहा। जगदीश की स्त्री ने सास से पूछा—अभी दुलहिन नहीं आई, क्या करने लगी? बड़ी देर होगई।

सास—आती होगी, शाम के लिये भोजन बनाने को कहा था—कदाचित् उसे बनाकर आवेगी।

बहू—वाह अम्मा, मुझे नहीं बताया। वह वहाँ चूल्हा फूंक रही है और मैं यहाँ झूला झूल रही हूँ।

इतना कहकर वह तख्ते से उतर पड़ी—सास ने हाथ पकड़ कर कहा "अरे बैठ बहू—झूला झूलो आज त्योहार के दिन दस

इतने में गाँव की कुछ नव-विवाहित लड़कियाँ आगईं और झूले की रस्सी थाम कर बोलीं "वाह भाभी हम लोगों को देखते ही झूलना बन्द कर दिया।

जगदीश की दुलहिन ने सबको गले लगाकर कहा नहीं-नहीं, आओ—फिर झूलें।

सबकी सब तख्ते पर बैठ गईं। बेनी की माँ झूले से उतरकर बोली—अब तुम लोग झूलो मुझे चक्कर आ रहा है।

एक लड़की ने वृद्धा का हाथ पकड़कर कहा—दादी, जाने न पाओगी।

वृद्धा ने कहा—मुन्नी बिटिया, मैं जा नहीं रही हूँ—तब तक तुम झूलो मैं अभी लौटी आती हूँ।

इतना कहकर वह बाहर वापिस चली गई।

कुछ देर बाद झूला बन्द होगया। जगदीश की दुलहिन ने सबका यथा-विधि सत्कार किया। तबतक वृद्धा भी आगई। मुन्नी ने पूछा—दादी, आज छोटी भाभी नहीं देख पड़ीं, कहाँ हैं?

वृद्धा—बिटिया आज उसे छूना नहीं है—कहीं बैठी होगी।

मुन्नी—कुछ लड़का बाला तो नहीं हुआ?

वृद्धा—अब लड़का क्या बुढ़ापे में होगा। उमर तो सब निकल गई।

मुन्नी—कैसी बात कहती हो, दादी। भैया का विवाह हुए अभी दिन ही कितने हुए।

वृद्ध—और जगदाश का विवाह हुए कौन जमाना होगया।

मुन्नी—भैया अभी पढ़ ही रहे हैं—जल्दी क्या है, अब कहीं नौकर चाकर होजायंगे लड़का भी होजाएगा।

वृद्धा—क्या दुनिया में नौकरी मिलने पर ही लड़के होते हैं। मैं तो साफ २ कह रही हूँ इस साल और देख रही हूं परसाल बेनी का दूसरा विवाह जरूर कर दूंगी।

इतने में प्रभा वहां धानी रङ्ग की धोती पहने हुए आ पहुँची और उन लड़कियों के निकट जाकर बोली—जागेश्वरी, आज तुम कहां भूल पड़ीं, तुमतो गूलर का फूल हो रही हो।

सब लड़कियां आश्चर्य से उठ खड़ी हुईं और प्रभा की ओर देखकर बोलीं—भाभी, यह तुमने क्या किया, हमें छू लिया।

प्रभा ने आश्चर्य से कहा—क्या बाँझ होने के कारण तुम्हारे पास आना भी पाप है।

मुन्नी—दादी ने कहा था कि आज तुम अलग हो इसी से हमने यह कहा है—और तो कुछ जानती नहीं।

इतने में वृद्धा बोल उठी—मैं क्या जानूं इस 'तिरिया चरित्तर' को—इसी ने आज सवेरे मुझ से ऐसा कहा था।

प्रभा—अरे अम्मा क्यों झूठ बोल रही हो—मैंने भला कब कहा है।

वृद्धा—क्यों झूट बोल रही है—मैं नहीं जानती थी, कि तू घर के कामों से जी चुराने के लिये ऐसा ढोंग कर रही है।

प्रभा—अम्मा, क्यों मुझे बदनाम कर रही हो। अभी तुम्हारे सामने तो भोजन बना ही रही थी।

वृद्धा ने कड़ककर कहा - मैं ४५ वर्ष की बुढ़िया झूठी हूं - और तू १२ वर्ष की छोकरी सच्ची बन रही है! शरम नहीं आती! अपने पापों का फल भोगते हुए भी तेरी हेकड़ी नहीं छूटी।

इतना कहकर वह कमरे से बाहर निकल आई।

४

बेनी हाथ में "पायोनियर" का एक अङ्क लिये हुए पिता के चरणों पर गिर पड़ा और अपना रोल नम्बर दिखा कर बोला—फर्स्ट डिवीजन में पास होगया बाबू।

लालू मिसुर ने हर्ष से बेनी को पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—धन्य हो बेटा, खूब परिश्रम किया।

हरिहर पंडित पास ही चारपाई पर तमाखू रगड़ रहे थे, आंखों का कीचड़ अपनी भुजा में पोंछते हुए बोले—"क्या हुआ, क्या हुआ ललुआ?

हरिहर पण्डित आयु में लालू मिसुर से कुछ बड़े थे, इसीलिए वे उनको ललुआ कहा करते थे।

लालू मिसिर ने कहा—बेनी, फर्स्ट-डिवीजन में पास हुआ।

हरिहर पंडित—हां। लेकिन डिवीजन मैं नहीं समझा। क्या किसी परीक्षा का नाम है।

लालू मिसुर—नहीं दादा, पहली श्रेणी में,

हरिहर पंडित—तो अब दूसरी श्रेणी में जायगा, पढ़ते हुए तो उसे कई साल होगये, अभी केवल पहली-श्रेणी पास कर सका। मेरा भतीजा, गंगाचरन तो मिडिल पास होगया।

लालू मिसिर—अरे नहीं तुम समझे नहीं, दादा! यह सर्वोत्तम पास हुआ है।

हरिहर पण्डित—हां। तो यह क्यों नहीं कहते। तब तो वह बड़ा मिहनती लड़का है।

लालू ने बेनी की ओर देख कर कहा—अब क्या विचार है आगे पढ़ोगे या कुछ काम धन्धा करना चाहतेहो।

बेनी—अभी ता मेरा विचार आगे ही पढ़ने का है। सोच रहा हूं कानपुर जाऊं या लखनऊ।

लालू मिसुर—मेरे विचार में कानपुर अच्छा रहेगा वहीं जा कर पढ़ो। पड़ोस भी है।

बेनी—हाँ वही मैं भी चाहता था। कानपुर ही अच्छा रहेगा।

इतना कह कर वह चला गया।

एकान्त देखकर हरिहर पण्डित ने लालू मिसुर के

कान में धीरे से कहा—अभी तक इसके लड़का तो कोई हुआ नहीं ?

लालू मिसुर—कहां हुआ दादा। मालूम पड़ता है कि अब दूसरा विवाह करना पड़ेगा।

हरिहर पण्डित—सो मैं पहिले ही कह चुका हूं इस विवाह से इसके सन्तान नहीं लिखी है।

लालू मिसिर—हां दादा, उसी प्रबन्ध में हूं—कोई अच्छा देखकर कर लूंगा।

हरिहर पण्डित—यह ऊगू के अग्निहोत्रिन वाला विवाह कैसा रहेगा। रुपया भी दे रहा है और लड़की भी अच्छी है।

लालू मिसिर—सो ठीक है, लेकिन वे तो धाकर हैं।

हरिहर पण्डित—कैसी बात करते हो ललुआ। आठ हजार इसी लिये तो दे रहे हैं। धाकर के घरसे कन्या लेने में कुछ भी दोष नहीं है। मनुस्मृति में तो कुछ दान लेकर शूद्र की कन्या से विवाह करना उचित माना गया है। आठ हजार की थैली यों ही हाथों से निकल जाना तो मेरी समझ में अच्छा नहीं है।

लालू मिसिर ने आश्चर्य से पूछा—क्या मनुस्मृति में ब्राह्मण को शूद्रकी कन्या से विवाह करना लिखा है।

हरिहर पण्डित—तो क्या मैं तुमसे झूठ कहता हूं। सवेरे पोथी लाकर दिखा दूंगा।

लालू मिसिर—अच्छा दादा तो यही ठीक है उनकी चिट्ठी भी आई थी कि जब लड़का इन्ट्रेन्स पास होजाय और जैसी आपको इच्छा हो, सूचित करो। अब यदि आप को आज्ञा हो तो उन्हे मंजूरी की चिट्ठी लिख दूं।

हरिहर पण्डित—मैं तो खुशी से कह रहा हूं आगे की परोसी थाली न छोड़ो।

लालू मिसुर—लेकिन इसकी खबर किसी को न हो।

हरिहर पण्डित—सो चिन्ता न करो, ललुआ। लेकिन मेरा भी ध्यान रखना पड़ेगा।

लालू मिसिर—दादा खुश कर दूंगा—तुम्हें खुश। तुम भी क्या कहोगे कि किसी को बारात में गया था। लेकिन भय इस बात का है कि कहीं विवाह होजाने पर इसका भेद न खुल जाय।

हरिहर पण्डित—गांव वालों से कह देना होगा कि खगू के सुकलों के यहां विवाह हुआ है।

लालू मिसिर—लेकिन जो बारात में साथ जावेंगे, उन्हें तो मालूम होगा ही।

हरिहर पण्डित--बारात ले जाने की जरूरत ही क्या है? दूसरा विवाह है। घराने के दो चार छोटे २ लड़कों को ले लेना। नाई—बारी की कुछ जरूरत नहीं उसका इन्तजाम वहीं होजायगा।

लालू मिसिर प्रसन्न होकर हरिहर पण्डित के पैरों पर गिर कर बोले—दादा मेरी नाक तुम्हारे हाथ में है। हरिहर

पण्डित ने आशीर्वाद देते हुए कहा–ललुआ, प्रतिज्ञा करता हूँ कि हरिहर के कंठ से इस विषय के सम्बन्ध में शब्द भी नहीं सुन सकते।

५

विठूर में कार्तिकी का मेला था। चारों ओर से बाल वृद्ध युवा नर नारियों का समूह गंगा माता में अपने पापों को धो बहाने की लालसा से उमड़ रहा था। जिस समय का हाल हम लिख रहे हैं, उस समय कांग्रेस के स्वयं सेवकों का जन्म नहीं हुआ था। पुलिस के सिपाही ही चारों ओर देख पड़ते थे। लाल पगड़ी को देखकर गाँववालों में इतनी हिम्मत न होती थी कि अपनी कष्ट कथा उनको सुना सकें इसके अतिरिक्त दूसरा कारण यह था कि एक मामूली चौकीदार भी अपने को लाट साहिब से कम न समझता था। उसके पास इतना समय न था कि बिन पैसा कौड़ी लिये किसी का दुख सुनता। जहां कहीं भीड़ में कुछ गोल माल होता दिखाई देता, पुलिस के हन्टर सड़ासड़ उस जन समूह पर पड़ने लगते थे। यह विठूर का प्रसाद था जो बिना पैसा कौड़ी खर्च किये भोले भाले ग्रामीणों में बट रहा था।

एक १६ वर्ष की युवती डेढ़ हाथ लम्बा घूंघट काढ़े उसी भीड़ को पार कर रही थी, आगे से एक रेला आया और वह बेचारी एक ओर लगभग १० गज की दूरी पर जा

पहुँचा । मुँह पर घूँघट था—घूंघट के बाहर मुंह निकालना बड़ा भारी पाप था। युवती घबड़ा गई, हिम्मत करके आगे की ओर बढ़ी किन्तु धक्के-मुक्के की चोट से फिर उसी स्थान पर वापस आगई। उसके घरवाले कितनी दूर होंगे—इसे लेखक स्वयं नहीं जानता। क्योंकि उस भीड़ में घुसना तलवार की धार पर दौड़ना था। युवती ने एक ओर भीड़ कुछ कम देखी और उसी ओर चल पड़ी। थोड़ी दूर पर एक तख्त पर दो-तीन गंगापुत्र भांग घोट रहे थे। एक ने निगाह उठाकर कहा—कल्लू, गङ्गा मैय्या प्रसन्न हैं—कल्लू ने देखा सामने एक युवती घूंघट से अपना मुंह छिपाये खड़ी थी।

भाँग घोटनेवाले ने कहा—मालूम पड़ता है कि, इसके साथ वाले कहीं छुट गये हैं—बेटी आ, यहाँ बैठ जा अभी तेरे घरवालों का पता लगाता हूँ।

कल्लू कहने लगा—<u>माँ</u> तेरा नाम क्या है—कहाँ से किस के घर से आई हो ?

इसका उत्तर उस पर्दे वाली के मुँह से न निकल सका वह तख्त के पास एक किनारे बैठ गई और दुपट्टे से आँसू पोछने लगी।

कल्लू ने कहा– माँ रो क्यों रही हो। अपने गाँव का नाम बतादो मैं तुम्हें सुरक्षित पहुँचा दूँगा। घबड़ाने की कोई बात नहीं। हम गंगापुत्र हैं, हमारा काम ही यही है।

युवती के हृदय में कुछ २ धीरज बँधा। उसने बोलने का भरकस प्रयत्न किया, किन्तु सब व्यर्थ। मुँह से एक शब्द भी न निकल सका।

एक तीसरे गंगापुत्र ने कहा—बेटी, घबड़ा मत मैं तुम्हे तेरे घर आज ही पहुँचा दूँगा। मुझे केवल गांव का नाम बतादे।

किसी प्रकार युवती ने मुँह से निकाला सीरासराय।

"अरे सीरा सराय ? तुम मिसुरों के घर की हो ?" भाँग घोटने वाले ने पूछा।

उत्तर में युवती ने केवल घूँघट हिला दिया।

इतने में एक बुढ़िया वहाँ आ पहुँची—कल्लू ने कहा माँ इस बेटी को अपने साथ घर ले चलो। यह सीरासराय में रहती है, रास्ता भूलकर यहाँ आगई है, मैं भंग घोटकर अभी आता हूँ—इसी गाड़ी से पहुँचाने जाना पड़ेगा।

बुढ़िया ने कहा—मिसुरों के घर की होगी। घर वाले भी कैसे लापरवाह हैं—छोड़कर चल दिये।

भाँग घोटने वाले ने कहा—क्या किया जाय। मेले ठेले में ऐसा हो ही जाता है।

बुढ़िया ने युवती का हाथ पकड़ लिया और कहा चल बेटी तू चिन्ता न कर मैं तुझे घर भिजवा दूँगी।

इतना कहकर वह आगे २ चल पड़ी युवती भी उसके पीछे पीछे आ रही थी।

दो-तीन गलियों को पार करने के बाद बुढ़िया एक दुमंजिले मकान के सामने खड़ी होगई। घर का दरवाजा बन्द था। उसने जञ्जीर खटखटाई। दो मिनट के बाद किवाड़ खुल गये। पहिले युवती घुसी और पीछे से बुढ़िया। घर के किवाड़ फिर बन्द हो गये। बुढ़िया ने युवती की ओर देखा—उसका मुख अभी तक घूँघट से बन्द था उसने विस्मित होकर कहा—अरे यहाँ कौन बैठा है बेटी, जिसके लिये तू इतना लम्बा घूँघट निकाल रही है और अपने हाथ से उसका घूँघट हटा दिया—चाँद सा मुख बाहर निकल आया।

युवती ने देखा कि बुढ़िया यद्यपि आयु में ५० वर्ष से अधिक थी किन्तु उसका दिल किसी क़दर किसी युवती से कम न था। आँखों में बारीक सुरमें की बाढ़ थी, मुख में पान की लाली। एक बढ़िया रेशमी किनारे की धोती पहन रक्खी थी हाथों में सोने की चूड़ियाँ, कानों में इयरिंग और नाक में थी गुलाबी हीरे की जड़ाऊ कील।

बुढ़िया ने कहा—चल बेटी कुछ खा-पी ले, अभी तुमे शाम की गाड़ी से जाना है।

युवती ने हाथ जोड़कर कहा—मां, मुझे भूख नहीं है कृपा करके मुझे घर भिजवा दीजिये—यही मेरे लिये सब कुछ है।

बुढ़िया युवती के हृदय की वेदना समझ गई। उसे धीरज

देते हुए बोली—बेटी यह भी तो तेरा ही घर है। बड़े भाग्य से तुम्हारे जैसे बड़े आदमी मुझ गरीब के यहाँ आते हैं। तुम्हारे ही सबके सहारे तो मेरा पेट पलता है, मैं बिना कुछ खिलाये-पिलाये कब जाने दूँगी।

इतना कहकर उसने पुकारा—रामू, बिटिया के लिये खाने को देजा।

रामू एक थाली में नाना प्रकार की मिठाई सजाकर आ पहुँचा जिसमें से कुछ अंश युवती ने बड़ी मुश्किल से खाकर एक गिलास पानी पिया। बुढ़िया ने जेब से एक डिब्बी निकाल कर उसमें से दो बीड़े पान उठाकर युवती के मुंह में अपने हाथसे ठूंस दिये।

इसके कुछ क्षणों में उसे मूर्छा आगई।

रामू ने उसको उठाकर एक पलंग पर लिटा दिया और कमरे में ताला लगाकर उसकी चाबी बुढ़िया के हवाले की।

६

शाम को लालू मिसुर बेनी की अम्मा के साथ बिठूर से घर लौटे। स्टेशन से प्लेटफार्म पर पैर रखते ही दोनों चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगे। "हाय मेरी बहू तू धोखा दे गई।" इसी प्रकार रोते चिल्लाते घर आये सारे गांव में खबर फैल गई कि—'बेनी की दुलहिन को मगर उठा ले गया।'

गांव वालों की भीड़ मिसुर जी के दरवाजे पर जमा

हो गई। सभी उदासी का भाव दिखाते हुए पूछने लगे—आखिर यह हुआ कैसे ?

लालू मिसिर आँसुओं की वर्षा करते हुए बोले क्या बताऊँ भाई मेरा तो कलेजा फटा जा रहा है।

मैं और बेनी की माँ एक ओर नहा रहा था—बहू लज्जा वश हमसे कुछ दूर पर हटकर नहाने लगी। अभाग्य से पास ही कहीं मगर पड़ा था वह उसका पैर पकड़कर खींच ले गया।

लोगों ने आश्चर्य से पूछा—क्या वहाँ मेला न था ?

लालू मिसिर—भाई भीड़ के कष्ट का अनुभव करके हम लोग कुछ दूर आगे निकलकर नहाने गये थे मैं नहीं जानता था कि वहाँ उसकी यह हालत हो जायगी दुख तो यह है कि तैरना जानते हुए भी मेरे पैर बुढ़ापे में धोखा दे गये और वह बेचारी मुख से केवल "हाय" कह कर संसार से विदा होगई।

बेनी की माँ छाती पीट पीटकर गाँव की स्त्रियों से कह रही थी—ऐसी सुशील बहू मिलना कठिन है। आज तक उसने कभी आँख तक नहीं उठाई थी। हाय मैं न जानती थी कि वहाँ उसका काल आरहा है नहीं तो गंगा नहाने न लिवा जाती।

बेनी के पास कानपुर तार भेजा गया कि बहू का देहान्त हो गया—जल्दी घर आओ"।

तार पढ़कर वह मूर्छित हो गया उसे इसकी चिन्ता स्वप्न में भी न थी। प्रभा बीमार भी नहीं हुई और संसार से चल बसी—इस शोक ने उसे पागल बना दिया। किसी प्रकार धीरज धरकर घर आया—देखा कि माता, पिता, भाई भौजाई सभी प्रभा के वियोग में पागल हो रहे हैं—तीन दिन से किसी के मुख में पानी तक न गया था. सभी ढाढ़े मार २ कर रो रहे थे। माता पिता की इस दयनीय दशा को देखकर बेनी का स्नेह उनके प्रति उमड़ आया। वह अपना दुख भूलकर घर वालों के समझाने का प्रयत्न करने लगा। उसे इस बात का स्वप्न में भी पता न था कि यह सारी लीला उसी के रिझाने के लिये रची गई है। गाँव वाले भी इस रहस्य को न समझ सके वे बार २ ईश्वर से प्रार्थना करने लगे कि ऐसा स्नेह करने वाले सास ससुर सब को प्राप्त हों।

पूरे चार दिन लालू मिसिर के घर में चूल्हा नहीं जला। बेनी ने बड़ी मुश्किल से घर वालों को समझा बुझाकर शान्त किया तब कहीं पाँचवें दिन रात के १० बजे अधजली रोटी और अधपकी दाल प्राप्त हुई।

एक सप्ताह के बाद जब बेनी वापस चला गया तब कहीं लालू मिसुर के चित्त से प्रभा की ओर से चिन्ता दूर हो सकी।

कानपुर लौटने पर बेनी का चित्त पढ़ने में न लगता था

वह सदा प्रभा की चिन्ता में डूबा रहता। कभी उसकी तस्वीर निकालकर देखता—कभी उसकी बातों को याद करता, और कभी उसकी प्रभा में प्रवाहित होजाता। कभी सोचता शायद वह जीवित बच गई हो। उसकी प्रार्थना से भगवान विष्णु दौड़ पड़े होंगे और वह 'मगर' उसे छोड़कर चला गया होगा। फिर सोचता अरे यह गप्प है—भगवान की इच्छा से ही तो ऐसा हुआ है।

सम्भव है कि यदि वह गंगा नहाने न जाती तो बच जाती यदि वह माता जी के पास ही रहकर नहाती तो क्यों ऐसी गति होती। लेकिन होता कैसे नहीं, उसका काल जो आ गया था। मैं पूछता हूँ कि गंगा नहाने की जरूरत ही क्या थी घर में रहती—भौजाई भी तो थी वह क्यों नहीं गई। बड़ी भगतिन बनी थी—जिस समय मगर के मुख में दबी होगी मजा मिला होगा। इसी प्रकार की बातों में वह दिनभर मग्न रहता था पढ़ने लिखने का तो नाम था किन्तु उसका चित्त था प्रभा की ओर।

दशहरे की छुट्टी थी—बेनी घर गया। माता पिता का स्नेह उसकी ओर अब इतना अधिक था जिसका अनुभव उसे कभी स्वप्न में भी न हुआ होगा। वह अपने मन में समझता था कि माता पिता उसे उदासीन देखकर उसकी चिन्ता को मिटाने के लिये इस स्नेह का प्रयोग कर रहे हैं—

माता ने स्नेह से बेनी को पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—बेटा बुढ़ापे में मेरी एक अभिलाषा शेष है पूरी करोगे ?

बेनी—अम्मा क्या चाहती हो ?

माता की आँखों में आँसू आगये वह रोते हुए बोली—मेरी थोड़ी सी जिन्दगी और रह गई है यदि बहू का मुख देखकर मरती तो अच्छा था फिर आगे तुम्हारी इच्छा।

बेनी का हृदय माता की इस कातरता पर पिघल गया वह बिना कुछ सोचे विचारे ही चरणों पर गिरकर बोला जैसी तुम्हारी इच्छा हो। मैं किसी बात से अलग नहीं हूँ।

माता ने स्नेह से पुत्र को गले लगाकर कहा बेटा—तुम खूब फलो फूलो यही मेरा आशीष है।

७

अब प्रभा की मूर्छा भंग हुई उसने अपने आपको एक कमरे के अन्दर बन्द पाया। कमरा कुछ अधिक बड़ा न था। एक ओर पलँग बिछा था जिस पर कि वह पड़ी थी। उसके पास ही चार बढ़िया कुर्सियाँ रक्खी थीं। फर्श पर दरी बिछ रही थी। एक खूंटी पर किस मार्क लालटेन टँगी हुई जल रही थी। दीवारों पर कुछ अश्लील रीति के नग्न-चित्र लटक रहे थे। जिन्हें देखने ही साधारण बुद्धिवाला मनुष्य भी वहाँ की स्थिति को अच्छी तरह समझ सकता था। वह घबड़ाकर उठ बैठी दरवाजे पर आकर देखा तो उसे बाहर से बन्द पाया। इधर-उधर चारों ओर देखने

लगी, किन्तु कहीं एक छेद भी न दिखाई पड़ा। दीवार पर टंगे चित्रों पर दृष्टि पड़ते ही वह चकित रह गई—उस स्थान के भाव को स्मरण करके वह घबरा उठी और पुनः मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी।

ठीक साढ़े दस बजे कमरे का दरवाजा खुला और उसके अन्दर वही घाटवाले तीनों गंगापुत्र प्रविष्ट हुए। दरवाजा खुलने की आहट से प्रभा की मूर्छा भंग हो गई वह घबरा कर उठ बैठी और अपना मुंह घूंघट में छिपाते हुए एक कोने में जाकर सट गई। गंगापुत्र वेशधारी यवन कुर्सियों पर बैठ गये—वे नशे में चूर थे। आँखें लाल हो रही थीं—मुँह के अन्दर से बदबू आ रही थी जो सारे कमरे में फैल गई।

एक ने कहा—रहीम, भाभी को इधर बुला लाओ वहाँ कोने में बैठने की क्या जरूरत है ?

रहीम ने उठकर प्रभा का हाथ पकड़ लिया—वह भयभीत होकर रो उठी और अपने हाथ को छुड़ाने का प्रयत्न करने लगी। इस पर दूसरा भी उठा और उसका घूंघट हटाने का प्रयत्न करता हुआ बोला—जानी तुम इतनी खफा क्यों हो रही हो ? घबराओ नहीं, जैसा तुम हमें खौफनाक समझ रही हो हम लोग वैसे नहीं हैं।

रहीम बोला—क़ासिम खां, तुम अभी घूंघट न हटाओ, उसे हमारी भाभी अपने-आप हटा लेंगी—अभी इन्हें पलँग पर ले चलो।

दोनों राक्षसों ने उस अबला को बलपूर्वक उठाकर पलंग पर डाल दिया। एक ने हाथ पकड़ लिये और दूसरे ने उसका घूंघट खोल दिया।

कुर्सी पर बैठा हुआ व्यक्ति चिल्ला पड़ा, वाह! कैसा चाँद सा खिला हुआ मुखड़ा है।

रहीम ने कहा—तभी तो भाभी इतने नखरे कर रही थीं। प्रभा के नेत्र बन्द थे कदाचित वे किसी इष्टदेवता की आराधना कर रहे होंगे, लेकिन उस समय उसको इस बन्धन से छुड़ानेवाला कोई न था। वे नर-पिशाच कभी उसका मुख खोल देते, कभी उसका वक्षस्थल, कभी उसका उदर, और कभी उसकी जंघायें, आदि जिन्हें यह अबला अपने कठिन परिश्रम से बार-बार ढक लेती थी। लगभग आध घण्टे तक यह छीना-झपटी होती रही अन्त में उस पिशाच दल की विजय हुई और प्रभा के अंग का प्रत्येक चीर बल-पूर्वक अपहरण कर लिया गया। वह अब नग्नावस्था में अचेत पड़ी थी और वे पिशाच-गण बारी-बारी से उसका सतीत्व नष्ट कर रहे थे।

प्रातः चार बजे प्रभा को सचेत हुआ—कमरा ज्यों का त्यों बन्द था—किसी प्रकार वह अपने शरीर को कपड़ों से ढककर उठ खड़ी हुई और पृथ्वी पर बैठकर फूट-फूटकर रोने लगी।

सभ्य स्त्री के लिये सतीत्व से बढ़कर और कौन सा

अमूल्य पदार्थ हो सकता है ? जिन कपोलों को उसके पति के अतिरिक्त और कोई देख तक न सकता था वही कपोल आज विधर्मियों के दाँतों से छिन्न-भिन्न हो रहे थे। उसका सर्वस्व लुट चुका था—इससे अधिक और क्या होता ? उसके पास और था ही क्या जो बच जाता। उसके चित्त में घृणा उत्पन्न हुई अपने सास ससुर की ओर से, लज्जा उत्पन्न हुई पति की ओर से, भय हुआ समाज से और वीभत्सता हुई इस दृश्य से। धर्म तो चला ही गया था। उसके चारों ओर अन्धकार था कहीं से भी प्रकाश की रेखा न आ रही थी। उसे अब संसार में कौन पूछता ? जीवन से घृणा हुई किन्तु आत्म-हत्या करने का साधन उस कमरे में न था।

दिन के आठ बजे वही कल वाली बुढ़िया कमरे में आकर कहने लगी—बेटी, सोच क्यों कर रही हो। यहाँ तुम्हीं अकेली नहीं हो—चलो दो-तीन और दिखा दूँ तब तुम्हें धीरज बँधे। हमारा तो काम ही यही है इसी के बल पर रोटी चल रही है। इसी पर सारे ठाठ-बाट हैं—बड़े-बड़े आला हाकिम आते हैं, हमारी खुशामद करते हैं, हमारे इशारों पर नाचते हैं। इतना कहकर उसने प्रभा का हाथ पकड़ लिया और कहने लगी—चल बेटी, नहा-धोकर खाना खा। इस शोक से कुछ लाभ नहीं है। जो कुछ होना था सो हो गया अब तुम अपने घर जाकर क्या मुँह दिखा-

ओगी। यहाँ तुम्हें कौन रख सकता है ? अब मजे
सुख से यहाँ रहो अच्छा-अच्छा खाओ और बढ़िया-बढ़ि
पहिनो। चार दिन की जिन्दगी है, यह सोने सरीखा बद
वृथा क्यों मिट्टी में मिलाती हो। जिस सतीत्व के लि
तुम्हें गर्व था वह तो चला ही गया। अब तुम्हारे समाज
वाले तुम्हें नहीं पूछ सकते।

बुढ़िया के इन वाक्यों में जादू भरा था। उसने प्रत्येक
शब्द को खूब तोल नापकर मुँह से निकाला था। प्रभा ने
उनकी परीक्षा की और उनमें उसे सत्यता प्राप्त हुई। उसे समाज
से घृणा और भय उत्पन्न हुआ भला अब उसे घर में कौन
टिकने देता। लाचार होकर रो उठी और बुढ़िया के पैरों
पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगी—माता हमारी रक्षा करो—
मैं तुम्हारी शरण चाहती हूँ।

बुढ़िया का कलेजा ढाई गज फैल गया—उसने कहा
चल बेटी नहा धोकर खा पी ले फिर तुझे कुछ नई तस्वीरें
दिखाऊँगी।

८

बेनी का दूसरा विवाह हो चुका था उसकी पत्नी करुणा किसी ढंग की न थी जिससे वह सदा खिन्न रहता था वह प्रभा के चिन्ता में डूबा रहता किन्तु वह वस्तु अब उसे अलभ्य थी उसका भ्रमर अब कोई दूसरा ही था।

वह F. A न पास कर सका उसने परिश्रम किया जरूर किन्तु सब व्यर्थ हुआ। परमात्मा की कृपा से उसे एक पुत्र भी मिला किन्तु इससे बेनी के माता पिता को कोई प्रसन्नता न हुई वे अब अपना मतलब निकाल चुके थे आठ हजार की थैलियाँ उनकी तिजोरी में बन्द हो चुकी थीं।

बेनी ने उदास मन से कहा। अब मैं आगे नहीं पढ़ सकता बाबू।

लालू मिसिर—तो क्या विचार किया है ?

बेनी—विचार क्या ? कुछ करना हो पड़ेगा।

लालू मिसिर—तो करो न—बैठे २ क्या सोच रहे हो।

बेनी—हाँ सो करना हो पड़ेगा। लेकिन नौकरी करने को इच्छा नहीं है।

लालू मिसिर-तो क्या डिप्टी कलक्टर बनना चाहते हो।

बेनी—अरे डिप्टी कलक्टरी मेरे भाग्य में कहाँ है बाबू। अगर कुछ रोजगार करूं तो क्या हर्ज है।

लालू मिसिर—करो न—हर्ज क्या है ? क्या कहीं से रुपया इकट्ठा कर लिया है ? शायद ससुर ने दिया होगा।

बेनी—रुपया कहाँ से आया बाबू। कौन भला ...
सकता है।

लालू मिसिर—सास ससुर से माँगो. हैं तो धनी। ससु...
न सही—सास तो दे सकती हैं

बेनी—बाबू कोई न देगा। हाँ अगर आप चार हजा...
मुझे दे दें तो काम चल सकता है।

लालू मिसिर—मेरे पास कहाँ धरे हैं ?

बेनी—तो क्या आपने अम्मा को दे दिये अच्छा उन...
से माँग लूँगा।

लालू मिसिर—क्या पागल सरीखी बात कर रहे हो...
अरे रुपया आया कहाँ से। जो कुछ तुम्हारे विवाह में मि...
था सब उसी में खर्च होगया। काम काज में मिला हु...
रुपया रहता कहाँ है ? कुएँ की मिट्टी उसी के सुधारने...
लग जाती है।

बेनी आश्चर्य—चकित होकर देखने लगा। पिता के...
नीरस हृदय को थाह उसे अपनी आयु के २५ वर्षों में के...
आज ही लग सकी। उत्तर क्या देता। चुप चाप गर...
झुकाकर बोला अच्छा तो नौकरी का ही प्रबन्ध करूँगा...
उत्तर की प्रतीक्षा न करके चला गया।

उस समय नौकरी इतनी अलभ्य वस्तु न थी। "प...
नियर" के "WANTED" वाले पन्ने खचाखच इस वि...
से भरे रहते थे। २५ अगस्त सन् १९१० का अंक बेनी...

हाथ में था उसने सबसे प्रथम उसी पन्ने पर दृष्टि डाली। एक जगह लिखा था :—

WANTED---A private tutor thoroughly Knowing English and Sanskrit. Salary Rs. 40. P. M. apply to the Post master Sangla Hill Punjab.
N. W.

अर्थात् एक घरेलू अध्यापक की आवश्यकता है जिसे अँग्रेजी और संस्कृत का भली भांति ज्ञान हो। वेतन ४०) मासिक। पोस्टमास्टर सांगलाहिल पंजाब के पते से पत्रव्यवहार करना चाहिये।

उसे उस समय यही नौकरी सबसे अच्छी पसन्द आई। पत्रव्यवहार करने के एक सप्ताह बाद उत्तर मिला कि आप ७ सितम्बर तक अपने स्थान पर पहुँच जायँ।

बिस्तर और एक छोटा-सा ट्रंक लिये हुए दो दिन में रेल से यात्रा करके बेनी सांगलाहिल के प्लेटफार्म पर उतरा। पोस्टमास्टर ने उसे खातिर से किराये के एक मकान में लेजाकर रक्खा। वह प्रातः ७ से १० तक और सायंकाल ३ से ६ तक उनके मकान पर उनके लड़के कर्तारसिंह को पढ़ाने जाया करता था। पोस्टमास्टर की स्त्री मर चुकी थी घर में केवल एक मात्र यही पुत्र शेष था।

पंजाब में स्त्रियों की कमी होने से मर्दों के मुख में उनका नाम सुनते ही पानी आजाता है। पचास प्रतिशत् मनुष्य स्त्री-सुख से वञ्चित रह कर अपनी जीवन यात्रा समाप्त कर

देते हैं। स्त्रियों का मूल्य यहाँ वाले अपने जीवन से भी अधिक समझते हैं। जिसके स्त्री है वही सुखी है धनी है और उन्नति-शील है। कनौजिया घराने की भाँति वहाँ वाले नारियों को पैर की जूतियाँ नहीं समझते—इसके विपरीत उनकी देवी की भाँति पूजा करते हैं। यही कारण है कि पंजाब के प्रत्येक घर में आनन्द है, प्रेम है, और लक्ष्मी है वहाँ कलह नहीं है, फूट नहीं है, और विषमता नहीं है।

पोस्टमास्टर यद्यपि धनी थे किन्तु सुखी न थे। उन्हें सबसे बड़ा दुःख था स्त्री का वियोग। अपनी अर्द्धांङ्गिनी की याद करके वे कभी २ रो पड़ते किन्तु इसकी औषधि ही क्या थी? उन्होंने कई बार दूसरा विवाह करने का प्रयत्न किया किन्तु सर्वथा असफल रहे। पंजाब जैसे रूखे देश में दूसरा विवाह करना खेल न था। हजारों की सम्पत्ति लड़की वाले को देनी पड़ती है अनेकों दौड़धूप सहनी पड़ती हैं तब कहीं बड़े भाग से पति, पत्नी का सुख देख सकता है।

जाड़े के दिन थे बेनी पोस्टमास्टर के घर में कुर्सी पर बैठा हुआ संस्कृत की पाठ्य पुस्तक पढ़ा रहा था। विद्यार्थी बिल्कुल ठीक सामने दूसरी कुर्सी पर था बीच में एक मेज थी जिस पर पुस्तकें—कागज क़लम दवात और पैन्सिल आदि पड़ी थीं। इतने में पोस्टमास्टर आगये और पास ही पड़ी हुई कुर्सी को खींच कर बैठ गये। संयोग से विद्यार्थी-करतारसिंह भर्तृहरि शतक का यह श्लोक पढ़ रहा था—

"कुंकुम पंक कलंकित देहा, गौर पयोधर कम्पित हारा।
नूपुर हंस रणत्पद पद्मा, कं न वशी कुरुते भुवि रामा ॥

पोस्टमास्टर का चित्त चंचल हो उठा। पुरानी स्मृति नवीन होगई वे सजल नेत्रों से बोले—मास्टर जी सुना है आपके देश में नारियों की बड़ी दयनीय दशा है। क्या वास्तव में यही बात है।

इसके उत्तर में बेनी के मुख से एक शब्द तक न निकला उसे अपनी प्रभा का स्मरण हो आया। पोस्टमास्टर ने देखा कि उसका चेहरा उतरा हुआ था प्रत्युत्तर में उसके नेत्रों में भी अश्रु कण भरे थे।

६

बुढ़िया ने बारी बारी से एक-एक कोठरी खोली और प्रभा को सम्बोधित करके कहा—ले देख बेटी तू नहीं मानती थी यहाँ तेरे ही सरीखी सब मौजूद हैं। प्रभा ने प्रत्येक के चेहरे पर दृष्टि डाली वे सब घृणा और भय से रो रही थीं। उनमें से दो बिधवा प्रतीत होती थीं, एक का विवाह होगया था और शेष दो अभी कुमारी थीं।

आयु में वे १४ से १८ वर्ष तक होंगी। बुढ़िया ने प्रत्येक को समझा कर कहा कि अब रोने से लाभ नहीं है उनके घरवाले उन्हें अब किसी भी दशा में घर पर नहीं रख सकते। प्रभा उन पांचों में सबसे अधिक रूपवती थी उसके बराबर अथवा अधिक रूप किसी में भी न था। इस बात

से उसके चित्त में अब भय और चिन्ता की मात्र
होगई। जिस रूप पर कभी उसे गर्व था वहीं आ
का कारण बन गया अब वह उससे घृणा क
संसार का नियम है कि उपवन में जो पुष्प सबसे
मनोहर होता है उसे ही तोड़ने को सबसे प्रथम र
हाथ उठता है। प्रभा के रूप पर उस उपवन के
मुग्ध थे और उसके अधरामृत को पान करने के
उत्कंठित रहते थे। बुढ़िया जानती थी कि जितन
वह उसे प्रसन्न कर सकेगी उतना ही अधिक लाभ
सम्भावना है। रूप के इस बाजार में वह प्रभा को
अधिक मूल्यवान समझती थी। रात को पुलिस के
तहसीलदार, कान्सटेबिल, पोथा बांचने वाले पण्डि
पुत्र और गुन्डे उस मकान में इकट्ठा होते और
क़ीमत लगाता वैसा ही माल मिलता था। ग़रीब
मख़मल को देख कर ही रह जाते—मुँह में पानी
किन्तु लाचार थे। उसे स्पर्श करने के लिये लक्ष्मी
अधिक आराधना करने की आवश्यकता थी।

दो महीने बीत गये—सभी युवतियों का हृदय
गया जो कभी लज्जा और संकोच से अपना मस्तक
में लगा देती थीं वही अब निर्लज्जता से खुलेरूप
उपहास करने लगीं, आखिर बुढ़िया का जादू सब पर
कर गया। अब वे सब स्वच्छंदता से स्नान करतीं,

लगातीं, तेल मलती, इत्र लगातीं और अनेक प्रकार के रोचक शृंगार करके अपने २ सजे हुए कमरों में जा विराजती थीं घर में नौकर थे। खाने को उत्तम २ पदार्थ मिलते पहने को बेश क़ीमती गहने और कपड़े मौजूद थे। ऐसा सुख दूसरी जगह कहां धरा था।

उस दिन वाहर से कोई पंजाबी आया था—रहीम उसे प्रत्येक कमरे में लेजाता और पूछता "कहो सरदार जी आया पसन्द।"

पंजाबी बोला—अरे भाई कोई अच्छा माल दिखाओ इससे काम नहीं चलेगा।

अन्त में रहीम उसे प्रभा के कमरे में ले आया। पंजाबी उसे देखते ही उछल पड़ा—"हां यह ठीक है लेकिन माल देख कर दाम ठीक होगा-यदि कहीं सड़ा निकल जाय।"

रहीम ने कहा—हां जी सरदार साहब खूब अच्छी तरह देखलो। पसन्द आवे तो लेना। लेकिन कुछ पेशगी देना पड़ेगा।

पंजाबी ने जेब से २००) के नोट निकाल कर उसके हाथ में रख दिये और मुस्कराते हुए बोला-यदि माल पुराना निकला तो यह रुपया वापस करना पड़ेगा।

रहीम ने कहा—खूब शौक से-और वह कमरे से बाहर होगया।

१५ मिनट के बाद पंजाबी बाहर आकर कहने लगा

माल ठीक है चलो सौदा पक्का करलें। मुझे इसी गाड़ी से वापस जाना है।

रहीम ने कहा—हाँ चलो।

दो हजार पर सौदा पक्का होगया बुढ़िया ने सरदार से पूछा—जेवर और कपड़े आप अपने साथ लाये हैं या उसका दाम दीजियेगा।

पंजाबी ने कहा—कपड़े मेरे पास हैं तुम जेवर का दाम ले सकती हो। कितना देना होगा?

बुढ़िया ने कहा—बस एक हजार और दे देना।

पंजाबी ने जेब से ३०००) के नोट निकालकर बुढ़िया के हाथों पर रख दिये—उसने उन्हें तिजोरी में रखकर बन्द कर दिया और फिर प्रभा को विदा करने की तैयारी करने लगी।

चलते समय प्रभा अपनी सहेलियों से लिपट २ कर रोने लगी—उसके चित्त में स्नेह का समुद्र हिलोरें लेने लगा ईश्वर की माया भी विचित्र है जिस घर से कभी उसे घृणा थी आज वही स्नेह का मन्दिर हो गया था। बुढ़िया ने उसे समझाते हुए कहा—बेटी यह तो सराय है जो यहाँ आया है किसी न किसी दिन उसे यहाँ से अवश्य जाना पड़ेगा। इसी तरह एक दिन सब की बारी आवेगी। किसी दिन ये सभी चिड़ियाँ उड़ा दी जायेंगी—आज तू जारही है कल उनका नम्बर है।

जिस समय प्रभा तांगे में सवार हुई वह पूरी पंजाबिन जंच रही थी। लहँगे के स्थान में एक मखमली जरी का काम किया हुआ सिलवार था, चोली की जगह एक रेशमी फूल-दार जाकेट थी, दाई हाथ घूँघट काढ़ लेने वाली ओढ़नी के स्थान पर आधे सिर से पड़ा हुआ तनजेब का दुपट्टा था। पैरों में नुपुर न थे बल्कि एक बढ़िया मखमली जूते का जोड़ा था। उसे इस वेश में देखकर कोई स्वप्न में भी नहीं कह सकता था कि यह युवती मीरा सराय की रहने वाली है।

१०

पोस्टमास्टर की बदली लायलपुर हो गई थी—उनके साथ बेली भी था—वे उस से अधिक स्नेह करने लगे थे। और इसी कारण से अपने साथ लायलपुर लिवा लाये थे। यहाँ आये उन्हें कुछ ही महीने बीते होंगे कि उन्होंने ५०००) खर्च करके अपना विवाह कर लिया। जीवन के नीरस दिन सरस हो गये—घर में प्रभा छा गई, चित्त में प्रसन्नता की झलक दिखाई पड़ने लगी। सावन भादों की अंधेरी रातें एक बार पुनः जगमगा उठीं।

कर्तारसिंह के पढ़ने का कमरा घर से मिला हुआ था, या यों कहना चाहिये कि घर के अन्दर जाने का रास्ता कमरे के बीच में से था। दरवाजे पर चिक पड़ी थी और उसी को उठाकर लोग अन्दर आते जाते थे। पंजाब में

आती हैं उनमें पहिले पहिल इतना साहस नहीं होता कि वे बिना परदे का सहारा लिये यहाँ खुले आम रह सकें। यही हाल हमारे पोस्टमास्टर को नई दुलहिन का था। पोस्टमास्टर इस बात का अनुभव करते थे और इसी लिये उन्होंने पर-पुरुष की छाया से बचने के लिये दरवाजे पर चिक अड़ा दिया था।

बेनी अपने नियत समय पर नियम से आता और पढ़ा कर अपने घर चला जाता।

सायंकाल का समय था—गरमी के दिन थे उस दिन पोस्टमास्टर कहीं घूमने को चले गये थे। उनकी नई दुलहिन घर के आँगन में रक्खे फूलों के गमलों के पास टहल रही थी। कर्तारसिंह बाहर कमरे में बैठा हुआ पढ़ रहा था। पोस्टमास्टर की दुलहिन को कमरे के अन्दर से अपने प्रान्त की बोली के कुछ शब्द सुनाई पड़े—वह जरा आगे बढ़ी और चिक के किनारे से कमरे की ओर देखने लगी थोड़ी देर खोज करने के बाद उसे मालूम होगया कि वह बोली किसी और की न थी—बल्कि कर्तारसिंह को पढ़ाने वाले मास्टर की थी। वह ध्यान से उस बोली को सुनने लगी उसका चित्त चंचल हो उठा—भूली हुई स्मृति लहरा उठी मुँह से निकल गया—ऐसी ही आवाज उनकी थी। वह हृदय के वेग को न सम्हाल सकी टकटकी लगाकर कमरे के अन्दर बैठे हुए व्यक्ति को देखने लगी।

उसके पैर लड़खड़ा गये—हृदय धड़धड़ाने लगा विचार उत्पन्न होगया—यह क्या—वह यहाँ कहाँ से आगये।

फिर सोचने लगी—कि कोई दूसरा ही होगा—वह यहाँ कैसे आ सकते हैं ? मास्टर साहब अपने पढ़ाने में तल्लीन थे उनकी दृष्टि इस ओर न पहुँच सकी।

कुछ दिन तक यही कार्य क्रम होता रहा—जब कभी पोस्टमास्टर घर से बाहर निकल जाते—वह बराबर चिक के किनारे खड़ी होकर उस पढ़ानेवाले की ओर झांका करती संयोग वश एक दिन बेनी की आँख कुछ ऊपर उठ गई और प्रभा ने उसको अच्छी तरह पहिचान लिया उसका सारा शरीर कांप गया—वह संकोच और लज्जा से भय-भीत होकर वापस लौट पड़ी। मन में कहने लगी—हो न हो यह वही हैं—मैंने अच्छी तरह पहिचान लिया है कोई दूसरा नहीं हो सकता—लेकिन अब क्या उन्हें अपना पता देना उचित है। मैं तो भ्रष्ट हो गई हूँ—पतित हूँ क्या मुझे वे अपना सकते हैं ? परिचय देने से शायद वे नाराज भी होंगे—तो क्या यौंही रहना उचित है ?

थोड़ी देर में वह विचार धारा पलट गई उसने निश्चय किया कि चाहे जो कुछ हो।एक बार उनके दर्शन करने में क्या हर्ज है ? किसी प्रकार दो दो बातें करके चित्त तो अवश्य ठंडा करूँगी—चाहे वे मुझ पर प्रसन्न हों अथवा अप्रसन्न। किन्तु अप्रसन्न होने का इसमें कारण ही क्या है।

सुना रहे थे। दोनों के नेत्रों से आँसुओं की धारा बह रही थी—हृदय में स्नेह-सिन्धु की लहरें उछल रही थीं दोनों ही किसी विषम वेदना में गोते खा रहे थे। कोई कभी सिसक उठता था, तो कोई कभी रो उठता। यह दशा कितनी देर तक रही इसकी थाह एक विछुड़ा हुआ हृदय ही पा सकता है। प्रभा के आँसू अपने रूमाल से पोंछते हुए बेनी ने कहा—प्यारी, अब आंसू बहाकर मुझे अधिक दुखी न करो, तुम्हारी इस वेदना से मेरा हृदय फटा जा रहा है।

प्रभा पति के गले से लिपटकर बोली—नाथ! मैं रो नहीं रही हूँ, अपने हृदय की पीड़ा कम कर रही हूँ।

बेनी उसके मस्तक पर अपना हाथ फेरते हुए बोला—हृदयेश्वरी धीरज धरो, तुम्हारे दुःखों का अब अन्त हो गया है ईश्वर तुम्हारा मंगल करेगा। हाय! मेरे माता पिता ने तुम्हारे साथ कितना बड़ा अन्याय किया है—मैं नहीं जानता था कि वे मेरे साथ ऐसी माया कर रहे हैं। भगवान! ८०००) रुपये के पीछे आज मैं अपना शरीर दूसरे के हाथों में देख रहा हूँ। हाय! अब तुम पर मेरा कुछ भी अधिकार नहीं है। स्वच्छन्दता से नहीं, किन्तु चोरी करके मैं यहाँ तुमसे बात कर रहा हूँ। प्रभा, अब तुम कैसे मेरी हो सकती हो?

प्रभा—नाथ मैं पतित हो चुकी हूँ, अनेकों नर-पिशाचों की काम-वासनायें शम करके मैं यहां तक पहुँच सकी।

गत ५ वर्ष मुझे इसी नरक में बीते हैं—अब यह प
शरीर आप के योग्य नहीं रहा।

बेनी—हाय ! अब पोस्ट मास्टर भी मुझको मुझे न
गौर सकते। पाँच हजार के स्थान में मेरे पास पाँच सौ
नहीं हैं कि जिससे किसी प्रकार तुम्हें वापस कर सकूँ
प्यारी तुम चाहे जितना पतित हो चुकी हो मेरे हृदय में
भी तुम्हारी वही पवित्र मूर्ति विराज रही है। मैं तुम
अलग नहीं रह सकता, तुम्हारे बिना प्राण त्याग कर दूँगा

प्रमा—नाथ ! मैं अब नरक की कीड़ा हूँ, आपके योग
नहीं रही। मेरा आपका प्रेम अब इस शरीर से नहीं, कि
आत्मा से होना उचित है। प्यारे, क्षणिक सुख के लि
अपने-आप को नरक में न डालो। मैं आपको देखकर ही
सन्तोष करती रहूँगी। नाथ मुझे क्षमा करो। इस पवि
शरीर की अभिलाषा त्यागकर पवित्र आन्तरिक स्नेह
सम्बन्ध जोड़िये।

बिछुड़नेवालों पर परमात्मा की सत्ता भी दया नहीं
करती, देखते देखते दो घण्टे व्यतीत हो गये। प्रमा ने पति
के चरण स्पर्श करके कहा—नाथ, मुझे क्षमा करियेगा, मैं
बड़ी अभागिनी निकली। मेरे अपराधों को भूल जाये
मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है।

बेनी ने स्नेह से उसका हाथ पकड़कर कहा—देवी तुम
निर्दोष हो। इसमें तुम्हारा अपराध ही क्या है ?

पोस्टमास्टर के प्रयत्न से बेनी अब लायलपुर के डाकखाने में पार्सल बाबू है। वह अब अकेले नहीं रहता—साथ में उसकी द्वितीय स्त्री करुणा और उसका पुत्र सुशील भी है। मकान के आधे भाग में पोस्टमास्टर स्वयँ रहते हैं और आधा भाग बेनी के लिये है। अब चिक का पर्दा नहीं है। कर्तारसिंह के एक भाई भी है जिसे डाकखाने से लौटने के बाद बेनी अपनी गोद में उठाकर अपने कमरे में ले भागता है। सुशील का अधिकांश समय पोस्टमास्टर की नई दुलहिन की गोद में ही व्यतीत होता है। कभी कभी पोस्टमास्टर भी उसका हाथ पकड़ कर पार्क में ले जाते हैं। घर में परस्पर प्रेम है, प्रीति है, स्नेह है, मोह है, ममता है, धन है और वैभव है। यह सब पोस्ट मास्टर की पत्नी द्वारा रचे हुए नाटक का दृश्य है। लायलपुर निवासी इस पंजाब और यू०पी० के संमिश्रण पर आश्चर्य करते हैं। स्वयँ पोस्टमास्टर और बेनी की स्त्री तक इससे विस्मित हैं। घर के सात प्राणियों में केवल दो ही इस पूर्व जन्म की कथा को जानते हैं।

अविवाहिता

१

वैशाख की दुपहरी थी। सारा गांव धूप से जला जा रहा था। एक पत्ता तक नहीं हिल रहा था, सभी पसीने से तर हो रहे थे भगवन्तनगर के प्रत्येक घर का दरवाजा बन्द था लोग कोठरियों में पड़े हुए समय व्यतीत कर रहे थे। सारी गलियाँ सुनसान थीं कोई भी आते जाते नहीं दिखाई पड़ता था।

एक छोटे-से मकान के सामने नीम का वृक्ष था उसकी छाया में कुछ बकरियां और कुछ गायें बैठी हुई थीं। मकान के दरवाजे पर एक २० वर्ष की अविवाहित कन्या बैठी हुई कुछ सोच रही थी। कभी २ वह उन गायों और बकरियों को भी देखने लगती।

मकान के अन्दर से किसी ने पुकारा—"बिटिया, क्या अभी चाचा नहीं आये ?"

बिटिया ने उत्तर दिया—"अम्मा, कहां आये" और वह भीतर घुस गई।

घर के एक छोटे से कमरे में फटी चटाई पर एक वृद्धा ऊँघ रही थी। उसके हाथ में एक छोटा-सा पंखा था जिससे वह शरीर पर बैठने वाली मक्खियों को हटा देती थी। उसका सारा बदन पसीने में भीगा हुआ था पंखा हिलाने पर भी हवा नहीं मिलती थी।

बिटिया चटाई के समीप बैठ कर अपना मस्तक नीचा करके फिर कुछ विचारने लगी।

बुढ़िया ने करवट बदलते हुए कहा—आज बड़ी देर होगई उनको। रोज इससे पहले आजाते थे, मालूम पड़ता है कि कहीं दूर निकल गये। बेटी तू खाले जाकर, शायद वे देर करके आवें। तू क्यों भूखों मर रही है।

बिटिया के नेत्रों में आंसू भर आये। उन्हें वह अपनी ओढ़नी के अंचल से पोंछ कर बोली—अभी मुझे भूख नहीं है अम्मा—चाचा के आजाने पर खा लूंगी—आते ही होंगे।

देखते २ सन्ध्या होगई किन्तु उसके चाचा अभी नहीं आये, मां बेटी दोनों ही चिन्तित थीं—क्या करतीं—घर में कोई और न था जिसे भेज कर पता लगातीं। मिट्टी के तेल की एक छोटी-सी कुपिया उस घर के अन्धकार को हटा रही थी—आंगन में एक टूटी चारपाई पड़ी थी उस पर एक छोटी-सी दरी बिछी थी—एक बदबूदार मैला तकिया सिरहाने रक्खा था। जमीन पर चटाई बिछी थी जिस पर मां बेटी दोनों बैठी हुई बातें कर रही थीं।

बुढ़िया ने कहा—बिटिया, तब तक कुछ राम
सुना किसी प्रकार समय तो कटे।

बिटिया ने कहा—"बहुत अच्छा अम्मा"
टेमटिमाती कुप्पी को एक ईंट पर अपने साम
रामायण की पोथी खोलने लगी। पुस्तक के ऊपर
किन्तु सफेद कपड़ा लिपटा हुआ था—उसे खोल
अलग रख दिया और पढ़ना आरम्भ किया—

जेहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करि
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभ गुण
मूक होहिं वाचाल, पंगु चढ़ैं गिरिवर
जासु कृपासु दयाल, द्रवहु सकल कलिम
नील सरोरुह श्याम, तरुण अरुण वारि
करहु सो मम उर धाम, सदा चीर साग
कुन्द इन्द्र सम देह, उमा रमण करु
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा······

किसी ने पुकारा बिटिया, बिटिया।

बिटिया का स्वर आगे न बढ़ सका व
चाचा और रामायण को पोथी खुली
खोलने चली गई।

आगन्तुक उसका पिता था। बदन प
था फटा हुआ चार हाथ का दुपट्टा शिर
पर लोटा डोर लटक रहा था। घुटनों त

में जूते होने पर भी घुटनों तक धूल भरी थी जिसे देख कर सामान्य बुद्धिवाला भी कह सकता था कि वह किसी लम्बी यात्रा से आ रहा है। वह घर में घुसते ही शिथिल होकर चारपाई पर गिर पड़ा कुछ देर तक आराम करने के बाद बोला—बिटिया यह लोटा डोर खोल कर रख ले।

बुढ़िया जो सम्भवतः उसकी पत्नी थी—उसके समीप जाकर बोली—आज बड़ी देर होगई—क्या कहीं दूर निकल गये थे।

आगन्तुक—क्या बताऊँ कला की महतारी मैं तो बड़ा निराश हो रहा हूँ। सारे दिन परिश्रम करता हूँ किन्तु सब व्यर्थ, जिस के दरवाजे पर जाता हूँ वही मुँह बना लेता है बात-चीत करना तो दूर रहा कोई मुँह से बोलना भी पसन्द नहीं करता।

बुढ़िया—आज कहां गये थे।

आगन्तुक—गया कहां था। मुरादाबाद ही में दिन बीत गया। कोई काम ठीक नहीं हुआ, एक लड़का अभी कुछ दिन हुए कल्याणभार्य हुआ है, उमर ४० वर्ष से अधिक नहीं है। सकीपुर के डाकखाने में डाक लेजाने में नौकर है। तनख्वाह भी अच्छी है। दिक्कत यह है कि एक हजार से कम पर राजी नहीं होता।

बुढ़िया—और कोई सिलसिला नहीं लगा ?

आगन्तुक—और हैं तो बहुत से लेकिन दो हजार से

कम पर कोई भी राजी नहीं है। इसके नीचे बात-चीत करने पर कहते हैं कि जाकर कहीं चौबे—दुबे को ढूँढ लो। हम लोग पाँच २ सौ पर ब्याह नहीं करते।

बुढ़िया—खैर फिर कहीं और देखना चाहिये।

आगन्तुक—हाँ देखना ही पड़ेगा, जब तक सूत्रा नहीं है तबतक तो भटकना ही पड़ेगा। भगवान की जब इच्छा होगी तभी हो सकेगा।

२

भगवन्त नगर से उन्नाव जाने वाली सड़क तवे की भांति गरम थी। सड़क क्या थी भुर्जी का भाड़ हो रही थी ढाई ढाई गज गहरी धूल चारों ओर फैल रही थी। सूर्य्य भगवान खोपड़ी पर आग उगल रहे थे-ऐसे समय में आफत का मारा प्यास से व्याकुल—पसीने में सराबोर एक बुड्ढा मुसाफिर बड़ी मेहनत से अपने पैर आगे घसीट रहा था। वह कुछ ही दूर गया होगा कि उसका बुढ़ापे का शरीर कांपने लगा—प्यास की अधिकता से गला लकड़ी होगया आंखों के आगे अँधेरा छा गया और वह लड़खड़ा कर सड़क पर गिर कर अचेत होगया।

संयोगवश एक किसान अपने खेत से वापस लौट रहा था—वह उस बुड्ढे को धूल में गिरते देखकर दौड़ पड़ा और उसे उठा कर पास ही के बरगद की छाया में ले गया। वहां जमीन पर लिटाने के बाद उसके मुँह पर अपने अँगौछे से [illegible] लगा।

कुछ देर के बाद बुड्ढे ने धीमे स्वर में कहा—"पानी"

विचारा किस असमंजस में पड़ गया। क्या करे क्या न करे। एक हिन्दू को, मुसलमान पानी भर कर किस प्रकार पिला सकता है।

बुड्ढे ने फिर कातर स्वर से कहा—भाई दो बूँद पानी।

किसान का सारा असमंजस काफूर हो गया। वह बिना कुछ सोचे विचारे बुड्ढे का लोटा डोर लेकर पानी लेने चल पड़ा।

दुर्भाग्य से पास में कोई कुआँ या तालाब आदि न था। वह प्रत्येक स्थान को ढूँढ़ कर थक गया किन्तु पानी का एक बूंद भी न मिल सका। लाचार उसने अपने गावँ से पानी लाने का निश्चय किया। दो घन्टे के बाद वह लोटे को भर कर वापस आया-बुड्ढे के मुहँ में पानी की धारा पहुँचते ही उसे चेतना आ गई और वह कुछ ही क्षणों में उठकर बैठ गया। पास ही दाढ़ी वाला किसान भी था।

दाढ़ी देखते ही बुड्ढा घबड़ा गया वह बोल उठा, अरे क्या तुम मुसलमान हो?

किसान—हाँ मालिक।

बुड्ढा—अरे यह तुमने क्या किया! मेरा धर्म बिगाड़ डाला।

किसान—मालिक फिर दूसरा उपाय कौन सा था। कौन पानी लेने जाता।

बुड्ढा—सो ठीक कहते हो भाई लेकिन मेरा धर्म तो जाता रहा।

किसान—मेरा इसमें कौन सा क़सूर है मालिक। मैंने तो अपनी समझ में अच्छा ही किया था यदि पानी लाकर न पिलाता तो आपके प्राण पखेरू उड़ गये होते।

बुड्ढा—मैं मानता हूँ भाई लेकिन दुख है कि मेरा धर्म भ्रष्ट हो गया।

किसान—मालिक मैं आप ही के लोटे में पानी भर कर लाया था—केवल उसे छूने का दोषी हूँ अब आप जैसा समझें।

बुड्ढा—अब क्या हो सकता है भाई—मुँह दिखाने के लायक नहीं रह गया।

किसान बुड्ढे की बातों से दुखी था-उसने भलाई की भी किन्तु उसका फल उलटा हो गया। उसे जिस बात का संशय था वही सामने आ गया। अगर वह पानी न पिलाता तो उसे ऐसे शब्द क्यों सुनने पड़ते। क्षमा याचना करने के बाद वह उदास हो कर अपने गाँव की ओर चल पड़ा।

बुड्ढा धूप से व्याकुल हो गया था-वह सन्ध्या तक उसी वृक्ष के नीचे पड़ा सोचता रहा। आगे की यात्रा स्थगित हो गई-अब उसे मुसलमान हो जाने की चिन्ता सता रही थी ६० वर्ष की आयु में उसे यह पहिला ही अवसर था जब कि उसे एक मुसलमान के हाथ का छुआ पानी पीना पड़ा। एक

ओर प्रायश्चित की चिन्ता थी और दूसरी ओर समाज का भय। घर में २५ वर्ष की अविवाहिता कन्या बैठी थी—उसका ब्याह अभी तक न हो सका था। अब यदि लोगों को इसका पता लग जावेगा तो फिर उसे कौन पूछेगा इसी चिन्ता में डूबे हुए सन्ध्या हो गई किसी प्रकार उसने लोटा डोर सम्भाल कर कन्धे में डाला और जिस रास्ते से आया था उसी ओर चल पड़ा।

३

उस समय भगवन्तनगर में मधुरा मिसिर के बराबर कोई और धनाढ्य न था। गांव में जमींदारी थी और कुछ जेवर तथा नगदी भी पास थी। आयु ४० वर्ष से ऊपर बीत चुकी थी, किन्तु तब भी देखने सुनने में सामान्य रीति से अच्छे जान पड़ते थे। आपको दूल्हा बनने का सबसे बड़ा शौक था—प्रत्येक वर्ष आपका नया विवाह रचा जाता था। दुख का विषय यह है कि नई दुलहिन आने के कुछ ही महीने बाद आप फिर रण्ड मुसण्ड रह जाते—सभी आपका साथ छोड़कर स्वर्ग-धाम सिधार जातीं। कोई हैजे का शिकार हो जाती, कोई बुखार की गर्मी में तप जाती, कोई पेचिश से शिथिल हो जाती, कोई जूड़ी से अकड़ जाती और कोई चलते-फिरते लीन हो जाती थी। लोग इस बात से आश्चर्य कर रहे थे, किन्तु वास्तविक कारण का कोई अनुसन्धान न कर सका।

मिसिर जी का बस यही व्यवसाय था—सारे ठाठ-बाट खेत-खलिहान, बाग़-बग़ीचे, घर-द्वार इन्हीं विवाहों के बल पर बने थे। प्रति वर्ष चक्रविधि ब्याज की दौड़ से मूलधन बढ़ता ही जाता था। लोग प्रति वर्ष २०००) की थैली और अपनी कन्या को उनके हवाले कर देते थे। लेखक का अनुमान है कि मिसिर जी के ऐश्वर्य पर ही लोग मुग्ध होकर अपनी सम्पत्ति और कन्याओं को भेंट कर रहे थे। पूरा पूरा हिसाब लगाने से पता चलता है कि इस ४० वर्ष की आयु में मिसिर जी के कुल विवाहों की संख्या १२ तक पहुँच गई थी। प्रत्येक विवाह में दो हज़ार से कौड़ी कम न लेते थे और इस हिसाब से चौबीस हज़ार रुपया बि[ना] मजूरी किये उनके घर में पहुँच चुका था। १२ कन्यायें [...] अलग खाते में थीं। पाठक आश्चर्य करेंगे किसी किसी [...] तो मिसिर जी ने एक साथ ही तीन २ विवाह किये थे। अ[...]

जिस समय का हाल यहाँ पर लिखा जाता है [...] समय मिसिर जी का घर सूना पड़ा था—न कोई पुत्र और न पुत्री। १२ नम्बर की स्त्री का देहान्त हुए दो म[...] बीत चुके थे।

सन्ध्या का समय था मिसिर जी के चबूतरे पर [...] लोढ़ा खटक रहा था। गाँव के ३-४ मनचले युवक चारपाई पर बैठे थे। यही मिसिर जी के मित्र थे, स[...] थे—उनको हाँ में हाँ मिलाने वाले थे और उनके पसीने [के] स्थान में लोहू बहाने वाले थे।

मिसिर जी ने एक युवक से धीरे से पूछा "वह रंडी कहाँ टिकी है ? केशव।

केशव ने उत्तर दिया—उसी अमरूद वाले बगीचे में है। ठंडाई पीलो फिर चलेंगे।

इस पर तीसरा व्यक्ति बोलउठा—लखनऊ से आई है —गाना फर्स्ट क्लास गाती है और देखने में तो पूरी हूर है।

मिसिर जी ने कहा—अच्छा फिर जरा अंधेरे में चलें गे। ठंडाई पी लो। भोजन करके जाना ठीक रहेगा शायद देर लग जाय।

केशव बोला—बहुत ठीक। हाँ तभी अच्छा रहेगा। इस समय गांव की हवा खराब है लोग छींकते हुए नाक पकड़ते हैं उस दिन देवी तिवारी कह रहे थे कि मथुरा मिसिर रंडी बाज़ी करते हैं—शराब पीते हैं।

केशव कहने लगा—क्या बताऊँ दादा—तुम्हारे पास बैठने से गांव वाले हम लोगों को भी बदनाम कर रहे हैं, इन बूढ़ों के ही कारण सब धूल उड़ रही है।

मथुरा मिसिर का मुँह लाल होगया, वे रोष से बोले—करते हैं तो इस में किसी साले का क्या नुकसान। किसने यह कर्म नहीं किया है—ब्रह्मा जी तो अपनी लड़की तक पर चढ़ बैठे थे! रंडी की तो बात ही दूर है। शराब सभी पीते हैं, उस समय भी ऋषि मुनि गटकते रहते थे। हां नाम तब सोम रस था और अब शराब कही जाती है। कोई पंडित

सिद्ध करे आकर मेरे सामने। सब की कलई खोल सकता हूँ। लोग तम्बाकू फाँकते हैं और मैं उसका धुआँ पीता हूँ, इस में दोष ही क्या है! गुड़ गटकने में शरम नहीं लगती, पर गुलगुला खाते लाज आती है। अपने पास पैसा है जिस तरह से चाहेंगे हम उसका उपभोग करेंगे। मैं भगवन्त-नगर का मिसिर हूँ, मेरे कुल पर तो कभी आँच नहीं लग सकती, कात्यायन गोत्र वाला हूँ सीधा बकरा निगल सकता हूँ।

केशव प्रसन्न होकर बोला—यह साला देवी तिवारी सबसे अधिक हमारे पीछे पड़ा है। घर में लड़की खौड़ हो रही है उसकी तो खबर लेता नहीं। हम लोगों पर ही दिन रात कीचड़ उछालता रहता है।

मोहन चिल्ला उठा—अरे हाँ दादा एक बात मैं आप से कहना ही भूल गया—कल मुरादाबाद से एक कुँजड़ा मेरे पड़ोस में आया है वह कहता था कि देवी तिवारी तो मुसलमान हो गये हैं उन्होंने एक मुसलमान के हाथ का पानी पिया है। कहो तो सारे गाँव में धूम मचा दूँ। बड़े कुलीन की ध्वजा है।

मुरली मिसिर मुस्कराकर बोले—अच्छा यह बात है। देखो मैं कहता था न अरे यह जितने ढोंग हाँकने वाले हैं सब ऐसे ही कर्म करते हैं। समझे होंगे बेटा, कोई देखेगा नहीं।

केशव—अरे भाई आप छिपाओ पाप नहीं छिप सकता ईश्वर तो सब देख रहा है।

मुरली मिसिर—तभी तो अब पोल खुली है। कल सारे गांव में किरकिरी उड़ा दो—कर दिया जायगा समाज से अलग—पड़ा सड़ता रहेगा एक कोने में।

एक तीसरा व्यक्ति जो अभी तक चुपचाप बैठा हुआ सारी बातें सुन रहा था बोला—लेकिन भाई उसके अभी एक पचीस वर्ष की कुंआरी कन्या मौजूद है उसका विवाह होजाने पर ऐसा करना योग्य है—अभी कुछ दिन और ठहर जाओ नहीं तो उस बेचारी का जन्म निरर्थक हो जायगा।

मोहन—होजाने दो—क्या बातें करते हो तुम—उसने मेरा कौन-सा हित सोचा है? सारे गांव में तो बदनाम कर रक्खा है।

केशव—ऐसे समय पर चूकना निरा गधापन है। बड़ी मुश्किल से तो पकड़ में आया है। अब मता चलेगा।

मुरली मिसिर—एक फायदा और है उसका बहिष्कार होजाने पर हम लड़की को कोई पूछेगा नहीं। उस पर भी हम लोग हाथ साफ करेंगे।

सभी चिल्ला उठे—यह बहुत अच्छा सोचा।

धूर्त विचार वाले और नवयुवक उसके सामने आकर
हे होगये। एक युवक ने उसको ओर देखते हुए कहा—
ा, मुसलमान बन कर अब अपना यह रूप दिखा रहे
? अब यह जनेऊ आपके गले में शोभा नहीं देता, अब
दाढ़ी रख कर और गड्डुआ लेकर फिरो। अब तुम हम
गों को धोखा नहीं दे सकते।

विचारा बुड्ढा अवाक् रह गया, उसका चित्त ठिकाने न
। इतने में गांव के वयोवृद्ध पंडित जयनारायण शास्त्री ने
सका हाथ पकड़ कर पूछा—भाई यह कैसी बात है, यह
फवाह लोग झूठ तो नहीं उड़ा रहे हैं?

बुड्ढा छल प्रपंच से रहित था। उसे यह पता न था कि
भी २ झूठ बोलना भी लाभकारी होजाता है। उसे पाप
रके छिपाने का भेद नहीं मालूम था। वह उन व्यक्तियों
से न था जो यवन वेश्याओं का अधरामृत पान करते हैं,
तल पर बोतल चढ़ा जाते हैं, जूते पहिने रोटी, अंडा, और
मांस तक भक्षण करते हैं, किन्तु समय पड़ने पर दूध से
ये हुए, पूरे २० बिस्वा वाले ऊंचे कुल के निकल जाते हैं।
रद्वाज, कश्यप, कात्यायन, उपमन्यु और शांडिल्य आदि
षियों के वंशज बनने में ज़रा भी नहीं लजाते।

उसने अपनी लड़खड़ाती हुई ज़बान से सारी आत्मकथा
ना कर कहा—शास्त्री दादा, मैं सात दिन से इसका प्राय-
श्चित्त कर रहा था आज पूरा कर सका हूँ।

शास्त्री जी ने बड़ी नम्रता से पूछा—तुमने यह समाचार मुझे पहिले क्यों नहीं बताया।

बुड्ढा—क्या बताता आप से। कौन-सा यज्ञ मैंने कर डाला था!

एक युवक चिल्ला उठा—बताते क्यों? जालसाजी कर रहे थे। समझते होंगे कि यों ही छिप जायगा, अरे यह पाप है बिना प्रकट हुए नहीं मानता। बाबा, छिप-छिप कर करोगे, छिपाओगे कहां।

शास्त्री जी ने कहा—यह तुमने अच्छा नहीं किया तिवारी जी। कम से कम मुझ से सलाह लेकर कुछ करना था, सभी बात तो यह है कि मुसलमान का जल पीने में और मुसलमान होजाने में कुछ भी भेद नहीं है।

एक दूसरे युवक ने कहा—भेद क्या, पूरे मुसलमान हो गये। अब इनका बहिष्कार करना ही उचित है। दूसरी बात यह है कि इन्होंने गांव वालों को धोखा देकर इतने दिन तक इसको छिपा रक्खा था—आज पूछने पर बतलाया है, इस सम्बन्ध में भी कुछ दण्ड होना योग्य है।

शास्त्रीजी ने अपनी पोथी बगल में दबाते हुए कहा—खैर अब इन्हें दण्ड क्या देना चाहिये? बिचारे अपराध तो स्वयँ स्वीकार कर रहे हैं, बस इतना ही काफ़ी है कि आगे से इनके यहाँ खाने-पीने में परहेज किया जाय। प्रायश्चित्त का फल इस सम्बन्ध में लागू नहीं हो सकता।

एक-एक स्वर से चिल्ला उठे—"हो गये मुसलमान" और अपने अपने घर चले गये।

यहाँ पर एक बात लिखना और उचित जान पड़ती है कि पं० जयनारायण शास्त्री गाँव में उस समय सबसे बड़े थे। आप शास्त्री परीक्षा पास थे और अपनी पंडिताई के कारण अच्छी तरह प्रसिद्ध थे। शास्त्रीजी जितने अधिक वृद्ध थे उतने ही लक्ष्मी के अनन्य भक्त थे। पैसे की ममता में पड़कर आप उचित को अनुचित और अनुचित को उचित अपनी तर्क-शक्ति से सिद्ध कर देने में अद्वितीय थे। मथुरा मिसिर के घर में आप का अच्छा मान था, प्रत्येक वर्ष उन्हें गुरु-दक्षिणा मिलती रहती थी। मिसिर जी के प्रत्येक विवाह में मण्डवे के नीचे बैठकर आपने पूरी कचौड़ी उड़ाई थीं। देवी तिवारी के इस मामले में भी मिसिर जी ने शास्त्री जी की मुट्ठी गरम कर दी थी जिसके फलस्वरूप यह बहिष्कार प्रस्ताव पास कर दिया गया।

५

सन्ध्या का समय था। मथुरा मिसिर चारपाई पर बैठे हुए पान चबा रहे थे। पास ही एक बुड्ढा बैठा था—उसका सारा शरीर राख की गर्द से भरा था—मुँह श्याम के कारण सूख रहा था। दिल में कोई भारी चिन्ता थी जिससे उसका चेहरा कुछ कुछ उदास मालूम पड़ता था।

मिसिर जी ने मुस्कराकर कहा—चमरी जी मैं तो

हज़ार से कौड़ी कम नहीं ले सकता, अभी तक मेरे जित
विवाह हुए हैं, सभी इस दर पर तय किये गये हैं।

अवस्थी जी ने विनीत भाव से कहा—कुछ तो क
करिये मिसिर जी महाराज—ग़रीब पर इतनी कठोरता
करिये।

मिसिर जी—क्या करूँ अवस्थी जी, आप पहिले मे
घर-द्वार और हैसियत की ओर देख लें फिर कुछ इस
सम्बन्ध में कहें। जो कुछ मुझे आपसे मिलेगा उससे बारात
का ख़र्चा निकल आयेगा, नहीं तो मुझे अपने घर से लगान
पड़ेगा। अब आप ख़ुद सोच लें।

अवस्थी जी—अच्छा तो जैसी आपकी इच्छा है—
आपके घर-द्वार, मान, कुल और ऐश्वर्य को ही देखकर
चार दिन का रास्ता तय करके कोटरा से आ रहा हूँ।

मिसिर जी—हाँ तो बस आप ही समझ लीजिये—
आपकी लड़की स्वर्ग में हो जायगी। परमात्मा की कृपा से
घर में हर प्रकार का सुख है। नौकर-चाकर हैं। अवस्थी जी,
मैं केवल पुत्र की इच्छा से ही विवाह करना चाहता हूँ—
अगर घर में एक भी सन्तान होती तो मेरी इच्छा कभी भी
विवाह करने की न थी। क्या करूँ लाचार होना पड़ता है।

अवस्थी जी—परमात्मा करे आपकी यह मनोकामना
शीघ्र पूरी हो। मैं लड़की के सुख की ही आकांक्षा करके
आपके यहाँ आया हूँ।

मिसिर जी—सो उसे कोई कष्ट नहीं मिल सकता, आप निश्चिंत रहें।

कुछ देर के बाद मिसिर जी का विवाह तय हो गया। अवस्थी जी ने प्रार्थना की कि जहां तक हो सके विवाह-तिथि समीप ही रक्खी जाय। मिसिर जी का नुकसान ही क्या था उन्होंने अपनी सम्मति अवस्थी जी की इच्छा पर रखदी। आषाढ़ सुदी ८ की लग्न निश्चय हो गई।

वरोच्छा फलदान के रुपये मिसिर जी के हाथों में रखकर अवस्थी जी ने कहा—जहां तक हो सके बारात कम लाइयेगा।

मिसिर जी—जैसी आप आज्ञा दें—मैं उसे सर्वदा पालन करने को तैयार हूँ।

अवस्थी जी—मेरी आपसे केवल यही प्रार्थना है कि अधिक जमाव न हो।

मिसिर जी—कहो तो मैं अकेला ही चला आऊँ।

अवस्थी जी—क्या ऐसा हो सकता है?

मिसिर जी—मेरे हाथ में है क्या नहीं, अवस्थी जी? सारे गाँव को चुटकी पर नचाता हूँ। देवो तिवारी जो बड़े पण्डित बनते थे अपने बराबर दूसरे को समझते ही न थे उन्हें भी मैंने ऐसा सबक सिखा दिया है कि अब घर से बाहर तक नहीं निकलते। सारे गाँव में मेरे सामने कोई मस्तक नहीं उठा सकता। आपकी कृपा से धन, यश, ऐश्वर्य

आदि सब मेरे यहाँ विद्यमान हैं—केवल मौं का ही दुःख हो जाता है। न मालूम किस मुहूर्त में घर आती है कि जीती हो नहीं। विवाह से तो मैं अब ऊब गया था, किन्तु आपकी नम्रता के आगे मुझे झुकना पड़ा। अगर कोई दूसरा दरवाजे पर आकर खड़ा होता तो उसे दूर से ही फटकार देता।

अवस्थी जी ने हाथ जोड़कर कहा—बड़ी कृपा की आपने मेरे ऊपर- मेरा उद्धार कर लिया—आज पाँच वर्ष से इसी चिन्ता में देश-विदेश की धूल छानता फिर रहा था। आपको दामाद बनाकर मैं अपने को धन्य समझूँगा। हाँ तो विवाह में अगर आप अकेले आ सकें तो और भी अच्छा है।

मिसिर जी ने हँसकर कहा – अगर इसमें भी आप कुछ दिक्कत आवे तो आप कन्या और दहेज मेरे घर पहुँचा सकते हैं।

अवस्थी जी ने मुस्कराते हुए कहा-आप तो मुझ से कर रहे हैं। और अपना झोला गले में डालकर चल वह रात उन्होंने गाँव के बाहर एक टूटे हुए महादेव जी मन्दिर में व्यतीत की। यद्यपि उनका कंठ प्यास अधिकता से सूख रहा था किन्तु उनमें इतना साहस गाँव के किसी कुआँ का एक बूंद भी अपने मुख । उनके धर्म शास्त्र में लिखा था कि जिस जगह

का प्रयोग किये न चूकता। विचारी बुढ़िया को इन बातें
का पता न था उसे तो सारा संसार ब्रह्ममय दीख रहा था
कला इन छलों को अच्छी तरह समझती थी वह किसी
प्रकार भी इस जाल में न फँसी। उसे इन धूर्तों की चालें
का अच्छी तरह पता था और वह सहसा कामान्ध बन क
अपने जीवन को बिगाड़ना उचित नहीं समझती थी। व
किसी ऐसे भ्रमर की खोज मे थी जो यौवन के बदले जीव
के रस का मूल्य अधिक समझता हो।

भादों के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी थी। दोनों मां बे
पास ही चटाई पर पड़ी सो रही थीं। घर में अन्धकार व
साम्राज्य था हाथ पसारने पर भी न सुझाई पड़ता था। ठी
उस समय जब कि गांव का चौकीदार डरते कांपते "जाग
रहियो" की आवाज़ लगा रहा था चार व्यक्ति अपना मु
कपड़े में लपेटे हुए उस मकान में सैंद लगाकर प्रविष्ट हुए
सबसे पहले बुढ़िया के मुँह में कपड़ा ठूँसा गया उसके ह
पांव बांध दिये गये और वह पास ही की कोठरी में डाल
गई। कला इस समय तक निद्रा देवी की गोद में पड़ी ः
उसे इसका कुछ पता न चला। चारों ने जब उसके मुख
कपड़ा घुसेड़ना आरम्भ किया तब उसे चेत हुआ कि
अब हो ही क्या सकता था। उसके हाथ पैर सब पराध
हो चुके थे।

एक ने अपने मुख का कपड़ा हटा कर धीरे से उ

कान में कहा—कहो कला, कर लिया न तुम्हें अपने पंजे में। तुम कब तक बच सकती हो। अब तुम्हें अपने घर लिये चलता हूँ एक साथ ही पांच पांच उतरेंगे।

कला ने एक बार नेत्र खोल कर देखा, यह सूरत मथुरा मिसिर की थी। उत्तर क्या देती उसने भय से अपनी आंखें बन्द करलीं।

दूसरे दिन गांव वालों ने देखा कि देवी तिवारी के घर में सेंद लगी हुई थी, बिचारी बुढ़िया एक कोठरी में मरी पड़ी थी और कला का पता न था।

मेरी ससुराल-यात्रा

१

मैं मुलतान के म्युनिसिपलबोर्ड में नौकर था। परमात्मा की कृपा से चोरी आदि करके आमदनी अच्छी हो जाती थी और चैन से कट रही थी। उस दिन जब कि मेरे पास कुछ काम काज न था केवल रजिस्टर के खाली पन्ने उलट रहा था, चपरासी ने मेरी मेज पर हल्दी से भरा हुआ एक पोस्टकार्ड लाकर पटक दिया। मैंने अपनी एक आँख बन्द करके देखा कि उस पत्र पर मेरा ही पता लिखा हुआ था पूरे ६ दिन तक थैले में बन्द रहने के बाद कहीं सातवें दिन उसे मुलतान का वायु-मंडल प्राप्त हुआ था—दिमाग़ शरीफ़ में यह भाव पैदा हुआ कि इस पत्र को निमोनिया हो गया है क्योंकि उस समय सर्दी अधिक थी। किन्तु जब उसे धूप में तपाने पर भी वह दोष न दूर हुआ तब चिन्ता की मात्रा किसी दूसरे रूप में बदल गई। पत्र पढ़ने के बदले मैं उस पर पड़े हुए हल्दी के छींटों पर अपनी विचार-शक्ति खर्च

करने लगा। बिना कारण प्राप्त किये कारज करना मैं उचित न समझता था।

पूरे १५ दिन इसी चिन्ता में बीत गये किन्तु मैं इस विषय में पास न हो सका। पत्र अभी तक ज्यों का त्यों मेरी जेब में पड़ा था—उस पर लिखा हुआ पता पढ़ लेने भर का ही मैं केवल दोषी था। और किसी शब्द महोदय से मेरी भेंट न हो सकी थी। कुछ परमात्मा की इच्छा समझ लीजिये या यह कि मुझे अपनी ससुराल जाना पड़ा था। १६ वें दिन सवेरे मुझे अपने ससुर का तार मिला कि कुसुम का विवाह है छुट्टी लेकर शीघ्र पधारने का कष्ट करो।

इस तार ने १५ दिन से मेरे हृदय में भरी हुई चिन्ता को भूंज दिया—उन हल्दी के छींटों का सारा रहस्य आज अपने-आप खुल गया—बात यह हुई कि दो गाँठ हल्दी भेजने के स्थान में केवल कुछ छींटों से ही काम निकाल लिया गया था। मेरे जीवन के गत १५ दिन इसी चिन्ता में बीते थे न पेट भर खा ही सका था और न खर्राटे ही भर सका। सारे दिन छींटों में पड़ा रहता था। पहिले विचार में आया कि इसका कारण अपनी धर्म पत्नी को ही पत्र लिख कर पूंछ लूं क्योंकि किसी दूसरे से पूंछने में शर्म लगती थी और बहुत सम्भव है लोग मुझे मूर्ख भी समझने लगते किन्तु फिर विचार करने लगा कि परिश्रम करने से क्या नहीं सिद्ध हो सकता। आज नहीं तो कल अवश्य यही

बुद्धि दौड़ जायगी। दूसरी बात यह है कि विवाह होने के बाद से सारा कामशास्त्र मैंने अपनी धर्मपत्नी ही से पढ़ा था-उस समय मेरी आयु १० वर्ष की थी और मेरी शिक्षिका की अवस्था २० वर्ष की। या यों कहना चाहिये कि पूरा डबल मामला था। मैंने अभी तक उन्हें इसकी गुरु दक्षिणा भी नहीं चुकाई थी और अब यदि इन हल्दी के छींटों के विषय में उनसे पूछता तो गुरु दक्षिणा भी डबल हो जाती। इसी भय से ऐसा साहस न कर सका। मैं अपनी शिक्षिका को सर्वदा आदर की दृष्टि से देखता हूँ मैं उन छात्रों में से नहीं हूँ जो सबक सीख लेने के बाद गुड़ के शक्कर बन जाते हैं। इस आदर का सबसे बड़ा उदाहरण यह है कि मैं उन्हें सर्वथा—आप, प्यारी, हृदयेश्वरी, प्राणेश्वरी, पतिकर्ता, और मानस-मन्दिर आदि शब्दों से विभूषित करता हूँ—परोक्ष में भी धर्म पत्नी के ही नाम से पुकारता हूँ—अपने समाज में प्रचलित प्रथा के अनुसार चुड़ैल, डाइन, कलंकिनी, डाकिन, हरामजादी, पिशाचिन, लुच्ची और हत्यारिन आदि शब्द तो मुझे याद ही नहीं रहते, जीभ पर लाने की कौन कहे। इसके अतिरिक्त मेरी धर्म पत्नी का बर्ताव भी किसी क़दर कम नहीं है। पढ़ते समय यदि मैं कोई बात भूल जाता था तो वे केवल मेरा कान ही पकड़कर उमेठ देती थीं, और यदि कभी अधिक क्रोध आ जाता था तो उस दिन

भोजन न परोसती थीं—इस बात को तारीफ है कि उन्होंने मुझे आज तक कभी भी नहीं पीटा। विद्यार्थी के प्रति गुरु की इतनी सहानुभूति किसी भी अवस्था में कम नहीं है। पहिले जरूर कुछ दिन तक वे मुझे मूर्ख, गधा, देहाती, हूसड़, जंगली और मनहूस आदि कहती रहीं, किन्तु जबसे मैं कामशास्त्र का पूर्ण पण्डित हो गया और इधर कमाऊ भी बन गया तबसे वे प्राणनाथ सरीखे रसीले शब्दों से मुझे सम्बोधित करती हैं। वास्तव में ऐसा अनुभवी गुरु अन्यत्र मिलना सर्वथा कठिन है। मेरा तो अनुमान है कि मैं बड़ा भाग्यशाली निकला। एक बात की मुझे चिन्ता रहती है कि जब कभी मेरी धर्मपत्नी का पत्र आता है वे मुझसे अपनी गुरु-दक्षिणा माँगा करती हैं। किन्तु लाचारी यह कि मैं मुलतान में रहता हूँ और वे यू० पी० के फतेहपुर जिले के अन्तर्गत असनी गाँव में अपने पिता के पास। यद्यपि यह सच है कि गवर्नमेंट ने आधुनिक कला-कौशल और मशीनों द्वारा असम्भव भी सम्भव कर दिया है किन्तु यह बात मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि अभी तक उसने कोई ऐसी मशीन नहीं तैयार की कि जिसके द्वारा एक लाख मील की दूरी पर बैठे हुए पति-पत्नी सन्तान उत्पन्न कर सकें। तार के तारों में इतनी शक्ति नहीं है कि वे इस कमी को पूरा कर सकें। डाकखाने में भी इसका मनीआर्डर नहीं लिया जाता यद्यपि मैं भर-पूर कमीशन चुका सकता

हूँ। यही कारण है कि मैं मुलतान शहर से अपनी धर्मपत्नी के नाम गुरु-दक्षिणा नहीं भेज सका।

हाँ तो जब मुझे तार मिला, परमात्मा की कृपा से और मेरे भाग्य से उसपर हल्दी के छींटे न थे जिससे बेरोक-टोक उसे खोलकर पढ़ गया। अब मेरी समझ में आया कि दो गाँठ हल्दी भेजने के स्थान में मेरे ससुर देव मेरे साथ चालबाजी करके उसके कुछ छींटों से ही काम लेना चाहते हैं। मैं अब गँवार तो था नहीं जो उनके चकमे में आ जाता। अंगरेजी की पूरी ४० किताबें पढ़ा था—साथ में हिस्ट्री, जागफी, पैराग्राफी, फ़ोटोग्राफ़ी, टेलीग्राफ़ी, मोनोग्राफ़ी, म्युनिसिपल मार्की आदि अनेकों मार्की पाते में थीं। ससुर पर उस समय मुझे बड़ा क्रोध आया और किसी बात से नहीं किन्तु इससे कि उन्होंने मुझे ही खूब सस्ता टका सेर समझ रक्खा था। अगर वे चाहते तो हल्दी की दो गाँठें ही नहीं दो लाख बोरी भेज सकते थे। अगर इतना भी न होता तो पीसकर लिफ़ाफ़े में रख देते। कम से कम एक महीने के लिये दाल में जुटाने से सुचित्त हो जाता, किन्तु वे करते कैसे वे तो सरासर धोखा देना चाहते थे। अगर ऐसा हो जाता तो बिचारा पोस्टकार्ड जेब ही में क्यों पड़ा रह जाता। मेरा दृढ़ विचार हो गया था कि ससुराल पहुँचकर उनको ऐसी लम्बी खबर लूँगा कि विचारे रोते फिरेंगे। अपने ही दामाद के साथ इतना गहरा धोखा।

किसी प्रकार छुट्टी माँगकर घर आया और अपना बिस्तर तथा सूट केस आदि सँभालने लगा। गाड़ी ६ बजे शाम को छूट जाती थी जल्दी में पोस्टकार्ड फिर न पढ़ सका वह ज्यों का त्यों सूट केस के अन्दर कोट की जेब में बन्द था।

२

टिकट और अपना सामान लेकर ज्यों ही मैं डिब्बे में घुसा गाड़ी चल पड़ी। बैञ्च पर दृष्टि पड़ते ही उसपर बिछा हुआ गुलगुला गद्दा और बढ़िया ठाठ-बाट देखकर मैं सन्न हो गया। देखा कि वह सेकिण्ड क्लास था। यद्यपि चढ़ने के पहिले एक बार मैंने उसके ऊपर लिखे हुए अक्षरों को अवश्य झांक लिया था किन्तु तब भी गड़बड़ी होकर ही रही उस समय जल्दी के कारण मेरी आँखें तिलमिला रही थीं जिससे दो खड़ी लकीरों के स्थान में तीन लकीरें खड़ी हो गईं और फलस्वरूप मैं उनके घर में मेहमान हो गया

भाग्य बड़ा तेज था—उस समय डिब्बे में एक सूट के के अतिरिक्त और कोई न था जिससे अधिक चिन्ता न हुई सोचने लगा कि अगली स्टेशन में डिब्बा बदल लूँगा। मु रेलवे डिपार्टमेण्ट पर भी क्रोध आ गया वे लोग डिब्बे ऊपर एक, दो और तीन लकीरें खींचकर लोगों को स सर धोखा दे रहे थे। क्या उनके स्थान में हिन्दुस्ते लिखना पाप था लेकिन करते कैसे टिकट चेकरों की तनख्वाह निकालने का भी तो कोई उपाय करना था।

यान तो यह है कि अगर वह म्यूनिसिपलबोर्ड होता तो सबसे प्रथम मैं इस प्रथा का अवश्य विरोध करता। लाचारी हालत थी—अपना वश ही क्या था—इस समय मैं खुद इस जाल में पड़ गया था।

गाड़ी तेजी से भागी जा रही थी—सहसा टट्टी का दरवाजा खुल गया और उसके अन्दर से एक गौराङ्ग महाप्रभु आँख भौं सिकोड़ते हुए बाहर निकले।

मेरे शरीर पर कोट पैंट के स्थान में हिन्दुस्तानी कुरता धोती देखकर वे क्रोध से लाल हो गये और अपने क़दम शर्राक मेरी ओर बढ़ाते हुए बोले—"डैम टुम काला आडमी यहाँ कैसा आ गया" ?

मेरे देवता कूच कर गये चिन्ता उत्पन्न हो गई कि अब पकड़ लिया गया यह स्टेशन मास्टर के हवाले किये बिना कदापि न मानेगा। मैंने हाथ जोड़कर कहा—साहब मैं भूल से यहाँ आ गया था अगले स्टेशन पर उतर पड़ूंगा। उसने कहा—टोमारा टिकट किडर है ?

मैंने टिकट निकालकर उसे दिखा दिया इस पर वह और भी बिगड़ा—अभी तक वह मुझे सेकिण्ड क्लास का ही मुसाफिर समझता था, किन्तु जब उसने थर्ड क्लास का टिकट देखा तो और भी खौल उठा। उसने क्रोध से कहा—डैम टुम यहाँ आगया टोमारा टिकट थर्ड का है।

मैंने कहा हजूर मुझे कुछ मालूम न था—गलती हो गई अगले स्टेशन पर उतर पड़ूंगा।

अभी तक मैं बैंच पर बैठा हुआ गद्दे का आराम ले रहा था ऐसा मौका कभी क्यों नसीब होता—उसने मेरा हाथ पकड़कर कहा, डैम नीचे बैठ।

कुछ क्षणों में ही मुझे फर्श पर बैठना पड़ा—मैं अपनी गर्दन झुकाये हुए साहब के जूते में अपना मुँह देख रहा था और वे मेरे समीप ही गद्दे पर बैठे मेरी ओर आँखें फाड़ २ कर देख रहे थे।

किसी प्रकार राम राम करके "खानेवाल" स्टेशन प गाड़ी खड़ी हुई—अंधेरा काफी हो चुका था—आने के लि थे स्टेशन के प्लेटफार्म पर साहब को कोई भला मानु रेलवे कर्मचारी न दिखाई पड़ा वे डिब्बे से बाहर निकल खोज करने लगे। मैं भला ऐसा मौका क्यों चूकता। अप सामान उठाकर दूसरी ओर से निकल भागा। एक मु फिर पानही के थर्ड क्लास से बाहर निकलकर लाइन क्रास कर रहा था—डब्बे का दरवाजा खुला था मैंने में घुसना उचित समझा झट से सामान रखकर झट से गया। साहब हाथ मलकर रह गये उन्होंने स्टेशन म से कहा—ही रेलवे अर्थात वह भग गया।

इस पर स्टेशन मास्टर बोले—सॉरी फार सर्विस ... अर्थात मुझे दुख है कि सर्वांग हाथ से निकल

इससे मैंने अनुमान लगाया कि यदि मैं पकड़ा तो बिना दंड पाये न छूटता। यह रहस्य मैं अंग्रेजों की शक्ति द्वारा मालूम कर सका।

अब मुझे पाला पड़ा पठानों और पंजाबियों से। सबके हाथों में लम्बे २ बड़े २ हुक्के थे—सारे कमरे में गुड़ गुड़ करने की आवाज गूँज रही थी—कुछ देर तक बैठने के बाद ही मेरा दम घुटने लगा—अब मुझे पता चला कि अपमान सहित सेकिंड क्लास का फर्श भी इस थर्ड क्लास से कहीं अच्छा था। पठानों की रंग विरंगी डाढ़ी और मूछों तथा पीले २ दाँतों के सामने मुझमें इतनी हिम्मत न थी कि उनसे इस विषय में कुछ कर सकता। मेरे पास बैठने के लिये दो इंच से अधिक जगह न थी—घुटनों पर अपना सामान लदा था तिस पर भी एक भले मानुस मेरे मुँह पर ही धुआँ उगल रहे थे।।

३

अब मैं लाहौर से दिल्ली जाने वाली गाड़ी में था। अम्बाला स्टेशन आते ही कोट पैंट धारी एक जैंटिल मैन मेरे डिब्बे में आ घुसे। उनकी आँखों पर चश्मा चढ़ा हुआ था। हाथ में एक सूटकेस और बिस्तर का पुलिन्दा था। हाथ में "हिन्दुस्तान टाइम्स" की एक प्रति थी। वे कुछ दूर के फ़ासिले पर दूसरी बैंच पर जाकर बैठ गये। कुछ मिनट के बाद ही गाड़ी रवाना होगई परमात्मा के अनुग्रह से इस डिब्बे में पठानों की तस्वीरें न थीं जिससे धुआँ धार नहीं होरहा था सारे कम्पार्टमेंट में केवल दो ही यू० पी०

निवासी मालूम पड़ते थे एक तो स्वयं मैं और दूसरे आगन्तुक साहब महोदय।

जैंटिलमैन ने अपना बिस्तर बैंच पर बिछा दिया और उसपर बैठकर अखबार के पन्ने उलटने लगे। गाड़ी हवा से बातें कर रही थी—डब्बे में कोई गा रहा था—कोई अन्डा रोटी उड़ा रहा था—कोई ऊँघ रहा था और कोई खर्राटे भर रहा था मैं भी अपने पैर समेटे हुए किसी प्रकार ऊँघ रहा था उस समय दिन के ११ बजे थे।

अखबार के कुछ पन्ने उलटने के बाद जैंटिलमैन को कुछ नींद आने लगी और वे भी एक ओर सिकुड़ गये।

सन्ध्या का समय था गाड़ी खड़ी थी। जैंटिलमैन ने जमुहाई लेते हुए सारे कमरे में दृष्टि दौड़ाने के बाद मेरी ओर देखते हुए बोले—आप कहाँ जा रहे हैं?

मैं—कलकत्ता जाने का विचार है।

जैंटिलमैन—क्या आप कलकत्ते में रहते हैं।

मैं—नहीं मैं कार्य्य वश वहाँ जा रहा हूँ।

जैंटिलमैन—आप रहते कहाँ हैं?

मैं—मेरा घर तो गुरजे में है किन्तु इस समय मुलतान में रहता हूँ।

जैंटिलमैन—अच्छा मुलतान क्या वहाँ आप नौकर हैं?

मैं—बिना नौकरी किये कहाँ ठिकाना है

जैंटिलमैन—आप ब्राह्मण हैं।

मैं—नहीं भाई कायस्थ हूँ।

इसी प्रकार उन्होंने कितने ही प्रश्न किये किन्तु मैं उत्तर देने में आवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग न करता था "थोड़ा बोलना और थोड़ा खाना" परदेश और यात्रा के समय यह मेरा अपना सिद्धान्त था। अपना नाम पता भी किसी को ठीक २ बता देना मैं उचित नहीं समझता था इससे क्या लाभ है उसे में ही जानता हूँ।

जैंटिलमैन ने घड़ी निकालकर देखा उसमें साढ़े पाँच बजे थे—मेरी ओर देखकर बोले—यहाँ पानी मिल जायगा ? भूख लग रही है खाना हो खा लेता।

मैंने कहा—तलाश करिये—क्या नहीं मिल सकता।

पूछने पर मालूम हुआ कि वहाँ पानी का अच्छा प्रबन्ध था।

एक खोंचावाला चिल्ला रहा था "हिन्दू-पूड़ियाँ मठाइयाँ दही भल्ले सेव नमकीन मसालेदार।" उसे बुला कर उन्होंने पाव भर पूड़ी, कुछ मिटाई और एक पैसे के दही भल्ले (बड़े) ले कर अन्दर आ घुसे। और बिना जल का प्रबन्ध किये ही खाद्य पदार्थ साफ करने लगे। कुछ ही मिनट में खाली पत्ते रह गये उन्हें चाटते पोंछते हुए खिड़की से बाहर मुँह निकाल कर पुकारा, ओ पानी वाला, ओ पानी वाला।

इसी बीच में गाड़ी सीटी देकर चल पड़ी, पानी वाला बिल्कुल समीप आगया था किन्तु जैंटिलमैन के पास कोई

लोटा या गिलास मौजूद न था कि जिस में किसी प्रकार पानी भर दिया जाता। उनके हाथ से पत्ते भी गिर चुके थे अब वे केवल उँगलियाँ चाटते रह गये।

रास्ते में पानी के नाम पर एक बूंद भी न मिली, जब गाड़ी दिल्ली के प्लेटफार्म पर आकर खड़ी हुई तो अपना सामान उठा कर वे सब से पहिले नल की ओर भागे। कलकत्ता जाने वाली गाड़ी तैयार थी, मैं अपना सामान उठा कर चल पड़ा, इस यात्रा में मुझे फिर वे जैंटिलमैन न दिखाई पड़े, पानी न मिलने से वे बुरी तरह झेंप गये थे। इसी से कहीं दूसरी जगह जा छिपे होंगे।

सारी रात बीतने के बाद दूसरे दिन ९ बजे मैं खागा स्टेशन पर उतरा। मेरे ससुर-देव की कृपा से एक बैलगाड़ी मेरा रास्ता देख रही थी। गाड़ीवान मुझे पहचानता था उसने मुझे देखते ही पुकारा—"पाँडे महाराज, लढ़िया ठाढ़ी है चलौ बइठउ चलैं।"

मैंने उसकी ओर देख कर कहा—"अच्छा महतिया अभी चलता हूं जरा हाथ मुँह धो लूँ।

गाड़ीवान ने कहा—"बहुत नीक" और वह मेरा सामान उठा कर गाड़ी में लेगया।

ससुराल जाने का मेरा यह पहला मौका न था परमात्मा की कृपा से कम से कम आठ मरतबा तो जरूर ही गया हूँगा किन्तु तब भी मैं अपना फैशन बनाने में न चूका।

अभी तक जो कपड़े मेरे शरीर पर थे प्रायः सभी मामूली थे कोई रुआब वाले न थे दूसरे रास्ते की गर्द से मैले भी होचुके थे, अतएव स्नानादि करने के बाद सूट-केस से मोजे, नेकर और एक खाकी कमीज निकाल कर पहिन ने लगा।

गाड़ीवान ने मेरी ओर देख विस्मित होकर कहा—अब तौ तुम पूरे सहिबै जानि परन लाग्यो।

मैंने अपने पुराने कपड़े लपेटते हुए कहा—मैं हमेशा इसी पोशाक में रहता हूं, यह कपड़े तो मैं रात को पहनता हूं।

गाड़ीवान—अच्छा अब समझि परा मईल बहुत हैं यहीतेरे राति कइहां पहिरति हौ दिन का तौ पूरे बाबू होइ जाति हौ।

मैंने लापरवाही से कहा—अच्छा चलो गाड़ी हाँको।

बड़ी मुश्किल से कच्ची पक्की धूल फांकते हुए मैं असनी में प्रविष्ट हुआ। एक कुयें पर कुछ स्त्रियां पानी भर रही थीं वे सब घबड़ा कर मेरी ओर ताकने लगीं।

एक ने कहा दारोगा साहब हैं।

दूसरी ने कहा—ऐसा ही जान पड़ता है।

तीसरी ने मेरी ओर जरा गौर करके देखा और वह उन से कहने लगी—अरे नहीं बहिनी—रामदीन बाजपेयी का दामाद है। क्या मैं पहिचानती नहीं हूं—कपड़े चाहे जैसे पहिन कर आवें शकल तो नहीं छिप सकती।

इस पर सब आश्चर्य से चिल्ला उठीं—अच्छा तो यह "मिठाना" का भर्तार है।

उसी तीसरी ने कहा—और नहीं तो क्या यही तो है जो गांव भर में नंगा फिरा करता था।

मैं लज्जा से गड़ा जारहा था—किन्तु करता क्या? चुपचाप अपना मुँह दूसरी ओर फेरे अपने कान उनकी ओर पड़ा रहा था। गाड़ी सामने बढ़ रही थी।

थोड़ी देर में गांव के छोटे २ बच्चे चिल्लाने लगे जीजा, आगये, जीजा आगये। कोई गाड़ी पर चढ़ आया कोई पैंजनी पर चढ़ गया, कोई मेरा सूट-केस खोलने लगा और जो बाकी रह गया था वह गाड़ी के पीछे २ चल पड़ा। उस समय सभी चिल्ला रहे थे कि जीजा आगये, जीजा आगये। मानो मैं सारे गांव का जीजा था।

४

मालूम पड़ता है कि परमात्मा ने ससुराल का उद्घाटन खूब निश्चिन्तता के समय किया है। अमीर और गरीब सभी ससुराल में पहुंच कर त्रिलोकी के अधिपति होजाते हैं। ससुराल में बच्चे से लगा कर बुड्ढे तक सभी हुकुम बजाने को तैयार रहते हैं। केवल मुँह से कहने की देर होती है। ससुर की लड़की पर तो पूरे सोलह आने अधिकार रहता है इसके अतिरिक्त छोटी सालों, बड़ी सालों और सरहज पर भी लोग खुले मैदान हमला करते रहते हैं। हँसी मज़ाक तो बायें हाथ का खेल है। कभी २ ससुर दामाद भी साथ में मनोरंजन के अभिप्राय से इसका स्वाद लेते हैं।

सारांश यह है कि ससुराल का दूसरा नाम आनन्दसार भी है। बढ़िया भोजन, बढ़िया सवारी, बढ़िया कमरा, बढ़िया चारपाई, बढ़िया बिछौना, बढ़िया आदमी, इत्यादि कहाँ तक गिनायें सब बढ़िया ही बढ़िया सर्वदा मिलता रहता है। इस असार संसार में जिसने कभी ससुराल के दर्शन नहीं किये उसका जन्म ही वृथा समझना चाहिये। ससुराल की प्रत्येक वस्तु पर दामाद का ईश्वर प्रदत्त अधिकार रहता है गेह—जन—धन—मन और धन आदि सारे पदार्थ दामाद देवता के चरण कमलों पर लोटा करते हैं। चारों ओर आराम ही आराम दिखाई पड़ता है जिन्होंने साबुन कभी आंखों से भी न देखा होगा यहाँ पहुँचकर "सनलाइट" की सारी बट्टी घिस डालते हैं—जिन्हें स्वप्न में मिट्टी तक का तेल नहीं नसीब होता—यहाँ कामिनिया आइल" की सारी शीशी सोख जाते हैं—जिन्होंने इत्र का नाम भी नहीं सुना है उनका यहाँ "ओटो मोहिनी" और "लेवेन्डर" बिना काम ही नहीं चलता। घर में टाट का एक टुकड़ा लपेटे रहते हैं किन्तु ससुराल में बढ़िया रेशमी पाड़ की धोती, सम्भवतः वो किसी से माँग लाते होंगे, चुनियाये फिरते हैं। शकल सूरत भूत की सी होने पर भी बिना आइना सामने रक्खे चैन नहीं पड़ता सुअर के से बाल होने पर भी लोग बिना कंघा दौड़ाये नहीं मानते। मकई की घनधी और नमक चबाने वाले यहाँ नाना प्रकार के व्यंजन देख कर कदाचित

प्रगट करते हुए भोजन करते हैं। ढाई सेर पक्का
वाले लोग यहाँ दो छटांक से अधिक नहीं खाते।
की अपेक्षा रात को अंधेरे में डेढ़ पाव तक मात्रा
हैं। जिन्हें स्वप्न में भी घी दूध के दर्शन नहीं होते
पर इसको क़दर जल से अधिक नहीं करते।
परोसी हुई प्रत्येक वस्तु को धीरे २ केवल दो उँ
ही चाटते रहते हैं। घर में मिट्टी के सकोले में हैं
हैं, किन्तु यहाँ बिना गिलास के एक घूंट भी :
सकते। पाटा बिना चौके में तो बैठना ही कठिन
है। भोजन के पश्चात् नौकर की पुकार होती है
ला कर हाथ मुंह धुलाता है यद्यपि आप स्वयं
में दूसरी जगह नौकर हैं। बिना पान खाये
भी चैन नहीं पड़ता—जी मिचलाने लगता है
पान विशसादि मसाले बिना तो पान में जाय
आता चाहे घर में पीपल का पत्ता तक न रि
घड़ी २ पर नौकर की पुकार होती है—प्या
अधिक रहती है। ताश, शतरंज और नींद
काटने के साधन हैं। शाम को दो-चार फल
आवश्यक समझा जाता है उस समय पर दामाद
चाल राज-हंसिनियों को भी हरा देती है। प्रातः
शय्या त्याग करने से लोग गँवार समझते
भले ही चार बजे तड़के हल लेकर खेत पर जा

यह सब ससुराल की दिन-चर्य्या है। सखी सहेलियों से रास-रङ्ग करने का वर्णन यहाँ पर करना उचित नहीं जान पड़ता। मेरा तो अनुभव है कि ऐसा सुख न तो स्वर्ग में ही मिल सकता है और न याग में ही। ससुराल का सुख देवता ही भोगते हैं जिनको कर्म-रेखा उलट गई है वही जटायें बढ़ाकर कन्दराओं में घुसे रहते हैं, यदि उन्हें इस सुख का पता लग जाय तो बहुत सम्भव है कि वे अपना दंड कमंडल फेंक कर बिना किसी को ससुर बनाये चैन नहीं ले सकते।

जो हो—मैं ससुराल पहुँच गया—लोगों ने हाथों हाथ लिया खातिरदारी की बारिश होने लगी, बिना पैसा कौड़ी खर्च किये इस सुख का अनुभव करके मैं अपने को किसी देवता से कम नहीं समझता था।

५

मेरी छोटी साली कुसुम का विवाह था। जहांगीराबाद के तिवारियों के यहाँ से बारात आने वाली थी। लग्न भौतादि सब कुछ हो चुका था सारी दामाद-पार्टी मेरे पहिले से ही वहाँ पर एकत्र हो चुकी थी। एक उन्नू के सुकुल थे, दूसरे सुरादाबादी मिसिर, तीसरे पटरका के अवस्थी, चौथे कानपुर में रहने वाले श्रीकान्त के दीक्षित, और पाँचवाँ मैं खोरका पांडे था। इस प्रकार उस घर में पूरे पांच पाण्डव एकत्र थे और घर की प्रत्येक वस्तु पर अपना २ हक जमा

रहे थे। सब की धर्मपत्नियाँ भी यहां मौजूद थीं, कोई महीना भर से पहिले आई थी, कोई ८ दिन से और किसी को दो दिन बीते थे केवल मेरी धर्मपत्नी का नम्बर सबसे बड़ा था वे दो वर्ष पहिले से ही विराज रही थीं।

परमात्मा की कृपा से मेरे ससुर बहुत बड़े जमींदार थे उनके ६ लड़कियां थीं और २ लड़के। सब से छोटी लड़की का नाम कुसुम था जिसके शुभ कार्य्य में यह सब जमघट हुआ था। मेरा विवाह क्रमानुसार पांचवीं नम्बर की कन्या से हुआ था और छठी का नम्बर था जहांगीराबाद में। सारांश यह है कि उन प्रस्तुत दामादों में मैं सबसे छोटा था किन्तु भाग्य के जोर से अब कुछ दिनों में मेरा दरजा बढ़ने वाला था। गुरुकुलजी आयु और श्रेणी में सबसे अधिक बड़े थे और इसलिये उन्हें शेष चार साथियों से हँसी ठट्ठा करना तो दूर रहा बातचीत करने में भी कष्ट होता था। वे सर्वदा अपनी खिचड़ी अलग ही पकाना पसन्द करते थे। हम चारों साथी प्रायः एक ही विचार के थे और जो प्रस्ताव सामने आ जाता उसे एक स्वर से पास कर देते थे। हमारा विचार था कनौजिया पार्टी की कुरीतियों को तोड़ना। जिन बातों से हानि के अतिरिक्त और कुछ न था उन्हें दूर कर देना ही अपना परम कर्तव्य समझते थे। गुरुकुल जी इन बातों से सहमत न थे और वे अलग ही ऐंठे रहते थे।

उस दिन ठीक दो बजे दिन को सब लोग ओ३म करने

के लिये बुलाये गये--सारे आँगन में आटे से खड़ी २ लम्बी रेखायें खिंची थीं और प्रत्येक दो रेखाओं के बीच में एक एक गज की दूरी से खड़ी लकीरें खींची गई थीं।। जो लगभग १ गज लम्बा और एक गज चौड़ा आकार घरकर पूरे चतुर्भुज के रूप में परिणित थीं। इस प्रकार इन सब चतुर-भुजों की संख्या ३५ के उपर पहुँच गई थी प्रत्येक के अन्दर एक एक पाटा पड़ा हुआ था और समीप ही लोटों में पानी रक्खा था। रसोई के समीप वाले ५ चतुरभुजों में एक विशेषता और थी लोटे के पास ही एक एक गिलास भी विद्यमान था।

"सहस्र शीर्षाः पुरुषाः सहस्राक्षः सहस्र पात" होने लगा पैर धोने के अनन्तर हमलोग नम्बर से अपने २ चतुरभुजों के दायरे के अन्दर प्रविष्ट हुए। रसोई के अन्दर सुकुल जी की सुकुलाइन रोटियाँ चुपड़ रही थीं—मिसर जी की मिस-राइन बड़े परोस रही थीं--अवस्थीजी की अवस्थाइन भात उड़ेल रही थीं--दीक्षित जी की दीक्षिताइन दाल डाल रही थीं—और मेरी धर्मपत्नी उर्फ पंड़ाइन रसाउँ निकाल रही थीं। इसके अतिरिक्त चार पाँच स्त्रियाँ और थीं किन्तु उनके उल्लेख करने की कुछ आवश्यकता नहीं है।

मुझे पंजाब की हवा लग चुकी थी--कनौजियों का यह ढोंग मेरी समझ में न आया—एक ओर रसोई घर में सब घर इकट्ठा थे और दूसरी ओर खाने के लिये अलग २ चतुरभुजों

मुझे ही कह रहे हो—मेरा चौका तो कोई देखता नहीं जिसे मिसिर जी ने भ्रष्ट कर डाला।

लोगों ने देखा कि पाँचों चौके एक रूप में हो चुके थे और सुकुल जी का लोटा मिसिर जी के चौके में कूद पड़ा था।

घर के सभी बड़े बूढ़े नाराज होगये—नवयुवक प्रसन्न थे स्त्रियाँ विस्मित हो रही थीं और छोटे २ बच्चे तमाशा देख रहे थे।

बूढ़े ने मिसिर जी की ओर देखकर कहा—आप ने यह क्या कर डाला ?

मिसिर जी बे हिम्मती से उठ कर बोले—मैंने क्या किया है ? जो कुछ भी मैंने किया है आप लोगों ने उसके बहुत पहिले रसोई घर में कर डाला था। देखो न सब की स्त्रियाँ यहाँ मौजूद हैं तब क्या यहाँ एक साथ बैठकर खाने में शरम लगती थी।

इस नई व्यवस्था से सबके सब चुप होगये बूढ़ों के मुँह से एक शब्द तक न निकला। सुकुल जी उस दिन सारे दिन नाराज रहे—रात को उनकी हिम्मत चौके में बैठने की न पड़ी—बड़ी मुश्किल से समझाने बुझाने पर केवल दो घूँट दूध पान किया मिसिर जी को तो वे कच्चा ही चबा जाने को तैयार थे किन्तु प्यार को देखकर हिम्मत पस्त हो गई।

मैं—अच्छा तो फिर मैं अपनी क़सम खा सकता हूँ।

इस पर उन्होंने मुझे धक्का देकर कहा—तुम चाहे पंजाब में रहो या विलायत में, असली वालों को नहीं चरा सकते अपनी आँखें फैला कर देखो यह पोस्टकार्ड मेरी जेब से तो नहीं निकला।

मैंने ग़ौर करके देखा वही हल्दी वाला पत्र सामने पड़ा था अब क्या करता? अगर कहता कि मैंने इसे नहीं पढ़ा है तो पूरा बेवकूफ़ ठहराया जाता—लाचार होकर अपनी मूर्खता पर पछताने लगा।

मेरी धर्म पत्नी ने कहा—अब उसकी सूरत क्या देख रहे हो शायद पीले रंग पर रीझ गये होंगे तभी ध्यान नहीं दिया मुझे अपनी धर्मपत्नी की इस सूझ पर मुग्ध हो जाना पड़ा साथ ही कुछ २ हँसी भी आई। यद्यपि मैंने उसे छिपाने का बड़ा प्रयत्न किया किन्तु तब भी उन्होंने ताड़ ही लिया और धीमे स्वर से कहा—भला इसमें हँसने की कौन सी बात है?

मैंने मुस्कराकर कहा—आप मानेंगी नहीं लेकिन सची बात यह है कि इसी पीले रंग की बदौलत मेरी यह दशा हो रही है।

धर्मपत्नी—पूरे बेशरम हो—इसमें क्यों हँस रहे हो—क्या कोई नई बात हो गई है निमंत्रण-पत्रों में सब पर यही रंग दिया जाता है।

मैंने कहा—जिन्दगी में मैंने सबसे पहिले इसे ही देखा है।

धर्मपत्नी—तुमने अभी देखा क्या है ? अभी
तक मुझसे और पढ़ो तब कुछ सीख सकते हो—
जाने से ही काम नहीं चल सकता।

मैंने कहा—तो इसमें छींटे देने की क्या ज़रू
क्या हल्दी नहीं भेज सकते थे ?

धर्मपत्नी—तुम हो निरे गधे—क्या दो गाँठ हल्दी
तुम मरे जा रहे थे—परदेश में हल्दी नहीं रवाना
जाती। धेले की हल्दी के वास्ते चार पैसे का खर्च कर
कहाँ की बुद्धिमत्ता है ?

मैं अपनी धर्मपत्नी की इस असाधारण बुद्धि पर मुग्ध
हो गया और उनके चरणों पर गिरकर आदि से अन्त तक
सारा क़िस्सा सुना दिया जिससे उनका क्रोध उतर गया।
अनेक विधि से प्रार्थना करने पर वे मुझ पर प्रसन्न हो गईं
और सारा विवाद सुख स्वरूप हो गया।

७

सारे घर में खलबली मची थी कि जनवासे से पूड़ी
साग आदि सब सामान वापिस कर दिया गया बाराती
लोग कह रहे हैं कि क्या हमें धाकर समझ लिया है ऐसी
रीति साढ़े ६ घरों में अभी तक नहीं हुई। घर के बड़े-बूढ़े
सब पछता रहे थे—मेरे ससुर जी कह रहे थे क्या बताऊँ
कुछ करते-धरते नहीं बनता, सब सामान खराब हो रहा है।

घर की स्त्रियों को चिन्ता हो रही थी कि अब फिर कढ़ाई चढ़ानी पड़ेगी।

इतने में एक नाई ने आकर खबर दी कि बाराती लोग बाजार से सामान मंगाने जा रहे हैं।

इस पर एक डेपूटेशन जनवासे भेजा गया कि किसी प्रकार तिवारी लोगों को समझा बुझाकर शान्त किया जाय।

हम चारों दामाद उस समय छत के ऊपर कमरे में बैठे हुए ताश खेल रहे थे—मेरी सास सामने आकर खड़ी हो गई और घबराती हुई बोलीं—भइया, तुम्हारे सबके कहने पर तरकारी में हल्दी, नमक और मसाला इत्यादि मिला दिया गया था—तिवारी लोग इससे नाराज हो रहे हैं—सब सामान वापिस आ गया है और अब वे बाजार से दाल, चावल आदि मँगाने जा रहे हैं।

ताश बन्द हो गई। मैंने कहा—साग में हल्दी, नमक और मसाला मिल जाने से क्या खराबी आ गई।

मिसिर जी बोल उठे - खराबी क्या आ गई—पूरे जानवर हैं। उबाल कर रख दिया जाता तो प्रसन्न हो जाते।

दीक्षित जी ने कहा—क्या जानें खाने की क़दर—कभी खाया हो तो समझें —हैं तो जँघोराबादी ही।

अवस्थी जी ने कहा—बस इन्हीं बातों से तो कलेजा खाक हो जाता है। गोली से उड़ा देने के क़ायिल हैं।

इतने में बाहर शुद्दराम मच गया—हम लोगों ने जाकर देखा तो मालूम हुआ कि जो डेपूटेशन समझाने के लिये भेजा गया था वह असफल हो गया जिससे सभी लोग चिन्तित हो रहे थे।

मेरे ससुर ने हम लोगों की ओर देखकर कहा—अब समझाओ जाकर उन पण्डितों को—तब तो झट से बीच में कूद पड़े थे।

हम लोगों के चेहरों पर भी उदासी छा गई किन्तु थोड़ी देर तक सोचने के बाद निश्चय किया गया कि एक बार दामाद डेपूटेशन भी प्रयत्न करले फिर देखा जायगा।

मिसिर जी सबके आगे २ चल रहे थे पीछे दीक्षित जी और फिर अवस्थी जी, मेरा नम्बर सबसे पीछे था।

जनवासे पहुँचकर सबसे पहिले हम लोगों की भेंट हुई कुछ नवयुवकों से। वे बिचारे सीधे थे, बोले—हम लोगों का इसमें जरा भी हाथ नहीं है, यह सब बड़े बूढ़ों की करतूत है।

मिसिर जी ने कहा—हाँ हम लोग उन्हीं से मिलना चाहते हैं वे हैं कहाँ ?

एक नवयुवक ने कहा—चलो मैं बता दूँ ?

सब लोग आगे बढ़े एक कोठरी में २-३ बुड्ढे बैठे हुए माला जप रहे थे उन्होंने हमें देखते ही उंगली से दूसरी ओर संकेत कर दिया।

नवयुवक ने हम लोगों की ओर देखकर कहा—"चलो वहाँ चलें।

दूसरी कोठरी में केवल एक ही बुड्ढा नजर आया वह हमें देखकर दूर ही से चिल्ला उठा, मुझे क्यों तंग करने आये हो लड़के के बाप से जाकर बात चीत करो।

नवयुवक ने पूछा—बाबा तो फिर रामप्रसाद चाचा कहाँ हैं?

बुड्ढे ने कहा—शायद बगीचे में होंगे—वहीं जाकर देखो।

जनवासे के अन्दर ही एक छोटा सा बगीचा था वहाँ पहुँच कर हम लोगों ने देखा कि एक बैंच पर कोई तिलक धारी पंडित बैठे हुए थे।

हमें अपनी ओर आते देख कर वे दूर से ही गर्ज कर बोले जाओ, लौट जाओ, क्या तुम लोगों ने मुझे कोई धा-कर समझ रक्खा है। मैं तुम्हारी सबकी चालों को खूब समझता हूँ।

तब तक हम लोग बिलकुल नजदीक पहुँच चुके थे मुझे देखते ही उनका चेहरा फीका पड़ने लगा वे कुछ सहम से गये और उनकी सारी तड़क भड़क गुम होने लगी वे अब मेरी ओर अच्छी तरह देख भी न सकते थे।

मैं उन्हें इस रूप में न पहिचान सका किन्तु वे मुझे पहिचान गये। मेरा हाथ पकड़ कर धीमे स्वर से बोले चलिये

परा आप से कुछ बातें करनी हैं। मैं अवाक् रह गया—इस प्रकार की मैत्री का ध्यान मेरी समझ में बिलकुल न आया। मेरे तीनों साथी पीछे रह गये और मैं उन महाराज के साथ बगीचे के एक ओर चल पड़ा।

एक कोने में मुझे ले जाकर वे मेरी ओर देखकर बोले मैं आपसे एक भीख माँग रहा हूँ, आशा है कि आप उसे अवश्य प्रदान करके मेरी आबरू बचावेंगे। इस समय उनका हाथ काँप रहा था। मैंने उनकी ओर ग़ौर से देखकर उन्हें पहिचानने का प्रयत्न करने लगा कुछ ही क्षण परिश्रम करने के बाद समझ में आ गया कि ये वही जैंटिलमैन हैं जो मुझे रेल में दही बड़े चाटते हुए मिले थे। इस समय वे कोट पैण्ट धारी न थे बल्कि मामूली कुरता धोती पहिने हुए थे और सारे ललाट पर चन्दन पुता हुआ था। मैं चिल्ला उठा, अच्छा पहिचान गया मैं आपको। आप वही हैं जो मुझे रेल में..............उनके हाथ ने मेरे मुँह से निकलनेवाले बाक़ी शब्द रोक लिये वे गिड़गिड़ाते हुए बोले —भाई अब उस बात को अपने मन में ही रहने दो—इस समय मेरी आबरू आपके ही आधीन है। मैं जन्म भर आपका एहसान मानूंगा।

मैंने हँसते हुए कहा तो फिर पूड़ियों के लिये आप क्या कह रहे हैं ?

उन्होंने बड़े विनीत भाव से कहा—आप सब समान

भिजवा दीजियेगा मैं किसी बात से भी इन्कार नहीं कर सकता। केवल मैं आबरू के लिये आपसे भीख माँग रहा हूँ।

मैंने कहा—अच्छा तिवारी जी, आप इस सम्बन्ध में मेरी ओर से बिलकुल चिन्ता न करें।

उन्होंने मेरे पैरों पर गिरते हुए कहा—भाई मैं आपका एहसान मानूंगा।

हम लोग जनवासे से वापस आ गये रास्ते में साथियों ने पूछा क्या जादू चला दिया?

मैंने हँसकर उत्तर दिया—अरे यह तो मेरे मित्र निकल आये।

ससुरालवाले सब मेरी भूरि २ प्रशंसा करने लगे। सब सामान जनवासे भेज दिया गया—कुसुम का विवाह भी खूब धूम-धाम से प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न हो गया किसी ने चूं तक नहीं किया। सभी ओर मेरी धूम मच रही थी। मेरी धर्मपत्नी भी चक्कर में आ गई। अब वे मुझे अधिक श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखने लगीं—सास ससुर तो मुझे जादूगर समझ रहे थे।

८

बारात विदा होने के दूसरे ही दिन सुकुल जी अपनी सुकुलाइन को साथ लेकर ऊगू के लिये रवाना हो गये। चलते समय हम लोगों ने उन्हें नमस्कार भी किया, किन्तु वे इसके बदले में हम लोगों को घूरते हुए चले गये। मिसिर जी पर तो उनकी गृद्ध-दृष्टि लगी थी। मिसिर जी ने मेरी ओर देखकर कहा, पांडेजी इनका भी इलाज ढूंढना चाहिये।

मैंने कहा—मिसिर जी यह काम आपके सुपुर्द है क्योंकि मेरा तो रहना पंजाब में होता है।

मिसिर जी ने कहा—अच्छी बात है, कोशिश करूंगा।

मैंने कहा—अगर कोशिश करोगे तो मेरा अनुभव है कि परमात्मा की कृपा से सफलता भी मिल जावेगी।

मिसिर जी बोले—सो तो मुझे भी विश्वास है।

मुलतान आये हुए मुझे दो ही महीने बीते होंगे कि एक दिन मुझे एक मिसिर जी का इस प्रकार का पत्र मिला:—

श्री कानपुर, पुरी मुहाल।

ता० १०-५-३८

प्रिय पाण्डेय जी नमस्कार।

जो काम मेरे सुपुर्द किया गया था परमात्मा की कृपा से उसमें कल मुझे पूरी २ सफलता मिल गई। बात यह है कि मैंने ४ बोतल [illegible] [illegible] होटल के मैनेजर को

भेजा था उसका मूल्य मुझे नहीं मिला था और उसे लेने के लिये मैं स्वयं कल रात को १० बजे अपना औषधालय बंद करके वहाँ गया। उस समय होटल में पूरी चहल पहल हो रही थी—चपरासी से पूछने पर पता चला कि मैनेजर साहब १६ नम्बर के कमरे में हैं। मित्रता के भाव से मैं बेरटके अन्दर घुसगया वहाँ देखा कि पूरा जमघट लगा था। कुछ वेश्यायें और दो तीन भले मर्द एक मेज के चारों ओर घिरे बैठे थे और सभी भोजन की तश्तरियों पर हाथ चला रहे थे। मैनेजर साहब वहाँ बिजली की रोशनी का समुचित प्रबन्ध करा रहे थे। थोड़ी देर के लिये

८

बारात विदा होने के दूसरे ही दिन सुकुल जी अपनी सुकुलाइन को साथ लेकर ऊगू के लिये रवाना हो गये। चलते समय हम लोगों ने उन्हें नमस्कार भी किया, किन्तु वे इसके बदले में हम लोगों को घूरते हुए चले गये। मिसिर जी पर तो उनकी गृद्ध-दृष्टि लगी थी। मिसिर जीने मेरी ओर देखकर कहा, पांडेजी इनका भी इलाज ढूंढ़ना चाहिये।

मैंने कहा—मिसिर जी यह काम आपके सुपुर्द है क्योंकि मेरा तो रहना पंजाब में होता है।

मिसिर जी ने कहा—अच्छी बात है, कोशिश करूंगा।

मैंने कहा—अगर कोशिश करोगे तो मेरा अनुभव है कि परमात्मा की कृपा से सफलता भी मिल जावेगी।

मिसिर जी बोले—सो तो मुझे भी विश्वास है।

मुलतान आये हुए मुझे दो ही महीने बीते होंगे कि एक दिन मुझे एक मिसिर जी का इस प्रकार का पत्र मिलाः—

श्री कानपुर, चूड़ी मुहाल।
ता० १०-५-२८

प्रिय पाण्डेय जी नमस्कार।

जो काम मेरे सुपुर्द किया गया था परमात्मा की कृपा से उसमें कल मुझे पूरी २ सफलता मिल गई। बात यह है कि मैंने ४ बोतल द्राक्षासव कृष्णा होटल के मैनेजर को

मेजा था उसका मूल्य मुझे नहीं मिला था और उसे लेने के लिये मैं स्वयं कल रात को १० बजे अपना औषधालय बंद करके वहाँ गया। उस समय होटल में पूरी चहल पहल हो रही थी—चपरासी से पूछने पर पता चला कि मैनेजर साहब १६ नम्बर के कमरे में हैं। मित्रता के भाव से मैं बेरटके अन्दर घुसगया वहाँ देखा कि पूरा जमघट लगा था। कुछ वेश्यायें और दो तीन भन चले मर्द एक मेज के चारों ओर घिरे बैठे थे और सभी भोजन की तश्तरियों पर हाथ चला रहे थे। मैनेजर साहब वहाँ बिजली की रोशनी का समुचित प्रबन्ध करा रहे थे। थोड़ी देर के लिये मेरी दृष्टि वेश्याओं पर हो गई। एक खद्दर धारी सज्जन उनसे हँस २ कर बातें कर रहे थे। मैं उन्हें देखते ही पहिचान गया और वे भी मुझे ताड़ गये—उनकी हंसी में कुछ उदासी का भाव आ गया और अपनी गरदन नीचे करके शायद जूतों की ओर देखने लगे।

एक वेश्या ने कहा—बाबू गुम्म क्यों होगये ?

खद्दर धारी ने कहा—जरा जूते देख रहा हूँ।

वेश्या—बाबू सामने ही तो पड़े हैं।

खद्दरधारी—जरा उलट गये थे उन्हें ही ठीक कर रहा हूँ।

मैनेजर साहब ने मुझे देखते ही कहा—वैद्यजी अपराध क्षमा हो—मुझे आप का बिल चुकाने में विलम्ब हो गया।

मैंने उनका दहिना हाथ पकड़कर कहा—नहीं—मैं तो

८

बारात विदा होने के दूसरे ही दिन सुकुल जी अपनी सुकुलाइन को साथ लेकर ऊगू के लिये रवाना हो गये। चलते समय हम लोगों ने उन्हें नमस्कार भी किया, किन्तु वे इसके बदले में हम लोगों को घूरते हुए चले गये। मिसिर जी पर तो उनकी गृद्ध-दृष्टि लगी थी। मिसिर जीने मेरी ओर देखकर कहा, पांडेजी इनका भी इलाज ढूंढ़ना चाहिये।

मैंने कहा—मिसिर जी यह काम आपके सुपुर्द है क्योंकि मेरा तो रहना पंजाब में होता है।

मिसिर जी ने कहा—अच्छी बात है, कोशिश करूंगा।

मैंने कहा—अगर कोशिश करोगे तो मेरा अनुभव है कि परमात्मा की कृपा से सफलता भी मिल जावेगी।

मिसिर जी बोले—सो तो मुझे भी विश्वास है।

मुलतान आये हुए मुझे दो ही महीने बीते होंगे कि एक दिन मुझे उक्त मिसिर जी का इस प्रकार का पत्र मिला:—

श्री कानपुर, चूड़ी मुहाल।
ता० १०-५-२८

प्रिय पाण्डेय जी नमस्कार।

जो काम मेरे सुपुर्द किया गया था परमात्मा की कृपा से उसमें कल मुझे पूरी २ सफलता मिल गई। बात यह है कि मैंने ४ बोतल द्राक्षासव कृष्णा होटल के मैनेजर को

भेजा था उसका मूल्य मुझे नहीं मिला था और उसे लेने के लिये मैं स्वयं कल रात को १० बजे अपना औषधालय बंद करके वहाँ गया। उस समय होटल में पूरी चहल पहल हो रही थी—चपरासी से पूछने पर पता चला कि मैनेजर साहब १६ नम्बर के कमरे में हैं। मित्रता के भाव से मैं बेराटके अन्दर घुसगया वहाँ देखा कि पूरा जमघट लगा था। कुछ वेश्यायें और दो तीन मन चले मर्द एक मेज के चारों ओर घिरे बैठे थे और सभी भोजन की तश्तरियों पर हाथ चला रहे थे। मैनेजर साहब वहाँ बिजली की रोशनी का समुचित प्रबन्ध करा रहे थे। थोड़ी देर के लिये मेरी दृष्टि वेश्याओं पर हो गई। एक खद्दर धारी सज्जन उनसे हँस २ कर बातें कर रहे थे। मैं उन्हें देखते ही पहिचान गया और वे भी मुझे ताड़ गये—उनकी हंसी में कुछ उदासी का भाव आ गया और अपनी गरदन नीचे करके शायद जूतों की ओर देखने लगे।

एक वेश्या ने कहा—बाबू सुस्त क्यों होगये ?
खद्दर धारी ने कहा—जरा जूते देख रहा हूँ।
वेश्या—बाबू सामने ही तो पड़े हैं।

खद्दरधारी—जरा उलट गये थे उन्हें ही ठीक कर रहा हूँ।
मैनेजर साहब ने मुझे देखते ही कहा—वैद्यजी अपराध क्षमा हो—मुझे आप का बिल चुकाने में विलम्ब हो गया।
मैंने उनका दहिना हाथ पकड़कर कहा—नहीं—मैं तो

ंयम आप के दर्शन करने आगया था—शुक जा
उन्हें क्या है।

मैनेजर साहब ने मुस्कराते हुए कहा—चा
में चलें।

मैंने उनसे धीरे से कहा—आप चलें मैं कम

मैनेजर साहब ने पूछा—क्या कोई चिि
आगई ?

मैंने कहा—हाँ।

वे चलेगये—खद्दरधारी महात्माका मस्त
झुका हुआ था मैं अब उनके पास ही पहुँच गय
जी महाराज की मूर्ति थी। मैंने उनको पीठ पर
कर कहा—कहो सुकुल जी—चौका कहाँ है ?

उन्होंने मेरी ओर आँख तक नहीं उठाई-
भी उन्हें अधिक तंग करने का न था अतएव !
-कर वहाँ से चला आया।"

हितेच्छु :—
चिकित्सक मृ

विधवा की आत्म-कथा

१

मैं कब विधवा हुई थी, ठीक याद नहीं है। किन्तु इतना अवश्य जानती हूँ कि जब मेरी अवस्था ६ वर्ष की थी—एक दिन अपनी मां के पास बैठी हुई गुड़ियाँ खेल रही थी। गाँव की बूढ़ी मनिहारिन रंग-बिरंगी चूड़ियों की टोकरी लिये हुए आई और माँ को चूड़ियां पहिनाने लगी। मैं भी टोकरी के पास खिसक गई और उन रंगीन चूड़ियों को देख कर मेरा मन ललचाने लगा। आखिर जी न माना मैंने मां का हाथ पकड़कर कहा—"अम्मा मैं भी पहिनूंगी"। मां ने कुछ रुंधे स्वर से उत्तर दिया "बेटी तेरे नाप की चूड़ियां मनिहारिन दीदी आज नहीं लाई है—कल तुझे मंगा दूंगी। मैंने अपने चंचल स्वभाव वश टोकरी में हाथ डालकर दो तीन चूड़ियां बाहर निकालकर मां को दिखाते हुए कहा "ये हैं तो इस टोकरी में—मुझे यही पहिना दो यही अच्छी हैं मैं कल नहीं पहिनूंगी।" मां ने मुझे समझाने का प्रयत्न करते हुए कहा देख बेटी—आज रहने दे कल तुझे जापानी

चूड़ी मंगा दूँगी ये तो गांव की बनी हुई हैं इनमें क्या धरा है ? यह तो सस्ती हैं। मैं अब अधिक अनुरोध न कर सकी मां की बात पर पूरा २ विश्वास करके उस दिन शान्त हो गई। मनिहारिन चली गई। मैंने दूसरे दिन मां का ध्यान फिर चूड़ियों की ओर आकर्षित किया किन्तु उस दिन भी उन्होंने किसी प्रकार टाल दिया। धीरे २ एक सप्ताह निकल गया—और आखिर क्या, गांव की देसी चूड़ियां भी मुझे नसीब न हो सकीं। जब मैंने रोना पीटना आरम्भ किया तब उन्होंने मुझे अपनी छाती से लगाकर समझाया—बेटी—तू विधवा है इसलिये तुझे चूड़ियां नहीं पहिननी चाहिये। मैंने कहा तो फिर तुम क्यों पहिने हुए हो। तुम भी न पहिनो।" इस पर उन्होंने कहा—मेरी पगली बिटिया जिसके साथ तेरा विवाह हुआ था वह चल बसा—अब तू विधवा है इसी लिये चूड़ियां नहीं पहिन सकती। बस उसी दिन से मैंने याद कर लिया कि मैं विधवा हूँ—सारे गांव में जहां कहीं भी मैं खेलती घूमती सबसे यही कहती फिरती कि मैं विधवा हूँ इससे साथ के खेलने वाले मुझे इसी नाम से पुकारने लगगये यद्यपि इस शब्द का अर्थ न मेरी ही समझ में आया और न उन खेलने वालों की।

...के कुछ दिन इसी प्रकार बीते—अब मेरी अवस्था अपेक्षा कुछ अधिक बढ़ गई थी इससे पड़ोस गिने हुए घरों के अतिरिक्त और किसी जगह

जाने के लिये सख्त मुमानियत कर दी गई। जो भी मुझे देखता अपनी आँखों में आँसू भर लाता। मैंने अपनी माँ से इसका कारण पूछा तो उन्होंने स्वयं आंसू भर लिये। मुझे गले से लगाकर फूट फूट कर रोने लगीं—माँ को रोता हुआ देखकर मेरा भी हृदय द्रवित हो गया और मैं भी अपने नेत्रों से धारायें गिराने लगी। धीरे २ आयु के दस साल निकल गये अब मैं अपने घर से बाहर भी न निकल सकती थी। द्वार पर खड़ा होना भी पाप था। ऐसी अवस्था में घर के काम-काज और पढ़ने लिखने में ही दिन का अधिकांश भाग व्यतीत होने लगा।

घर में माता पिता और दो छोटे भाइयों के अतिरिक्त और कोई न था इसलिये जो दुःख और आपदायें एक विधवा को हिन्दू के घर में विशेषतः कान्य कुब्ज समाज में उठानी पड़ती हैं उनका सामना मुझे न करना पड़ा। मेरे पिता गाँव की पाठशाला में पढ़ाते थे इसलिये उस समय के अनुसार अच्छी आय हो जाती थी—दूध—दही—मटाई—लकड़ी—तरकारी इत्यादि पदार्थ देहात के गरीब विद्यार्थी अपने २ घरों से नित्य प्रति लाया करते थे जिस से पड़ोस के और घरों की अपेक्षा मेरे यहाँ खाने पीने में अधिक आराम था। उस दिन कहीं से एक पत्र आया था जिसके सम्बन्ध में मेरे माता पिता आपस में कुछ परामर्श कर रहे थे। माता ने कहा "मैं तो लड़की को भेजना उचित नहीं

समझती वहाँ कौन बैठा है जो इसकी हिफ़ाजत करेगा? इस पर पिता जी बोले - यह क्या कहती हो तुम। आखिर वे भी कोई दूसरे नहीं हैं जैसे मैं विमला को अपनी लड़की समझता हूँ वैसे ही वह उनके लिये भी है। वह घर भी तो इनका ही है—क्या किया जाय अपनी तक़दीर ही खोटी निकल गई नहीं तो यह कभी वहाँ चली गई होती। इसपर अब हमारा अधिकार ही क्या है? माँ ने कहा जैसा तुम समझो लेकिन वहाँ घर में अकेले कैसे रहेगी? पिता ने कहा अकेले कैसे है—परमात्मा की कृपा से चाचा—भाई—भौजाई आदि सभी मौजूद हैं रोटी पानी अलग २ करने से क्या हो गया? मेरी मां चुप हो गई और मुझे विदा करने की तैयारियां करने लगीं। उन्होंने मुझसे कहा—बेटी, आज मैं तेरे जीवन की सारी कहानी तुझे समझा रही हूँ—अब तू छोटी नहीं है—प्रत्येक बात को अच्छी तरह याद रखना तेरा विवाह ददहा में पं० जगदम्बाप्रसाद बाजपेयी के लड़के के साथ हुआ था—उस समय तुम दोनों की अवस्था ३ वर्ष से अधिक न थी। बाजपेयी जी की संतान जीवित नहीं रहती थीं इसलिये किसी ज्योतिषी के यह बतलाने पर कि अल्पायु में विवाह संस्कार हो जाने से चिरायु प्राप्त हो सकती है तेरा विवाह उसके साथ कर दिया गया। उनका अपना पुराना सम्बन्ध था अतएव नाहीं न की जा सकी। किन्तु भगवान की इच्छा प्रबल है विवाह के कुछ ही महीने

बाद वह तुम्हें छोड़कर संसार से विदा हो गया। तब से तुम पति हीन हो गई हो। तेरी ससुराल में तेरे ससुर के सिवाय और कोई तेरा सगा नहीं है वे भी अब काफी बुड्ढे हो गये हैं—आयु ५० वर्ष से अधिक हो चुकी है—रोटी पानी करने में उन्हें कष्ट होता है इसलिये तुझे बुलाने के लिये लिखा है। यद्यपि मेरी इच्छा तुझे भेजने की नहीं है किन्तु लाचार होकर ऐसा करना पड़ रहा है। वहां खूब सावधानी से रहना अगर कोई कष्ट हो तो मुझे सूचित करना वैसा प्रबन्ध किया जायगा। दूसरी बात यह है कि अपने ससुर की सेवा का ध्यान रखना उन्हें कष्ट न मिलने पावे—संसार में यही तेरा एक मात्र कर्तव्य शेष रह गया है—इसी में तेरा कल्याण होगा।

२

जिस समय मैं पेथर से रवाना हुई मेरी मां फूट २ कर रो रही थी—मेरे हृदय में भी किसी प्रकार का हुलास न था—जो आकांक्षायें एक नव-विवाहित लड़की अपने वक्ष-स्थल में दबाकर ससुराल को विदा होती है—उसका वहां अणुमात्र भी पता न था—मैं तो रोटी करने के लिये भेजी जा रही थी। यद्यपि मेरे शरीर का चाहने वाला अब संसार में न था किन्तु प्रमोहि समाज मुझ पर रहम कैसे करता उसे तो विधवा के प्राण निकल जाने पर ही शान्ति मिल सकती है। मुझे लिवा जाने के लिये मेरे ससुर एक बैलगाड़ी लाये थे

रोने धोने के बाद किसी प्रकार उसके अन्दर जाकर मैं एक ओर चुपके से बैठ गई। उस समय मचलना, गाड़ी से कूदने का प्रयत्न करना, और फूट २ कर रोना आदि सब निरर्थक समझ जा रहा था क्योंकि गाँववाले विधवा होने का सारा दोष मेरे ही मत्थे मढ़ रहे थे। लोग मुझे ही पति की मृत्यु का कारण बतला रहे थे। ससुर जी को दमा की बीमारी थी अतएव रास्ते भर उन्हें खांसते ही बीता— कोई क्षण ऐसा न था जिसमें वे हू हू हू हू न करते रहे हों। पहिले पहिल इस हू हू शब्द से मुझे बड़ा भय प्राप्त हुआ किन्तु जब वे मुझे बिटिया बिटिया कहकर सम्बोधन करने लगे तब कहीं जाकर चित्त को शान्ति प्राप्त हुई। किसी प्रकार गाड़ी हड़हा पहुँच गई और एक बार मुझे फिर मकान के अन्दर घुसना पड़ा। जीवन के १५ वर्ष बाद मुझे आज ही एक गाँव से दूसरे गाँव में जाने का अवसर मिला था इसलिये रास्ते के सारे जल-थल, वन, वृक्ष, तालाब, मकान और पशु पक्षी आदि आश्चर्ययुक्त जान पड़ते थे। मकान के अन्दर एक छोटी सी कोठरी थी और उसके बाहर एक छप्पर पड़ा था आगे छोटा सा आँगन था जिसके एक कोने में एक कुआँ और एक तुलसी का वृक्ष था। एक ओर कुछ लकड़ियाँ और कण्डे आदि पड़े थे। एक तरफ एक चारपाई पड़ी थी। कोठरी में एक पुरानी चटाई बिछी थी उसी पर जाकर मैं बैठ गई। थोड़ी देर में [illegible]

पास पड़ोस की कुछ लड़कियां आ गईं जिनसे बात-चीत करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एक लड़की जिसकी उम्र सात वर्ष के लगभग होगी मुझे चाची चाची कहकर पुकार रही थी जिससे मैं थोड़ी देर के लिये हैरान हो गई—मुझे स्वप्न में भी पता न था कि मैं भी किसी की चाची हूँ। मुझे तो पति के दर्शन तक न मिले थे फिर चाची कहाँ से हो गई। मेरे ससुर बड़े आग्रह से पानी मिठाई से मेरा सत्कार करके बोले देख ले बिटिया यही तेरा घर है तुझे अब यहीं रहना होगा। क्या बताऊँ नहीं तो मुझे आज कुछ दूसरा ही दिन दिखाई पड़ता लेकिन तक़दीर खोटी निकल गई तुम्हारा भी गला फँसा दिया। इतना कहने के बाद उनकी आँखें आँसुओं से भर गईं।

मेरे ससुर यद्यपि आयु में ५० वर्ष से ऊपर हो चुके थे किन्तु थे शौक़ीन दिल के। बड़े ठाठ-बाट से रहते थे यद्यपि उनके पहिनने आदि के कपड़े सब पुराने थे किन्तु सफ़ेदी में दूध से किसी प्रकार भी कम न थे। मुँह से दो शब्द निकलते ही मेरी अवस्था की ओर देखकर आँखों में आँसू भर लाते। शायद वे समझते हों कि इसका दुख दूर करने का यही एक मात्र साधन है और इसीलिये उसका प्रयोग कर रहे होंगे। मेरे आने के कुछ ही दिनों बाद से उनकी हू-हू भी कम हो गई थी और वे दिन पर दिन प्रसन्न मालूम पड़ते थे। मैं अपनी माता के कथनानुसार उनकी सेवा का

विशेष ध्यान रखने लगी—भोजन बनाना, चौका, बर्तन करना, झाड़ू लगाना, पानी भरना, चारपाई बिछाना और उन्हें पानी पिलाना आदि मेरे नित्य के कार्य्य थे। रात को मैं कोठरी का दरवाजा अन्दर से बन्द करके उसमें सो जाती और वे बाहर छप्पर के नीचे रहते थे।

इसी प्रकार लगभग दो मास बीत गये। एक दिन मैं रोटी बना रही थी—संयोग से बाहर का दरवाजा खुला रह गया, मेरा घूंघट भी खुला था कि इतने में वे बिना खांसे खखारे अन्दर आ गये—मेरे दोनों हाथ आटे से भर रहे थे जिससे मुझे घूंघट काढ़ने में कुछ विलम्ब हो गया इस पर उनका हृदय दया से भर आया वे मुझे बिटिया बिटिया कहकर बोले रहने भी दे इस पुरानी प्रथा को, इसमें रक्खा ही क्या है? मैं तो तुझे बिटिया की दृष्टि से देखता हूँ। जिस प्रकार तू रामदीन दीक्षित की कन्या है उसी प्रकार मेरे लिये भी। अब तू यहां किसके लिये घूंघट निकाल रही है घूंघटवाला तो चला ही गया। यद्यपि उस समय मैं उनकी बातों में आकर ऐसा करने का साहस न कर सकी तब भी लगभग एक सप्ताह के बाद उस घूंघट को अलग ही कर देना पड़ा। उसके स्थान में अब मेरे नेत्र ही झुके रहते थे इसी प्रकार कुछ दिनों के बाद उन्होंने मुझसे बात-चीत करने का अनुरोध किया और फलस्वरूप कुछ ही महीने में मैं उनसे बेखटके धड़ाधड़ बातें करने लगी। मुझे

स्वप्न में भी पता न था कि उनके हृदय में किस प्रकार के विचार उठ रहे हैं। अब मैं उन्हें चाचा चाचा कहने लग गई थी और वे मुझे बिटिया कहा करते थे। गाँववाले समझ रहे थे कि यह अनन्त गहराई से निकाला गया प्रेम-रस है। पहिले की अपेक्षा मेरा आदर-सत्कार अब अधिक हो रहा था।

३

उस दिन रात को पानी बरस रहा था, चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार छाया हुआ था, कभी २ बिजली भी कड़क उठती थी—मेरे ससुर देव ने मुझे पुकारा "बिटिया! बिटिया" मैंने पूछा क्या है चाचा। वे बोले बिटिया जरा दिया तो जला—मालूम पड़ता है कि छप्पर चू रहा है। मैं सरल स्वभाव से कोठरी का दरवाजा खोलकर दियासलाई ढूंढ़ने लगी तब वे बोले अच्छा रहने दे बिटिया मेरी भी चारपाई कोठरी में डाल दे वहीं मैं भी पड़ा रहूँगा। छप्पर से पानी टपक रहा है सोना मुश्किल है। मैंने बिना कुछ सोचे विचारे चारपाई कोठरी के अन्दर बिछा दी और अपना बिस्तर उठाकर बाहर जाने लगी। यह देखकर उन्होंने कहा—अरी बेटी क्या तू मुझे नंगा, लुच्चा समझ रही है मैं तो तेरे बाप से भी बड़ा हूँ—मेरे बुढ़ापे पर कुछ तो तरस खाओ? मैं इसका जवाब न दे सकी कोठरी का दरवाजा बन्द करके जमीन पर सिकुड़ गई और कुछ ही

प्राणों में नींद में मग्न हो गई। स्वप्न में मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई मनुष्य मेरे शरीर को स्पर्श कर रहा है जिससे मैं घबराकर उठने का प्रयत्न करने लगी किन्तु हजार कोशिश करने पर भी हाथ पैर कुछ काम न कर सके। अपनी आँखों से मैंने देखा कि वे मेरे पूज्य श्वसुर जो मेरे पिता बन रहे थे—मेरे साथ प्रसंग करने पर तुले हुए हैं। मैंने उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना की—पिता कहकर पुकारा किन्तु उस समय सुननेवाला कौन था जब तक मेरा सतीत्व न नष्ट हो चुका उन्हें चैन न पड़ी। सम्भोग के पश्चात् चुपके से उठकर अपनी चारपाई पर जा लेटे। मैंने उठकर दरवाजे की ओर हाथ बढ़ाया तो उसमें ताला जड़ा हुआ मिला—लाचार वहीं बैठकर अपनी तक़दीर पर विचार करने लगी। मुझे अब याद आया कि मेरी माता की बुद्धि पिता की अपेक्षा कितनी तीव्र थी, सारी रात इसी विचार में बीती। अब हो ही क्या सकता था अपने किये पर पछ-ताने लगी। दूसरे दिन वे कुछ झेंपते से रहे—मुझे लज्जा और दुख दोनों ही समान मात्रा में थे कुछ दिन तक यही दशा रही अब वे कोठरी के अन्दर सोने लगे थे और मैं बाहर छप्पर के नीचे। किन्तु यह स्थान भी सुरक्षित न था—उन्हें पेशाब करने के लिये बाहर ही आना पड़ता था, कोठरी के अन्दर इसके लिये कोई स्थान न था। अतएव रात को कोठरी के बाहर की जंजीर भी न बन्द हो सकती

थी। हफ़्ते भर तक फिर कोई ऐसा दृश्य न हो सका आठवें दिन फिर वही घटना घटित हो गई। अब उन्होंने मुझे समझाना आरम्भ किया कि मनुष्य जन्म बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है ऐसे स्वर्ण संयोग में जिसने आनन्द न उठाया उसका जन्म निरर्थक है। विवाह सम्बन्ध आदि सब मनुष्य का रचित है ईश्वर का इसमें ज़रा भी हाथ नहीं है इसके झमेले में पड़कर सुख पर लात मारना विद्वान् को उचित नहीं है। परमात्मा के सामने सब प्राणी बराबर हैं न कोई किसी की स्त्री है और न कोई किसी का पति। इस थोड़ी सी जिन्दगी में समझदार को अपने आराम और सुख का साधन करना उचित है—शरीर को कष्ट देना आत्मा को कष्ट पहुँचाना है इससे ईश्वर प्रसन्न नहीं हो सकता। आत्मा के इस घर को कमजोर बना कर गिरा देने में कोई लाभ नहीं है। शरीर को मिट्टी में मिलाने से स्वर्ग प्राप्त नहीं हो सकता इससे विपरीत भूत प्रेत के रूप में रह कर जीवन काटना पड़ता है। उनके ये उपदेश अवस्था के अनुकूल होने के कारण मेरे हृदय में घर कर गये मुझे पति के दर्शन तक नहीं हुए थे फिर किस प्रकार पति र पिता कर जीवन व्यतीत करती? चढ़ती हुई जवानी के दिन थे पुरुष के संसर्ग का आनन्द मुझ भी अनुभव हो चुका था इस लिये कुछ दिन तक नाहीं नहीं करने के बाद दो ही महीने के समय में खुले रूप से उनके साथ आनन्द मनाने लगी। अब

वे मुझे प्रेम के नशे में प्राण प्यारी कहने लग गये। गाँव वालों को इस बात की हवा तक न लग सकी वे उन्हें पूरा साधू महात्मा समझते थे। मेरे विधवा होने से पास पड़ौस की स्त्रियां मेरा मुख तक देखना नापसन्द करती थीं—एक आध छोटी २ लड़कियां भले ही आती रहती थीं किन्तु उनमें इतनी शक्ति कहाँ थी जो इस रहस्य को समझ सकें। त्यौहार आदि के दिन वे भी विचारी न आ सकती थीं क्यों कि उनके घर वालों को भय था कि मेरी दृष्टि उन पर पड़ जाने से वे भी सोहाग रहित हो सकती हैं। मेरे ससुर जी का प्रेम मेरे साथ दिन प्रति दिन बढ़ता ही गया क्यों कि अब मैं तन मन से उनकी सेवा कर रही थी—अपना सर्वस्व भी उनकी भेंट कर चुकी थी उनकी कृपा से मुझे कुछ जेवर भी बन गये थे और दो तीन रंगीन साड़ियां भी आ गई थीं जिन्हें मैं रात में ही पहिनती थी। हां पैरों में लच्छे और हाथों में चूड़ियां तथा नाक में सोने की कील दिन में भी पहिने रहती थी। जिन चूड़ियों को पहिनने के लिये मैं अपनी मां के राज्य में तरस रही थी ससुर देव की कृपा से वे मुझे यहां नसीब हो गईं। अब मेरा बिस्तर उन्हीं की चारपाई पर लगता था—ईश्वर की इच्छा से उनकी दमा का प्रकोप भी घट गया था अब वे "कामराज बटी" का सेवन कर रहे थे। मैं भी अपने जी जान से उन्हें ही अपना पति मान चुकी थी—अतएव किसी प्रकार का संकोच आदि शेष न था।

यह कहा जा सकता है कि उनकी आयु ५० के उपर थी और मैं १६ वें वर्ष में प्रविष्ट हो चुकी थी किन्तु इसमें कोई विशेष आश्चर्य को बात नहीं है। आज दिन भी बड़े २ धनो और श्रेष्ठ घरानों में लोग ९ वर्ष की कन्या का विवाह ५० वर्ष को अवस्था वाले के साथ प्रसन्नता पूर्वक और धूम-धाम से कर देते हैं। ऐसो अवस्था में मेरा स्वयंवर अनुचित न था—होते २ पूरे पांच महीने इसी रास-रंग में गुजर गये अब मुझे गर्भ धारण होजाने के लक्षण मालूम पड़ने लगे पेट भी बढ़ना आरम्भ होगया था मैंने यह बात अपने ससुर उर्फ पतिदेव से भी कही किन्तु इसकी उन्हें कुछ विशेष चिन्ता न हुई वे बराबर उसी प्रकार मेरे साथ विहार करते रहे।

४

प्रयाग में कुम्भ का मेला था—मेरे ससुर देव ने निवेदन किया कि चलो गंगा स्नान कर आवें उस समय मेरा पेट पूरे आठ महीने का हो चुका था—चलने फिरने में कष्ट होने पर भी कुम्भ के महात्म के आगे मुझे झुक जाना पड़ा। प्रयाग जाने की तैयारी होने लगी। एक दिन रात को तीन बजे से ही हम दोनों आदमी गांव को बैलगाड़ी किराये करके उन्नाव के लिये रवाना होगये और दिन निकलने तक स्टेशन पर आ पहुँचे। गाड़ीवान पैसा लेकर वापस चला गया—९ बजे गाड़ी आई जिससे हम लोग कानपुर पहुँचे।

स्टेशन पर उतरते ही मेरे ससुर देव ने कहा कि मुझे एक वैद्य से मिलना है चलो पहिले वहां हो लें फिर लौटकर बड़े स्टेशन चलेंगे। मुझे कोई इन्कार न था—एक इक्के पर बैठकर हम लोग सिरकी मुहाल के लिये रवाना हुए।

द्वारकाधीश के मन्दिर के पास इक्का खड़ा कर दिया गया और हमें एक गली के अन्दर जाना पड़ा। उसे पार करके पास ही एक दूसरी गली थी जिसके ३-४ मकान छोड़ देने के बाद वे एक टूटे मकान के सामने खड़े होगये। बाहर से आवाज़ दी गई वैद्य जी ! वैद्य जी !! वैद्य जी तो बोले नहीं एक बुढ़िया दरवाज़े पर निकल आई और कहने लगी —वैद्य जी गंगा नहाने गये हैं अभी आते होंगे आओ भीतर सामान आमान रख दो —बहू को भी लिवा लाओ। वे बेखटके उसके अन्दर घुस गये मुझे भी वहाँ जाना पड़ा बुढ़िया ने एक दरी लाकर जमीन पर डाल दी जिसपर मैं बैठ गई।

जल पान आदि होने के बाद मेरे ससुर देव मुझ से बोले—अच्छा तो तब तक मैं भी गंगा जी नहा आऊँ— कुछ सामान भी लाना है उसे भी लेता आऊँगा तुम यहीं बैठी रहो कोई चिन्ता की बात नहीं है। जिसके उत्तर में मैंने धीरे से कह दिया —बहुत अच्छा, ज़रा जल्दी आइयेगा। बुढ़िया मेरे समीप ही बैठी थी उसने मेरी ओर देखकर कहा बहूजी घबड़ाने की कोई बात नहीं है यह घर अपना

ही समझो मैं भी तुम्हारे ही गांव की रहने वाली हूँ। मेरे ससुर देव लोटा धोती लेकर बाहर निकल गये और फिर तब से आज तक नहीं दिखाई पड़े। जब दोपहर के १२ बजगये मैंने बुढ़िया से पूछा "चाची अभीतक वे नहीं आये बड़ी देर करदी।" उसने उत्तर दिया--बेटी घबड़ा मत वे आते ही होंगे—मंदिर में सामान खरीदने में देर हो गई होगी। थोड़ी देर में २-३ पहलवान अन्दर घुस आये मुझे देखकर उनमें से एक ने कहा—अम्मा बहू को भूखों क्यों मार रही हो कुछ खिला पिला तो देती। बुढ़िया ने कहा अब आये हो इतनी देर में--घर में आनेवाला कौन था। इसपर एक आदमी वापस लौट गया और शेष दो आपस में कुछ बातें करने लगे। तबतक वह तीसरा भी वापस आगया बुढ़िया ने मेरे सामने पूड़ी आलू का साग चटनी और मिठाई आदि रख दिया और खाने के लिये आग्रह करने लगी। मैंने बहुत कुछ ना किया किन्तु उसके आगे एक न चली और लाचार होकर भोजन करना पड़ा। दिन के २ बज गये किन्तु तब भी मेरे ससुर देव न देख पड़े अब मुझे चिन्ता होने लगी मैंने लज्जा और संकोच त्याग कर फिर बुढ़िया से पूछा कि क्या कारण है जो अभी तक वे नहीं आये—मुझे छोड़कर चले तो नहीं गये। इस पर उसने जवाब दिया बेटी सब बात तो यह है कि तुम गर्भ-वती हो ऐसी अवस्था में वे तुम्हें अपने घरपर नहीं रख

सकते थे क्योंकि बदनामी फैलजाने का भय था लड़का हो जाने के बाद तुम वापस जा सकोगी तब तक तुम्हें यहीं रहना पड़ेगा। इसी लिये वे तुम्हें यहां छोड़ गये हैं। मैं यह सुनकर चुप होगई। दुख मुझे केवल यही था कि वे बिना कुछ कहे सुने धोखा देकर चले गये थे कम से कम मुझे सब हाल तो बतला देते। इस प्रकार का उनका यह कपट उस समय मुझे बड़ा बुरा लगा। किन्तु अब हो ही क्या सकता था ? किसी प्रकार से उस मकान में अपने दिन काटने लगी बुढ़िया मुझे बड़े आदर से रखती थी किसी प्रकार का कोई कष्ट मुझे अनुभव न हो सका। परमात्मा की कृपा से ९ मास के बाद मेरे एक लड़की उत्पन्न हुई किन्तु दाईयों की असावधानता के कारण कुछ ही क्षणों में उसके प्राण निकल गये इस शोक में मुझे कुछ दिनों तक अच्छा न लगा पर धीरे २ यह व्यथा भी कम होती गई।

गत एक मास में उस घर के अन्दर कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नहीं हुई किन्तु अब यह घर मुझे दूसरे ही रूप में दिखाई देने लगा। इधर कुम्भ का मेला भी समाप्त हो चुका था जो गंगा-स्नान के मिस प्रयाग चले गये थे वे सब वापिस आ गये और मुझे नित्य नया रंग दिखाई पड़ने लगा। प्रत्येक दिन प्रातःकाल होते होते ही उस मकान में स्त्रियों का झुण्ड आने लगा, ये सब अपने घरों से गंगा-स्नान के बहाने लोटा धोती लेकर निकल पड़ती थीं

और एक एक करके सब उसमें आ घुसतीं। इन स्त्रियों में मारवाड़ी और कान्यकुब्ज नारियों की संख्या अधिक थी जिनमें अधिकांश विधवायें होती थीं। घर के ऊपर के भाग में एक बहुत बड़ा सजा हुआ कमरा था जिसके फर्श पर बढ़िया गद्दा पड़ा था। उस कमरे में कई एक पर्दे लगे थे जिससे वह कितने ही छोटे २ भागों मे विभाजित हो जाता था। माहकगण दस बजे रात से हो वहां आ जाते थे और जो जैसा पसन्द करता उसी अनुसार मूल्य चुकाकर गुल-छर्रे उड़ाता। यह सब दृश्य ठीक तीन बजे समाप्त कर दिया जाता और गंगा-स्नान करनेवाली स्त्रियां अपना २ सामान लेकर एक-एक करके बाहर हो जाती थीं। किसी किसी दिन इन स्त्रियों की संख्या १५-२० तक पहुँच जाती थी और यदि माहकों की संख्या कम होती तो एक एक मुफ्त में भी बांट दी जाती थी। कहने का सारांश यह है कि कोई निराश होकर न लौटता था—सब स्त्रियों की इच्छा पूरी कर दी जाती थी। उस घर के वही तीनों आदमी मालिक थे—उनकी दृष्टि बहुत दिनों से मुझ पर लग रही थी किन्तु बुढ़िया इस बात से राजी न थी, क्योंकि मेरा प्रसव काल बीते कुछ ही दिन हुए थे। अतएव अभी तक मेरा सौदा न हो सका था। मेरा रहना उसी बुढ़िया के साथ होने के कारण वह मुझे बड़े स्नेह से रखती थी। वह अब मुझे अपना ही समझ रही थी। आखिर एक दिन मेरा

भी नम्बर आ पहुंचा और घर में पहुँचते ही तीनों मनुष्य मेरे ग्राहक बने थे लाचार थी—बस इसी घर में मेरा पतन आरम्भ हो गया। कुछ दिनों के बाद मेरे साथ भी यही होने लगा जो और सब के साथ होता था। फर्क केवल इतना ही था वे अपने २ घरों में वापस लौट जाती थी और मुझे चौबीसों घण्टे वहीं रहना पड़ता था। घर वाले मुझे "स्वराज—क्वालिटी" पुकार कर मेरा सौदा तय करते थे। भाग्यवान पुरुष ही मेरे पास आता था। यहाँ एक बात के लिखने की और आवश्यकता जान पड़ती है कि उस घर में वही लोग आते थे जो वेश्याओं के घर में जाने से परहेज करते थे। और नित्य नया माल उड़ाने की अभिलाषा रखते थे। इसके अतिरिक्त यहाँ का रेट भी शहर के और बाजारों से कम रहता था रुपये की वस्तु बारह आने में और दो रुपये की डेढ़ रुपये में स्वतंत्रता पूर्वक मिलती थी। कभी २ भाग्य से डब्बल में २ भी हाथ लग जाते थे। शराब कबाब आदि सब पदार्थ निषिद्ध थे—सब काम धर्म का डंडे पर तुले हुए रहते थे। स्त्रियों को एक पैसा भी न खर्च करना पड़ता था जिससे विना पैसा कौड़ी खर्च किये उनकी लालसा पूरी हो जाती थी। बुढ़िया को कुछ औष का भी ज्ञान था और अगर किसी को गर्भ धारण होने के लक्ष मालूम होने लगते तो वह तत्काल उसका प्रयोग क बिचारी विधवाओं को छुटकारा दिला देती थी माल की सं

दिन प्रति दिन बढ़ने का यही सब से बड़ा मुख्य कारण था। जिन्हें समाज का भय था वे यहाँ निश्चिन्त होकर अपनी तृप्ति कर लेती थीं।

मैंने यह सब नाटक लगभग २ महीने तक देखा उसके बाद मेरे एक क़द्रदान आ गये और ५००) रुपया चुका कर मुझे अपने साथ देहली ले आये। अब मैं एक बुड्ढी वेश्या के यहाँ उसकी उत्तराधिकारिणी बन कर रह रही हूँ—चावड़ी बाज़ार के प्रत्येक घर में मेरी धूम है नाचने गाने का अभ्यास भी खूब बढ़ गया है। दिल्ली शहर का प्रत्येक आदमी मेरे नाम से विज्ञ है—मैं अब विमला नहीं हूँ बल्कि "चमेली जान" हो रही हूँ। मेरी फ़ीस अब २००) रुपये से कम नहीं है। जिस समाज में लोग मुझे पापी समझते थे उसी समाज के बड़े २ धुरन्धर विद्वान मेरे चरण रज की अभिलाषा करके नित्य प्रति आते रहते हैं। किन्तु मेरा उद्देश्य कुछ दूसरा ही है इस लिये मैं अपने कान्यकुब्ज समाज के पोंगापंथी पण्डितों से कुछ आवश्यकीय प्रश्नों के उत्तर की अभिलाषा कर रही हूँ अगर उनसे मुझे पूरा २ विश्वास उत्पन्न हो जायगा तो सम्भव है मेरी चित्त-वृत्ति बदल जाय और मैं भविष्य में सुधार का कुछ प्रयत्न कर सकूँ—नहीं तो मैं संकल्प कर चुकी हूँ कि आजीवन इस हिन्दू जाति और विशेषतः कान्यकुब्ज समाज को मिट्टी में मिलाने का प्रयत्न करती रहूँगी। जिसके कारण मैं आज नरक का

कीड़ा बन रही हूँ। जो विद्वान मेरे प्रश्नों का उत्तर देना चाहें वे नीचे लिखे पते पर भेजने का कष्ट उठावें।

"चमेली जान"
c/o शरीफा बेगम,
चावड़ी बाज़ार-देहली।

"प्रश्न पत्र"

(१) मेरा विवाह किस धर्मशास्त्र के अनुसार हुआ था?

(२) क्या वेदों या शास्त्रों में तीन वर्ष की कन्या का विवाह करना लिखा है? अगर नहीं तो फिर मेरा क्यों किया गया?

(३) विवाह में मेरा अपराध था या मेरे माता पिता का?

(४) जिस समय मैं विधवा हुई थी—मुझे सूर्य की रोशनी का भी ज्ञान न था फिर समाज को क्या अधिकार है कि मुझे विधवा कह सके?

(५) अपराध का दंड दोषी को देना योग्य है या निर्दोष को अगर मैं निर्दोष हूँ तो फिर दंड मुझे क्यों मिलना चाहिये?

(६) कामवासना की ओर मुझे किसने घसीटा? समाज मेरे ससुर के इस नारकीय कृत्य पर उनका क्यों नहीं बहिष्कार करता? उन्हें इस पाप का दंड देना कहाँ तक अनुचित है?

(७) मनुष्य को दूसरा विवाह करने का क्या अधिकार है स्त्री को इसमें क्यों वंचित रक्खा गया?

(८) जब ६० वर्ष का बूढ़ा बाप अपनी नई दुलहिन के साथ आराम करता है तब उस १० वर्ष की कन्या का विवाह क्यों नहीं किया जाता जिसने अपने पति की सूरत तक नहीं देखी?

(९) शास्त्र स्मृतियां आदि ग्रन्थ पुरुष समाज ने रचे हैं या नारी समाज ने? अगर यह सब पुरुषों की रचना है तो क्या उसमें अपनी स्वार्थ सिद्धि का अनुमान करना अनुचित होगा?

(१०) पुरुष कामदेव को क्यों नहीं दबा सकता? स्त्रियों को जिनमें पुरुषों की अपेक्षा कामदेव की मात्रा ९ गुना है ब्रह्मचारिणी बनाना क्या पशु बल का प्रयोग करना नहीं कहा जा सकता?

(११) रंडुओं को विवाह करने से क्यों नहीं रोका जाता? अगर ऐसा नहीं हो सकता तो नारी समाज पर पशुतापूर्ण अत्याचार करने का पुरुषों को क्या अधिकार है?

(१२) काल, ऋतु के अनुकूल चलने में लाभ है या प्रतिकूल चलने में? अगर अनुकूल में लाभ है तो फिर क्यों नहीं उसको ओर मुख किया जाता?

(१३) वेदों और शास्त्रों में विधवा विवाह का उल्लेख है या नहीं अगर है तो फिर क्यों नहीं उसके अनुसार चला जाता? अगर नहीं है तो रामचन्द्र जी ने बालि की विधवा स्त्री तारा का विवाह सुग्रीव से और रावण की

कीड़ा बन रही हूँ। जो विद्वान मेरे प्रश्नों का उत्तर देना चाहें वे नीचे लिखे पते पर भेजने का कष्ट उठावें।

"धर्मची जान"
c/o शफीका बेगम,
चावड़ी बाजार-देहली।

"प्रश्न पत्र"

(१) मेरा विवाह किस धर्मशास्त्र के अनुसार हुआ था?

(२) क्या वेदों या शास्त्रों में तीन वर्ष की कन्या का विवाह करना लिखा है? अगर नहीं तो फिर मेरा क्यों किया गया?

(३) विवाह में मेरा अपराध था या मेरे माता पिता का?

(४) जिस समय मैं विधवा हुई थी—मुझे सूर्य की रोशनी का भी ज्ञान न था फिर समाज को क्या अधिकार है कि मुझे विधवा कह सके?

(५) अपराध का दंड दोषी को देना योग्य है या निर्दोष को अगर मैं निर्दोष हूँ तो फिर दंड मुझे क्यों मिलना चाहिये?

(६) कामवासना की ओर मुझे किसने घसीटा? समाज मेरे ससुर के इस नारकीय कृत्य पर उनका क्यों नहीं बहिष्कार करता? उन्हें इस पाप का दंड देना कहाँ तक अनुचित है?

(७) मनुष्य को दूसरा विवाह करने का क्या अधिकार [illegible] इससे क्यों वंचित रखा गया?

(८) जब ६० वर्ष का बूढ़ा बाप अपनी नई दुलहिन के साथ आराम करता है तब उस १० वर्ष की कन्या का विवाह क्यों नहीं किया जाता जिसने अपने पति की सूरत तक नहीं देखी?

(९) शास्त्र स्मृतियां आदि ग्रन्थ पुरुष समाज ने रचे हैं या नारी समाज ने? अगर यह सब पुरुषों की रचना है तो क्या उसमें अपनी स्वार्थ सिद्धि का अनुमान करना अनुचित होगा?

(१०) पुरुष कामदेव को क्यों नहीं दबा सकता? स्त्रियों को जिनमें पुरुषों की अपेक्षा कामदेव की मात्रा ९ गुना है ब्रह्मचारिणी बनाना क्या पशु बल का प्रयोग करना नहीं कहा जा सकता?

(११) रंडुओं को विवाह करने से क्यों नहीं रोका जाता? अगर ऐसा नहीं हो सकता तो नारी समाज पर पशुतापूर्ण अत्याचार करने का पुरुषों को क्या अधिकार है?

(१२) काल, ऋतु के अनुकूल चलने में लाभ है या प्रतिकूल चलने में? अगर अनुकूल में लाभ है तो फिर क्यों नहीं उसकी ओर गुरेज किया जाता?

(१३) वेदों और शास्त्रों में विधवा विवाह का उल्लेख है या नहीं अगर है तो फिर क्यों नहीं उसके अनुसार चला जाता? अगर नहीं है तो रामचन्द्र जी ने बालि की विधवा स्त्री तारा का विवाह सुग्रीव से और रावण की

विधवा स्त्री मन्दोदरी का विवाह विभीषण के साथ क्या वेद शास्त्र के विरुद्ध करा दिया था ? अगर ऐसा है तो रामचन्द्र जी फिर कौन सिद्ध हुए ?

(१४) रामायण में उपरोक्त बातों का उल्लेख है या नहीं ? अगर है तो क्या झूठा है ?

(१५) जिस समय रामायण बनी थी उस समय की अवस्था में और आज कल की अवस्था में कुछ भेद है या नहीं अगर है तो फिर क्यों पुरुष समाज उन बधियों का पुनर्विवाह करने में हिचकिचाता है ?

(१६) मनुष्य को ऋतु काल के अनुसार बुद्धि का उपयोग करना चाहिये या नहीं ? जिस रूढ़ि से अपनी हानि हो रही हो उसे मिटा देने में क्या हानि है ?

(१७) विधवाओं को वेश्या के रूप में देखना अच्छा है या कुल ललनाओं के रूप में ?

(१८) विधर्मी हो जाने में, गर्भपात, भ्रूण हत्या करने में समाज का कल्याण है या जाति की रक्षा करने में ?

(१९) किस पद्धति के अनुसार छोटी २ बच्चियों का विवाह तिलकधारी शास्त्री करा देते हैं ?

(२०) विवाह के योग्य उत्तम अवस्था कौन सी है ? चरक सुश्रुत आदि वैद्यक ग्रन्थों की इस विषय पर क्या सम्मति है ?

विस्वा-वितरण

१

गर्मी के दिन थे। सूर्य्य नारायण अस्त हो गये थे। आकाश मंडल पर चन्द्रमा का राज्य था—पवन देव मंद मंद गति से बह रहे थे ऐसे ही समय में एक नाव पर दो व्यक्ति आपस में बातें करते हुए यमुना की धारा में प्रवाहित हो रहे थे। नाव अधिक बड़ी न थी—मुश्किल से चार पाँच आदमी बैठ सकते थे—एक ओर छोटी सी गद्दी बनी थी जिस पर दूध के समान सफ़ेद चादर बिछी थी। बग़ल में दो तकिये भी रक्खे थे। किन्तु उस समय उस पर कोई बैठा हुआ न था दोनों व्यक्ति खड़े थे—नाव को खेनेवाला मुग़ल बंश का प्रतिभा शाली सम्राट बादशाह-अकबर था।

अकबर ने पूछा—बीरबल—ब्राह्मणों में भला कोई ऐसा भी समाज है जो अपने कर्म काण्ड में सानी न रखता हो?

बीरबल—अन्नदाता—है क्यों नहीं—आपकी दुआ से ऐसे भी लोग मौजूद हैं जो जप और तप के आगे संसार

की बड़ी से बड़ी वस्तु को मिट्टी के बराबर भी नहीं समझते उनका प्रेम, उनका संगठन, उनका ज्ञान और उनकी वाक् चातुर्य्यता के आगे नतमस्तक किये बिना ठहरना दुश्वार हो जाता है—जिनमें कान्यकुब्ज समाज सबसे अधिक उन्नति पर है ?

अकबर—क्या यह बात ठीक है ?

बीरबल - हजूर मुझे तो इसमें पूरी सच्चाई नजर आती है, गौड़, सारस्वत, सनाढ्य और सरयूपारी आदि सभी ब्राह्मण इस समाज को अपने से अधिक उन्नतिशाली मानते हैं।

अकबर—तो उन्हें लक्ष्मी की भी पिपासा न होगी ?

बीरबल—अन्नदाता के राज्य में कमी ही किस बात की है ! चारों ओर सुराज्य ही दीख पड़ता है—सच्ची बात तो यह है कि भारतवर्ष के इतिहास में अकबर-राज्य रामराज्य से किसी प्रकार भी कम नहीं लिखा जायगा। सभी को अपने २ धर्म पर स्वतंत्रता है—प्रत्येक घर धन सम्पत्ति से भरपूर है। सब जगह शान्ती की पवन है तब फिर वे ऋषि पुत्र जो केवल कन्दमूल फल ही खाकर वेदाध्ययन करते रहे हैं ऐसे सुराज्य में लक्ष्मी की आकांक्षा किस प्रकार कर सकते हैं। उन्हें तो मोक्ष के अतिरिक्त स्वर्ग की भी अभिलाषा नहीं है।

अकबर—क्या वे यहाँ दिल्ली आ सकते हैं ?

बीरबल—हजूर—उन्हें यहाँ बुलाने की क्या जरूरत समझी जा रही है ?

अकबर—यही कि मैं भी उनका यज्ञ देखना चाहता हूँ।

बीरबल—हजूर अपराध क्षमा हो—शायद वे यहाँ आने में तैयार न होंगे।

अकबर—ऐसा क्यों है ?

बीरबल—वे यहाँ यज्ञ करना उचित नहीं समझेंगे।

अकबर—क्या यह कठिन है ?

बीरबल—कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव कहना चाहिये।

अकबर—बीरबल, अकबर के राज्य में असम्भव की सत्ता ठहर ही नहीं सकती। अकबर इस कार्य्य में अपनी सारी शक्ति खर्च कर सकता है—अपना खजाना लुटा सकता है—अपना राज्य छोड़ सकता है—सैनिक दल को स्वाहा कर सकता है—और यहाँ तक कि स्वयं अपना शरीर चढ़ा सकता है किन्तु असम्भव को नहीं मान सकता।

बीरबल—हो सकता है, जहाँपनाह।

अकबर—क्या तुम समझते हो वे बुलाने पर यहाँ न आवेंगे।

बीरबल—ऐसा मेरा ख्याल था जहाँपनाह—हो सकता है कि वे यहाँ यज्ञ करने को तैय्यार न हों।

अकबर—इसलिये कि मैं म्लेच्छ हूँ ?

बीरबल चुप होगया।

अकबर ने फिर कहना आरम्भ किया—बीरबल मैं तुम्हें दिखा दूँगा कि वे यहाँ आवेंगे और यश करके ही वापस लौट सकते हैं।

बीरबल—हो सकता है जहाँपनाह—इस कार्य्य में बन्दा भी सेवा करने के लिये तैय्यार है।

इतने में पास ही के बगीचे से रमणी कंठ स्वर में सुनाई पड़ा :—

> मोहिं मारे डाले रे तेरी तिरछी नजरिया।
> तेरी तिरछी नजरिया—तेरी तिरछी नजरिया,
> मोहिं मारे डाले रे तेरी तिरछी नजरिया॥

बादशाह और बीरबल दोनों कुछ क्षणों के लिये "तिरछी नजरिया" में गोते लगाने लगे—समय अधिक हो गया था इस लिये उस बगीचे में जाना उचित न समझा गया—राग समाप्त हो जाने पर नाव वापस लौट पड़ी।

सारी रात अकबर को नींद नहीं आई—उसका शरीर पलंग पर पड़ा था किन्तु मन किसी उधेड़ बुन में काम कर रहा था। जिस वक्त सारा संसार खर्राटे भर रहा था—उस वक्त भारत के सम्राट की आँखों में नींद न थी। एक लम्बी समाधि के बाद उसने निश्चय किया कि किसी प्रकार से इस कान्यकुब्ज समाज का बढ़ता हुआ गर्व अवश्य मर्दन करना चाहिये प्रजा में इतना साहस कि राजा का निरादर

करने पर तुले हो। जिस अकबर के सामने लाखों हिन्दू मस्तक झुकाते हैं उसी को थोड़े से गिने हुए पंडित म्लेच्छ समझ रहे हैं। इनमें फूट का बीज बोकर आपस में लड़ा देना ही बुद्धि का उपयोग करना है उसके बाद ये स्वयं ही पतित होते रहेंगे। बस यही एक उपाय है—दक्षिणा की थैली का लोभ पैदा करके उन्हें यहाँ बुलाया जाय और जो न आवें उन्हें नीच समझा जाय—उन्हें पतित ठहराया जाय।

२

बीरबल ने कहा—पं० मनीराम, आप जानते हैं कि बादशाह सलामत ने आपको क्यों याद किया है?

पं० मनीराम—भाई मुझे तो कुछ भी पता नहीं है। मैं तो आपका पत्र पाकर यहाँ आ रहा हूँ।

बीरबल—आप यह तो जानते ही हैं कि मुग़ल सल्तनत में जो आराम हिन्दुओं को बादशाह अकबर के जमाने में मिल रहा है वैसा आराम किसी ग़ैर के राज्य में हम लोगों को न कभी मिला है और न मिल सकता है।

पं० मनीराम—यो बात तो एक बच्चा भी समझ सकता है भगवान से हम लोगों की भी यही प्रार्थना है कि ऐसे धर्मात्मा राजा का राज्य दिन दिन सुदृढ़ हो। बादशाह अकबर के बराबर प्रजा का हित चाहने वाला कोई भी राजा अब तक पैदा ही नहीं हुआ।

बीरबल—बस इसी लिये बादशाह ने आप को याद

किया है कि वे यहाँ आप लोगों द्वारा रचा गया यज्ञ देखने की बड़ी भारी अभिलाषा कर रहे हैं आशा है कि आप अपने प्रमुख विद्वानों के साथ पधार कर बादशाह की मंगल-कामना के लिये उसका अनुष्ठान करेंगे।

पं० मनीराम—यहाँ यज्ञ करने की क्या आवश्यकता है? हम लोग तो नित्य ही बादशाह की मंगल कामना किया करते हैं।

बीरबल—आपका कहना बिल्कुल दुरुस्त है। किन्तु बादशाह की अभिलाषा पूर्ण करना भी तो हम लोगों का कर्तव्य है।

पं० मनीराम—किन्तु आप ही विचार करें कि ए म्लेच्छ के सामने यज्ञ करने में उसका क्या फल प्राप्त सकता है। यह बात मैं आपके सामने भाई-चारे के नाते कह रहा हूँ, आशा है कि आप इस पर अवश्य वि करेंगे।

बीरबल—किन्तु इस में हर्ज ही क्या है! किसी प्र से बादशाह की आकांक्षा पूरी हो जाना चाहिये, आप को विद्वान और इस कार्य्य के योग्य ही समझ कर निवेदन किया गया है।

पं० मनीराम—किन्तु मैं अकेला तो हूँ नहीं आप और घर वाले न आवें तो फिर क्या इलाज है?

बीरबल—मुझे दुःख है कि आप बादशाह को

मानते हुए भी बच्चों की सी बातें कर रहे हैं। क्या आपको विश्वास है कि बादशाह अकबर के विरुद्ध रह कर किसी का कल्याण हो सकता है ? यह तो उनकी नेकनीयती का नमूना समझना चाहिये कि वे इस नम्रता से आपके सामने पेश आरहे हैं। दूसरी बात यह है कि आप का नुकसान ही क्या है आने जाने के खर्च के अलावा पूरी दक्षिणा भी तो मिलेगी अपने धर्म ग्रन्थों में भी राजा को ईश्वर का अवतार माना गया है किसी की जाति से मतलब ही क्या है। राजा ईश्वर है उसकी आज्ञा पालन करना ही प्रजा का धर्म है। जिस बात से राजा प्रसन्न हो वही करना हम लोगों का मुख्य कार्य्य है।

पं० मनीराम—अच्छी बात है प्रयत्न करूँगा। आगे ईश्वराधीन है।

बीरबल—बस आपही समझ लीजिये, बादशाह सलामत ने जो कुछ मुझ से कहा है वह सब मैंने आपको सुना दिया, अब आप इस निमन्त्रण को स्वीकार कर शीघ्र ही अपने समाज से विद्वानों के साथ पधारने का कष्ट उठावें। आप लोगों की आज्ञानुसार यज्ञ का सारा प्रबन्ध सुचारु रूप से कर दिया जायगा, इस सम्बन्ध में आप के ऊपर बादशाह की विशेष कृपा दृष्टि रहेगी।

३

सारे कान्यकुब्ज समाज में दिल्ली जाने की खलबली मच गई कुछ लोग इस बात से सहमत थे और कुछ इसका विरोध कर रहे थे। जिस कान्यकुब्ज समाज में अथाह प्रेम था, जिसे अपनी तपस्या पर गर्व था, जो ईश्वर के अतिरिक्त और किसी के आगे झुकना ही न जानता था, अकबर की कूटनीति के कारण आज वही दो भागों में विभाजित हो गया। एक वह दल था जो धन और शक्ति के आगे झुका जा रहा था और दूसरा दल वह था जो "नैनं छिंदन्ति शस्त्राणि" और "न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च" का पाठ पढ़ रहा था। पं० मनीराम, जो जान से इस शुभ कार्य के करने में जुटे थे, उस समय न उन्हें अपने गौरव का ध्यान था न कुल का न समाज का। वे अकबर की सत्ता को ही ईश्वरीय सत्ता मान बैठे थे उनके मन्थ उनसे पुकार पुकार कर कह रहे थे कि अकबर ईश्वर का अवतार है उसकी आज्ञा पालन करना प्रजा का मुख्य धर्म है। जो दल इस बात से सहमत न था वह पुकार २ कर कह रहा था कि अकबर म्लेच्छ है म्लेच्छ के सामने यज्ञ करना गौमांस का यज्ञ करना है। हम लोग प्राण रहते इस सत्ता के आगे नहीं झुक सकते।

किसी प्रकार बड़ी कठिनता से ६ कुल प्रदीप घरों का डेपुटेशन देहली जाने को तैयार हुआ, ये थे, वाजपेयी, मिश्र

सुकुल, दीक्षित, अवस्थी और पाण्डेय। इसके अतिरिक्त जो विरुद्ध थे, वे थे, तिवारी, त्रिवेदी, द्विवेदी, पाठक, अग्निहोत्री और चतुर्वेदी, यह सब अपने २ अध्ययन में लगे थे उन्हें अकबर से उपाधि पाने की अभिलाषा न थी।

जाड़े के दिन थे, दिल्ली जाने वाली सड़क पर रथों की धूम मची थी। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि मानों कान्यकुब्ज समाज के प्रमुख २ विद्वान विश्व विजय की आकांक्षा करके बढ़े चले जा रहे हैं। पं० मनीराम का रथ सब से अधिक सजा हुआ था, वे ही इस दल के सब से बड़े नेता थे, उनकी पहुँच भी बादशाह अकबर के दरबार में हो चुकी थी, सारी सल्तनत में उनका नाम था और उन्हीं के प्रयत्न से दिल्ली शहर में इस पावन यज्ञ की रचना होने जा रही थी।

सात दिन लगातार चलने के उपरान्त दिल्ली की चहार दीवारी दृष्टिगोचर हुई। बादशाह की ओर से सारे नगर में सजावट का प्रबन्ध किया गया था आगन्तुओं का विधिपूर्वक सत्कार किया गया, स्वयें बादशाह इन सब लोगों की अगवानी कर रहे थे। पं० मनीराम का हृदय हर्ष से गद्गद् हो रहा था बादशाह उन्हें ही इस कार्य्य का सिद्धकर्ता समझ रहे थे यमुना नदी के किनारे इस यज्ञ का उद्घाटन किया गया था लाखों रुपया इसके प्रबन्ध में व्यय किया गया।

कार्तिक बदी ८ से यज्ञ आरम्भ हुआ और ठीक आधी रात के समय दीपमालिका के दिन समाप्त किया गया। इस यज्ञ को देखने की लालसा से बड़ी दूर दूर से लोगों का समूह उमड़ रहा था। एक ओर हिन्दू जाति के बैठने का प्रबन्ध था और दूसरी ओर यवनादि बैठे थे। बीच में कान्यकुब्ज समाज के बड़े बड़े प्रतिष्ठित विद्वान् यज्ञ की रचना कर रहे थे।

यज्ञ समाप्त होने पर याज्ञिकों को दक्षिणा की थैलियाँ भेंट की गईं। बीरबल ने बादशाह से निवेदन किया कि जहाँ-पनाह, इस दक्षिणा के अतिरिक्त इन लोगों को कोई ऐसी वस्तु भेंट की जाय कि जिससे इस समाज में आपका नाम भी सदैव जीवित रह सके। बादशाह इस बात से सहमत हो गये। मानसिंह ने कहा—हुजूर, यह यज्ञ राज-कीय यज्ञ है, राजा ईश्वर का अवतार है अतएव जिन लोगों ने इसमें भाग लिया है उन्होंने ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया है। अतः ईश्वर के भक्तों को श्रद्धा और प्रतिष्ठा का स्थान दिया जाना योग्य है।

मुहब्बत खाँ ने बादशाह की आज्ञा से तलवार उठा कर कहा—जो महानुभाव इस यज्ञ में पधारे हैं और जिन्होंने इस शुभ कार्य्य के करने का कष्ट उठाया है शहन्शाह की ओर से पूरी २० बिस्वा की मर्यादा का कागे घोषित किया जाता है। इसके अतिरिक्त जो

यहां नहीं आये हैं वे सब के सब गर्व में चूर हैं, विद्वानों को गर्व शोभा नहीं देता इसलिये वे सब छोटे कुल वाले माने जायँगे। बादशाह का यह हुक्म सबके लिये मान्य होगा, जो इसका विरोध करेगा उसे उचित दण्ड दिया जायगा।

हिन्दू लोग हर्ष से चिल्लाने लगे "अकबर बादशाह की जय" मुसलमानों ने आवाज लगाई, "अल्लाहो अकबर।" २० बिस्वा मर्याद पाने वालों के रथ जब यमुना नदी को पार करके खड़े हुए उस समय उन्हें सामने से धूल उड़ती हुई नजर आई, बात की बात में एक सातवाँ डेपुटेशन भी वहाँ आ पहुँचा। जिसमें तिवारी वंश के प्रमुख २ विद्वान दिल्ली आ रहे थे। अपने साथियों को वापस लौटते देख कर उन सब के चेहरों पर उदासी छा गई—कुछ देर तक बात चीत करने के बाद पं० मनीराम ने उन्हें आश्वासन दिया कि बादशाह को पत्र लिखकर तिवारी लोगों के सम्मिलित हो जाने की सूचना कर दी जायगी और इस प्रकार से उन्हें भी २० बिस्वा मर्यादा का अधिकारी मान लिया जायगा। पं० मनीराम का पत्र लेकर एक दूत दिल्ली रवाना किया गया और कुछ ही घंटों में बादशाह की मँजूरी मिल गई। इस प्रकार तिवारी डेपुटेशन भी इस महा यज्ञ के फल का अधिकारी मान लिया गया।

अकबर बादशाह की कूटनीति सफल होगई, पं० मनीराम ने सब के सदा सदा के लिये कालिख पोत दी। संगठित

यकुब्ज समाज दो दलों में फूट निकला, एक ओर ये ६ घर, जो धन लोलुप बनकर अकबर की सत्ता के मस्तक झुका कर लाठी के बल पर खड़े होगये, और दूसरी ओर शेष वे ५ घर रह गये जो धन का मोह त्याग म्लेच्छ के सामने यज्ञ करने में किसी प्रकार से भी न सके, आश्चर्य तो यह है कि ये सब धाकर माने जाने

विलायती-डिप्लोमा

१

एक छोटी सी वाटिका के अन्दर गुलाबी रंग की साड़ी पहिने हुए एक १६ वर्ष की युवती टहल रही थी। उसके काले २ लम्बे बालों का जूरा पीठ पर कटि तक लटक रहा था—चन्द्रमा को लज्जित कर देने वाला मुख उदीयमान हो रहा था— हिरण के समान विशाल नेत्र थे, जिनमें सुरमा की रेखाएँ दौड़ रही थीं—तोते के समान नाक थी—जिसमें एक छोटी सी सोने की कील चमचमा रही थी— दाहिने कपोल के मध्य में एक छोटा सा तिल था, जिसमें उसका सौन्दर्य बिखरा जा रहा था। ओठों पर लालिमा थी। उस समय सन्ध्या काल बीत चुका था—रात अँधियारी थी किन्तु उसे इसकी चिन्ता न थी—उसके प्रकाशपूर्ण मुख के सामने चन्द्रमा की आवश्यकता न थी—वह क्यारियों के चारों-ओर मंद गति से घूमते हुए अपने सुरीले स्वर में गा रही थी :—

कान्यकुब्ज समाज दो दलों में फूट निकला, एक ओर ये साढ़े ६ घर, जो धन लोलुप बनकर अकबर की सत्ता के आगे मस्तक झुका कर लाठी के बल पर बड़े होगये, और दूसरी ओर शेष वे ५ घर रह गये जो धन का मोह त्याग कर म्लेच्छ के सामने यज्ञ करने में किसी प्रकार से भी न झुक सके, आश्चर्य्य तो यह है कि ये सब धाकर माने जाने लगे।

विलायती-डिप्लोमा

१

एक छोटी सी वाटिका के अन्दर गुलाबी रंग की साड़ी पहिने हुए एक १६ वर्ष की युवती टहल रही थी। उसके काले व लम्बे बालों का जूरा पीठ पर कटि तक लटक रहा था—चन्द्रमा को लज्जित कर देने वाला मुख उदीयमान हो रहा था— हिरण के समान विशाल नेत्र थे, जिनमें सुरमा की रेखाएँ दौड़ रही थीं—तोते के समान नाक थी—जिसमें एक छोटी सी सोने की कील चमचमा रही थी— दाहिने कपोल के मध्य में एक छोटा सा तिल था, जिसमें उसका सौन्दर्य बिखरा जा रहा था। ओठों पर लालिमा थी। उस समय सन्ध्या काल बीत चुका था—रात अँधियारी थी किन्तु उसे इसकी चिन्ता न थी—उसके प्रकाशपूर्ण मुख के सामने चन्द्रमा की आवश्यकता न थी—वह क्यारियों के चारों-ओर मंद गति से घूमते हुए अपने सुरीले स्वर में गा रही थी :—

अजब हैरान हूँ भगवन, तुम्हें कैसे रिझाऊँ मैं।
न कोई वस्तु है ऐसी, जिसे सेवा में लाऊँ मैं॥

किसी ने उसकी पीठ पर अपना हाथ रखते हुए कहा—"सखी, मैं रीझ तो गया—तुम हैरान क्यों हो रही हो ?"

युवती ने मुड़ कर देखा। एक २२ वर्ष का सुन्दर युवक सामने खड़ा था। उसने उस युवक का हाथ पकड़ कर कहा आप आ हो गये, मैं समझ रही थी कि सारी रात ही बीत जायगी। युवक ने मुस्कराते हुए कहा—सखी, तुम मुझे आह्वान करती और मैं न आता ! भला ऐसा भी कहीं हो सकता है

युवती ने अपनी तिरछी नजर युवक के मुस्कराते मुख पर फेंककर अपना मस्तक झुकाकर कहा—बस दो, अब अपने इस "सखी" शब्द को। मुझे क्यों रहे हो ?

युवक ने अपना दाहिना हाथ उसके कन्धे पर र कहा—तो फिर तुम्हारी क्या मंशा है ?

युवती—मैं स्वयं पूछ रही हूँ कि आपकी क्या मंश

युवक—मेरी क्या मंशा ? तुम्हारी मंशा में ह मंशा है।

युवती—उसे ही तो मैं जानना चाहती हूँ।

युवक—पहिले तुम्हीं क्यों न बता दो मुझे।

युवती—मेरे बताने से ही आप समझेंगे—B. A. से मैं मैट्रिक ही अच्छी निकली।

युवक—सो मैं प्रत्येक दशा में मानने को तैयार हूँ।

युवती—मानना ही पड़ेगा, मैं देहात की रहने वाली ही हूँ नहीं; जिस शहर में आप पढ़कर विद्वान हुए हैं, उसी में मैंने भी शिक्षा पाई है

युवक - अच्छा अपनी ंशा तो कहो, इस बड़े छोटे में क्या रक्खा है ?

युवती—मेरी मंशा बस यही है कि अब आप मुझे "युवती" कहकर न पुकारा करें।

युवक—तो फिर तुम्हें क्या अच्छा लगता है ?

युवती—क्या अब भी आप न समझ सके ?

युवक—समझता तो फिर पूछने की जरूरत ही क्या पड़ जाती ?

युवती—क्यों मुझे बना रहे हैं आप ?

युवक—मैं—मैं तुम्हें बनाता हूँ !

युवती—अच्छा न सही।

युवक—तो फिर कहो न अपने दिल की बात। मैं भी तो समझूँ तुम्हारी क्या इच्छा है।

युवती ने लज्जित होकर कहा—मैं अब आप की सारी हो रही—आप अपनी दासी समझें।

युवक ने धीरे से कहा—किन्तु अभी कुछ दिन और हैं।

युवती—शेष हों या न हों, इसकी यहाँ जरूरत नहीं आप को प्रतिज्ञा करनी पड़ेगी इसके लिए।

युवक—उसे तो मैं प्रत्येक दशा में स्वीकार कर रहा हूँ।

युवती—आप क्या स्वीकार कर रहे हैं ?

युवक—यही कि मैं तुम्ही से अपना विवाह करूँगा।

युवती—इसी से तो मैं कहती थी कि आप मुझे अब "सखी" न कहा करिये।

युवक—अच्छा तो आज से "प्राणप्यारी" कहा करूँगा।

युवती का मुख लज्जा से लाल हो गया—उसने अपना मस्तक युवक के चरणों में झुका दिया—युवक ने उसे छाती से लगाकर कहा—"प्रिये, जो आकांक्षाएँ तुम्हारे चित्त में थीं, उनका मैं बहुत पहिले से अनुभव कर रहा हूँ। इस जीवन में क्या मैं भविष्य जन्म में भी तुम्हारी ही अभिलाषा करूँगा।

युवती ने सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए कहा—आप इंगलैंड कब जा रहे हैं ?

युवक—परसों गुरुवार को यहाँ से रवाना हो जाऊँगा। पासपोर्ट भी आ गया है—तुमसे मिलने की इच्छा चित्त में उठ रही थी। दैव की इच्छा से यह भी पूरी हो गई। अब भगवान से यही विनय है कि वह दिन शीघ्र प्राप्त हो जब कि मैं तुम्हें "अपनी" कह सकूँ।

युवती ने धीरे से कहा—वहाँ की मिस लोगों में कहीं मुझे न भूल जाइयेगा।

युवक—ऐसा होना जमीन और आकाश का मिलना कहा जा सकता है।

युवती—अच्छा कोई निशानी तो देते जाइये।

युवक—मेरी फ़ोटो तो तुम्हारे पास मौजूद ही है।

युवती—यह तो विद्यार्थी जीवन की भेंट है। आज के मिलन का स्मरण किस प्रकार रह सकता है?

युवक ने अपने हाथ की अँगूठी निकालकर युवती को पहिना दी, जिसके बदले में युवती ने भी एक रेशमी खुशबूदार रूमाल अपनी जेब से निकालकर युवक के दाहने हाथ में दबा दिया। दोनों स्नेह से गद्‌गद् हो उठे। पहिले युवक ने युवती के कपोल का मध्य भाग अपने ओष्ठों से छुआ और बाद में युवती ने एक हलका सा चुम्बन ले लिया। दोनों के जीवन में यह सबसे पहिला चुम्बन था।

२

लखनऊ के रानी कटरा मुहल्ले में शरद के विलायत चले जाने की धूम मची थी। बड़े-बूढ़े, स्त्री-पुरुष इस बात से दुर्वासा-रूप धारण कर रहे थे। वे कह रहे थे—ऐसा भ्रष्ट लड़का वंश में कभी पैदा ही नहीं हुआ। जहाज पर पैर रखने से गौ हत्या के समान पाप होता है। जल में वरुण देवता का निवास है, उनके ऊपर चलना ब्राह्मण की छाती पर पैर रखना है। रास्ते में न स्नान हो किया जा सकता है और न भोजन ही बनाया जा सकता है। ऐसी दशा में गौ-

मांस और शराब आदि निषिद्ध पदार्थ तक खाने पड़ते हैं। शरद इन बातों से किस प्रकार अलग रह सकता है? विलायत राक्षसों का देश है। वहाँ विद्या कहाँ से आ सकती है! लोग खाने पीने और ऐश आराम करने हो के लिए वहाँ जाते हैं। मेमें उन्हें अपना यार बना लेती हैं। चौका चूल्हा ताक में रख दिया जाता है। मजे में जूते पहिने होटल में खाते पीते हैं। वहाँ से जो लौटा है पूरा क्रिस्तान होकर आया है। बूढ़े पंडित लोग कह रहे थे—"विलायत में पढ़ाने वाले कब से पैदा हो गये? हमीं लोगों से तो उन्होंने पढ़ा लिखा है—कभी चेला भी गुरू को पढ़ाते सुना गया है? वहाँ पर तो मेम से विवाह करने के लिए ही लोग जाते हैं। बाप दादों का नाम डुबा देने के अतिरिक्त वहाँ है क्या? इसी प्रकार की बातें सारे मुहल्ले में गूँज रही थीं—जो दो चार नवयुवक वहाँ मौजूद थे, उनमें इतना साहस न था कि इसके विरुद्ध आवाज उठा सकें। उन सब के मुँह बंद थे।

पं० हृदयनारायण वाजपेयी का हृदय इन बातों [illegible] हो रहा था। उन्होंने अपनी ही अनुमति से [illegible] भेजा था। वाजपेयी जी की अवस्था यद्यपि ढली [illegible] शरद के अतिरिक्त उन्हें और कोई संतान न थी, [illegible] पुत्र को शिक्षित बनाने के लिये बड़ा से बड़ा त्याग [illegible] तत्पर थे। उनके यही एक लड़का था जो प्लेग के [illegible] बच गया था। शेष सारा [illegible]

कनौजिया समाज में भयानक अत्याचार

वाजपेयी जी कलकत्ते में एक नामी वकील थे। शरद भी वहीं पढ़ा करता था। वकालत में काफी पैसा पैदा कर लेने के बाद आप अपने घर लौट कर जीवन यात्रा पूरी कर रहे थे। मुहल्ले वालों की बातों से उनका कलेजा भुना जा रहा था। इन दकियानूसी, लकीर पर चलने वाले फ़कीरों के सामने उनकी एक न चली। सभी लोग उनके साथ खान पान का सम्बन्ध तोड़ देने के लिए कटिबद्ध हो रहे थे।

गणेशगंज के चौराहे पर पं० दीनानाथ वैद्य शास्त्री का घर था। आप सोंठियाय के मिश्र थे—वैद्यक का अच्छा ज्ञान था। घर के बाहर वाले कमरे में औषधालय था और भीतर पीछे वाले भाग में गृहस्थी रहती थी। घर में स्त्री और एक कन्या के अतिरिक्त और कोई न था। आप पुराने विचार वाले होते हुए भी स्त्री शिक्षा के प्रबल पक्षपाती थे और इसी लिए अपनी कन्या, कमला, को बालिका विद्यालय में भेज कर संस्कृत और अंगरेज़ी का अच्छा ज्ञान करा दिया था। वैद्यक मत के अनुसार आप छोटी आयु में विवाह करना भी पसन्द न करते थे। इसीलिए कमला का विवाह अभी तक न हुआ था।

इतना सब होने पर भी आप अर्द्ध बाद के शिकार बने हुए थे—जैसे युग के मोह में पड़ कर युवाव में विवाह करना उचित समझते थे, किन्तु नीचे कुल में उत्पन्न होनेवाले युवक से सम्बन्ध करना सर्वथा अयोग्य मानते थे। कमला के

विवाह के विषय में आर अभी तक चुपचाप बैठे थे—क्योंकि एक ओर तो उन्हें उसके स्वास्थ्य का ध्यान था और दूसरी ओर वे शरद को अपना दामाद बनाने का निश्चय कर चुके थे। अभी तक शरद का पढ़ना समाप्त न हुआ था, इसलिए बीच में इसकी छेड़ छाड़ करना वे उचित नहीं समझते थे।

जब उन्हें शरद के विलायत चले जाने का हाल मालूम हुआ तो उनके सिर पर हजारों घड़े पानी गिर गया—कई वर्षों का सोचा हुआ मन्तव्य एक पल में विफल हो गया। वे कहने लगे—विलायत से लौटने पर उस भ्रष्ट क्रिस्तान को कौन अपनी लड़की देगा ? इससे तो कुमारी रखना लाख गुना अच्छा है। ईसाई बना कर अपनी लड़की को समाज की दृष्टि से गिरा देना कहाँ तक अच्छा होगा ? ऐसा करना अपने कुल में बड़ा भारी दाग लगा लेना है।

३

कानपुर के भैरों घाट पर एक स्त्री का शव धधक २ करता हुआ चिता में जल रहा था। पास ही २०—२५ आदमियों का एक झुंड बैठा था—फाल्गुन की दुपहरी थी—किसी के सिर में डुपट्टा बँधा था, किसी के अँगौछा और किसी के धोती। सारे झुंड में किसी के चेहरे पर उदासी का भाव न था—सब प्रसन्न-वदन दिखाई पड़ रहे थे। कोई हँस रहा था, कोई मुस्करा रहा था, कोई आपस में

दिल्लगी कर रहा था और कोई अपने दाहिने हाथ की हथेली घूम रहा था। कोई कोई विचार धारा में भी मग्न था।

एक युवक ने मुस्कराते हुए एक बूढ़े की ओर देखकर कहा—"दद्दू, अब हमारी नई भौजाई कब आवेंगी?"

इस पर उस बूढ़े ने उत्तर दिया—अब मैं विवाह नहीं करूँगा भैया, थोड़ी जिन्दगी और रह गई है, जिसे राम भजन करके बिता दूँगा।

"ऐसा क्या कहते हो दद्दू, अभी आप की अवस्था ही क्या है? स्त्रियाँ तो मरती ही रहती हैं, बड़े भाग्य से दूसरा विवाह होता है।"

बुड्ढा—ठीक कहते हो भैया, किन्तु अब मेरी इच्छा इससे भर गई है। तुम्हारी सात भौजाइयों को तो रगड़ चुका हूँ, अब थोड़े दिनों के लिए किसी का गला फंसाना अच्छा नहीं जान पड़ता।

इस पर दो तीन युवक और बोल उठे—अच्छा तो हमें ही सौंप देना। जबतक आप की इच्छा हो रखना, बाद को हमारा भी तो अधिकार है!

पहिले वाले युवक ने कहा—अधिकार पूरे सोलह आने है। अपना ही समझना चाहिए।

इसे सुनकर वह बुड्ढा भी हँस पड़ा। बड़े बूढ़े कह गए थे—अभी दूध के दाँत गिरे नहीं और कह रहे हैं कि विवाह नहीं करूँगा। पूछो अभी हो क्या गया है।

इसी प्रकार कुछ देर तक गप शप उड़ती रही—इस समय तक चिता पर रक्खे हुए अस्थि पंजर सब भस्म हो चुके थे, जिन्हें गंगा की धारा में बहा देने के बाद सब लोग घर की ओर लौट पड़े।

रामप्रसाद सुकुल के कल्याण-भार्य हो जाने का समाचार सारे कान्यकुब्ज समाज में बिजली की भाँति दौड़ गया। लड़की वाले घरों में एक प्रकार का उत्साह और प्रसन्नता का भाव पैदा हो गया—चारों ओर से उम्मेदवारों का भुंड सुकुल जी के घर की ओर उमड़ पड़ा। एक ओर उनकी स्त्री का एकादशा मनाया जा रहा था और दूसरी ओर विवाहार्थ आई हुई अर्जियों पर विचार हो रहा था।

एक अटेर के दीक्षित महाशय कह रहे थे—"सुकुल जी मेरी लड़की बड़ी सुशील और गृहस्थी के प्रत्येक कार्य में चतुर है। ऐसी सुन्दर स्त्री आप को दूसरी जगह न मिलेगी।"

एक मिसिर जी कह रहे थे—"सच्ची बात तो यह है कि मैं आप को खुश कर दूँगा। माँगने के लिए आप चाहे ४०००) माँगें या ८०००)।"

एक वाजपेयी जी कह रहे थे—"भैया, मेरी बात का विश्वास करो, ऐसी लड़की आपको दूसरी जगह नहीं मिल सकती। १५००) से अधिक देना मेरी सामर्थ के बाहर है।"

एक अवस्थी जी कह रहे थे—"मैं अपनी सारी जमींदारी बेच कर यह कार्य्य कर रहा हूँ। अगर आप मंजूर

कर लें, तो मुझ गरीब ब्राह्मण के गले की फाँसी कट जायगी।"

उपरोक्त अर्ज़ियों पर सारे दिन विचार होता रहा किन्तु किसी को भी मंजूरी न दी जा सकी। कारण कि सुकुल जी भीष्म प्रतिज्ञा कर चुके थे कि ४०००) से कौड़ी कम न लूँगा।

एक बेचारा आफ़त का मारा बूढ़ा, जिसे अर्ज़ी लेकर घूमते हुए ८ वर्ष बीत गए थे, और जो ५० कोस की पैदल यात्रा करके यहाँ तक आया था, इस नाउम्मेदी से काँप उठा और अपना मस्तक सुकुल जी के पैरों पर रखकर ज़ोर ज़ोर से रोने लगा। किन्तु यहाँ तो उस हृदय का सर्वथा अभाव था जो दुखिया के आर्तनाद से पिघल जाता है— दहेज ठीक करते समय परस्पर के स्नेही और सम्बन्धी तक उस वक्त अपनी निगाहें बदल लेते हैं; सहृदय, पाषाण-हृदय हो जाते हैं; नेता और जाति का उद्धार करने वाले भी भूखे व्याघ्र बन जाते हैं; तब फिर उस सामान्य अवस्था वाले का कहना ही क्या था? वहाँ वह गुड़ न था जिसे खाकर चींटे सहज ही में निकल भागते।

कान्यकुब्ज समाज चाहे अभी कुछ दिन और इस दहेज के सुख का अनुभव कर ले किन्तु उसे इसे अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि वह दिन शीघ्र ही आने वाला है जब कि देश में एक ऐसा भी दल खड़ा हो जायगा जो

इस नाशकारी प्रथा को समूल उखाड़ फेंकेगा। ऊँच-नीच कुल के भेद-भाव को हटाकर अपनी बहिनों तथा पुत्रियों का विवाह सुयोग्य पात्र ही के साथ करना स्वीकार करेगा। बड़े-बूढ़े धन के लोभी इन बातों को जितना महत्व दे रहे हैं, उतना ही इन कुप्रथाओं का पतन भी भविष्य की सन्तान द्वारा होना निश्चित है।

इस नाशकारी प्रथा के कारण प्रति वर्ष हजारों लड़कियाँ रोगी और मृत्यु के मुख में जाने वाले बुड्ढों के गले मढ़ दी जाती हैं। उन राक्षस हृदय वाले पिता और घर वालों को इतना भी नहीं सूझता कि वे अपनी लड़की का कहाँ तक कल्याण कर रहे हैं। विवाह हो जाने पर कुछ ही महीनों में वे बेचारी सब की सब विधवा करार दे दी जाती हैं और सारा समाज उन्हें घृणा की दृष्टि से देखने लगता है। आँख रखने वाले देखें, और हृदय रखने वाले नवयुवक विचार करें कि इसमें इन बच्चियों का कहाँ तक दोष है। बड़े बूढ़ों से नारी जाति के कल्याण की आशा करना अब निरी मूर्खता है। इन्हीं लोगों ने इस विष-बेल को बढ़ाया है, अतएव एक तरफ से इन्हें इस दंड का भागी समझना चाहिए। सारे दिन "विष्णु सहस्र नाम" का पाठ करने वालो! रात दिन महादेव का घंटा हिलाने वालो ! धर्म के ठेकेदारो! अपने २ हृदय पर हाथ रख कर शपथपूर्वक कहो कि तुम लोग कहाँ तक ठीक रास्ते पर हो ? अब पाखण्ड रचने से काम नहीं चलेगा, वह जमाना लद गया जब तुम

लोग अपनी अन्धाधुन्दी कर रहे थे, तुम्हारे पापों का घड़ा भर चुका है।

देश और समाज की नैया डुबाने वाले, आँखों के अन्धे जब तक जीवित रहेंगे, तब तक सुधार की आशा करना वृथा है, वृथा है। अब वह समय नहीं रहा कि लकीर का फ़कीर बना जाय, पुरानी रूढ़ियों को विध्वंस कर देना ही प्रत्येक नवयुवक का मुख्य कर्तव्य होना चाहिए।

बहिनों और माताओं को भी अब पुरुषों के हाथ की कठपुतली न बनना चाहिए। उन्हें अपने कल्याण का मार्ग स्वयं निर्धारित करना चाहिए। समाज के बुड्ढों को हँसने दो, धर्म के ठेकेदारों को चिल्लाने दो, पंडितों को बिलबिलाने दो, किन्तु अपनी प्रगति मन्द मत करो; अपना अधिकार अपने हाथों में बल-पूर्वक छीन लो; अत्याचारियों को नम्र कर दो। योग्य वरों के साथ स्वयंवर करो; बूढ़े, अन्धे, काने, कोढ़ी, लूले, लँगड़े, नकटे और टूटे-फूटे के हाथों में पड़कर अपने जीवन को बर्बाद मत करो। इस प्रथा के विरुद्ध सत्याग्रह करना प्रत्येक नवयुवक हृदय का परम धर्म है।

... जिस के कारण हम दिन पर दिन पतित हो रहे हैं, जिस के कारण आज भी लाखों कन्याएँ अविवाहित रहकर मर जाती हैं, जिसके कारण अनेक ३०–३५ वर्ष की आयु वाली अविवाहित कन्याएँ आँसू बहा रही हैं, जिसके

कारण करोड़ों विधवाएँ पशु-तुल्य बनी हैं, जिसके कारण अपना घर द्वार तक बेचना पड़ता है, उस राक्षसी प्रथा को उखाड़ फेंकना देश के सच्चे वीरों का काम है, अब स्वतंत्र होने का समय है, सभी को स्वतंत्र बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

४

पोस्टमैन ने पं० दीनानाथ शास्त्री के सामने एक लिफाफा फेंक दिया, जिसे उन्होंने बड़े उत्साह से उठा लिया; किन्तु जितना ही अधिक वे उसे देखते थे, उतनी ही अधिक उनमें चिन्ता की मात्रा बढ़ती जाती थी। यह पत्र भारतीय न था, बल्कि इंगलैंड से आया था, जिस पर लंडन के डाकखाने की मुहर थी, पते पर लिखा था :—

श्रीमती कमलादेवी M. S. L. C.
C/o पं० दीनानाथ जी वैद्य शास्त्री,
आयुर्वेद औषधालय,
गणेशगंज—लखनऊ।
Lucknow (India)

शास्त्री जी कुछ देर तक पत्र अपने हाथ में लिए रहे। कभी उसे खोलने का साहस कर रहे थे और कभी बिना दूसरे का पत्र पढ़ लेने के लिए गलती न देना ... जिससे मुख पर मलिनता दौड़ आती थी। लगभग ... इसी उधेड़-बुन में बीता; आखिर साहस करके उसे खोल ही डाला। पत्र में लिखा था :—

ओ३म्
आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी, लंडन
ता० २८-८-११

मेरी आराध्य देवी, परमात्मा तुम्हारा मनोरथ सफल करें। मैं कुशल पूर्वक लन्दन पहुँच गया। किसी प्रकार की कोई चिन्ता न करना। यहाँ मुझे २ वर्ष तक रहना पड़ेगा, बाद को स्वदेश आ जाऊँगा। इस वियोग में मुझे जो दुख हो रहा है, उसे मैं ही अनुभव कर रहा हूँ। आशा है कि तुम भी अपने उपासक को समय २ पर याद करती रहोगी। समाज वाले तो मेरे बहिष्कार पर तुले हुए होंगे, वहाँ तुम भी इस दास को न भूल जाना। अधिक क्या लिखूँ, अपने कुशल समाचारों से सूचित करते रहना।

तुम्हारा अनन्य
"उपासक"

पत्र का पढ़ना समाप्त होते ही शास्त्री जी क्रोध में लाल मिर्चा होगये। उन्हें आज मालूम हुआ कि स्कूल में लड़कियों का पढ़ाने लिखाने का क्या फल मिलता है। जिस कन्या को वे सुशील और सदाचारिणी समझ रहे थे, वही स्वच्छन्दता की मूर्ति पाई गई। औषधालय में उस समय सन्नाटा था। शास्त्री जी की विचार शक्ति में विघ्न पहुँचाने वाला वहाँ और कोई न था, जिससे वे कुछ देर तक विचार धारा में गोते लगाते रहे। इसी बीच कमला ने

आदत अच्छी नहीं है। मैं तुझे पिता के नाते समझा रहा रहा हूँ, अगर भविष्य में तेरी ऐसी ही दशा देखी जायगी तो बहुत सम्भव है कि हम सब लोगों को किसी भारी विपत्ति में घिर जाना पड़े। अतः इस प्रकार का पत्र व्यवहार करना अच्छा नहीं है। शरद अब अपने जाति वालों से अलग किया जा चुका है, अगर समाज वालों को इन बातों का पता चल जायगा तो आश्चर्य नहीं कि मेरा भी बहिष्कार कर दिया जाय। मैंने तुम्हें ईसाई बनाने के लिए नहीं पढ़ाया है, किन्तु शिक्षा देना ज्ञान पैदा करने के लिए परमावश्यकीय जान पड़ता था। अगर उस ज्ञान की जगह तुम्हारे हृदय में अज्ञान भर गया है तो फिर तुम से वे लड़कियाँ लाखगुना अच्छी हैं, जिन्होंने किताब की सूरत तक नहीं देखी। अब तेरा विवाह शरद के साथ कर देना प्रत्येक अवस्था में कठिन है,इस लिए उसकी आशा छोड़ दो। मैं किसी अच्छे कुल में ढूँढ़ कर सम्बन्ध करूँगा।

कमला बिलकुल चुप थी, उसने पिता के सामने न तो कुछ कहने का साहस ही किया और न उसके चित्त में ही किसी प्रकार का भाव पैदा हुआ। वह पत्र को उठाकर अपने कमरे में चली गई।

शरद और कमला का पत्र व्यवहार बन्द न हो सका—दोनों में सच्ची लगन थी, सच्चा स्नेह था, सच्चा प्रेम था, और दोनों ही एक दूसरे को पसन्द कर चुके थे। इसी

दृष्टि से देखता था, उसे ही लड़के वाले मूर्ख और गवाँर समझ रहे थे। कोई "तू" कहता था, कोई "तुम" और कोई "तुम्हारा" कहकर पुकार रहा था। कोई आप कहकर पुकारने वाला भी न था।

अनेक कठिनाइयों को सहते २ उनका सारा साहस हवा हो चुका था। हाथ पैर फूल गये थे। चित्त उदास हो चुका था। इसलिए वे अब किसी प्रकार कमला को किसी ऊँचे-नीचे के साथ ढकेल देने के लिए तैयार होगये थे।

इधर कानपुर के पुराने कल्याण-भार्य पं० रामप्रसाद सुकुल का भी विवाह ४०००) रु० की माँग के सामने अब तक कहीं न हो सका था, इससे उनका भाव भी इस साल घट गया। ईश्वर की इच्छा से शास्त्री जी की दौड़ इन तक पहुँच गई और बड़ी कठिनता से २०००) के दहेज पर उस ४५ वर्ष के बुड्ढे के साथ सम्बन्ध ठीक कर लिया गया।

यद्यपि शास्त्री जी का मन अपनी सुन्दरी और शिक्षिता कन्या को इस सूखे झंखाड़ में फँसा देने के लिए तैयार न था, किन्तु उस समय की परिस्थिति उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य कर रही थी। वे चारों ओर से निराश हो चुके थे। उनकी हिम्मत टूट गई थी। लखनऊ शहर का पला हुआ नाजुक बदन, धूप-गर्मी और ठंडक से कुम्हला गया था। उसे देहात की सड़कों पर पैर रखना अत्यन्त कठिन हो गया था।

कुछ है। लड़की बड़ी भाग्य शालिनीनिकली। जेवर और कपड़ों से २४ घण्टे लदी रहेगी। घर में खाने पीने का भी आराम है। यही २-४ मुख्य २ बातें हैं जो देख लेना चाहिए। किसी का चेहरा-मोहरा देखना अच्छे घरों में अच्छा नहीं समझा जाता। लड़के को अधिक देखने भालने में नजर लग जाने का भय है, इससे उसकी आयु क्षीण हो जाती है। यह रीति तो धाकरों में है कि उधर लड़का भी देखा जाय और इधर लड़की भी देख ली जाय। अपने साढ़े ६ घरों में ऐसी रीति कहीं भी नहीं है।

इसी प्रकार की बातें सब घरों में सुनाई पड़ती थीं। इन बातों का विरोध करने वाला वहाँ कोई न था। कोई माई का लाल उस लड़की के हृदय को थाह लेने वाला न था, जिसका कि जीवन उस बुड्ढे के साथ बलिदान किया जाने वाला था। सब अपने २ रंग में रँगे थे। कोई खड़ी पूड़ी उड़ाने को धुन में था, कोई दक्षिणा में मस्त था, कोई निछावर की लालसा लगा रहा था, कोई लड़का देखने को आँखें साफ़ कर रहा था और कोई अपनी जेबें भरने के लिए नई पोशाक सिला रहा था। उस संसार में केवल एक ही ऐसा जीव शेष था जो किसी गम्भीर धुन में लगा हुआ था, और जिसे चिन्ता हो रही थी अपने जीवन की रक्षा करने की। उसने प्रण कर लिया था कि अगर शरद उसके उद्धार करने के प्रयत्न में सफल हो गया, तब तो वह भविष्य

में संसार की जगमगाती हुई वस्तुएँ अपनी आंखों से देख सकेगी, अन्यथा कुछ ही दिनों में उसके नेत्र सर्वदा के लिए बन्द हो जायँगे। उसके बीच में एक ओर जीवन का परदा था और दूसरी ओर मृत्यु का। उन में से कौन खुल जायगा, इसे निर्धारित करना कठिन था। जिस व्यक्ति के सामने ऐसी परिस्थिति होगई हो, उससे अधिक कष्टमय और कोई उदाहरण दिया ही नहीं जा सकता।

कान्यकुब्जी पोथाधारी पंडित और लड़की के घर वाले जिस पशुता का प्रयोग कर रहे हैं, जिस क्रूरता से वे दिन रात लड़कियों के गले पर छुरियाँ फेरते रहते हैं, वैसा घृणित उदाहरण संसार के किसी भी देश में नहीं पाया जा सकता। अपाहिज दूल्हा, एक सुशील लड़की के गले में बाँध दिया जाता है और फिर दोनों के सुखमय जीवन के देखने की अभिलाषा की जाती है। असभ्य और जंगली जाति भी कभी इन बातों को स्वीकार न करेगी, जिन बातों को आजकल के विद्वान कहलाने वाले अपने काम में ला रहे हैं। इन आदतों से क्या कभी इस समाज के उत्थान का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है? लेखक का तो अनुमान है कि एक बार चाहे सारा हिन्दू समाज भले ही उठ कर बैठ जाय, किन्तु पतित कान्यकुब्ज समाज दिन पर दिन अपने लिए कब्र ही तैयार करता रहेगा। उसका उत्थान तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि दहेज की प्रथा प्रचलित है और

नारी समाज पर पशु-तुल्य अत्याचार किया जा रहा है। यह दो बातें ऐसी कठिन और स्वार्थ पूर्ण हैं कि जो अभी ५०० वर्षों के अन्दर नहीं हटाई जा सकती और इसी बीच इस समाज का नाश होना भी निश्चित है। कान्यकुब्ज समाज की नारियाँ दूसरे धर्म में प्रविष्ट हो जायँगी और पुरुष बीघा बिस्वा बिस्वांसी की ही नाप करते रहेंगे। जो लोग आजकल नेता बन कर इस समाज के उत्थान का स्वप्न देख रहे हैं, उनसे निराशा के अतिरिक्त और कुछ लाभ नहीं है। उनके विचार उतने ही गन्दे हैं जितने ऊँचे वे अपने को समझ रहे हैं। सभा में व्याख्यान देते समय थीसों उछल पड़ते हैं, दहेज के विरुद्ध आवाजें मारते हैं, सुधार-सुधार चिल्लाते हैं, किन्तु वही घर में पहुँच कर बिना थैली धराये नहीं मानते।

७

सारे घर में खलबली मच गई कि लड़की का पता नहीं है, नहीं मालूम कहाँ चली गई। उधर लग्न की तैयारी हो रही थी। बूढ़े वर देव अपना लम्बा जामा सड़क पर घसीटते हुए मण्डप में आ रहे थे और इधर लड़की की खोज की जा रही थी। कोठरी, दालान, टट्टी, पेशाबघर तथा घर का कोना २ तक ढूँढ़ डाला गया किन्तु लड़की का कहीं पता न चला। शास्त्री जी और उनकी धर्मपत्नी भूख और प्यास के आक्रमण से सोंठ हुए जा रहे थे। इस

किस्से से उनके होश उड़ गये, ऐसी घटना तो कभी सुनी भी नहीं गई थी। दिल में खलबली मच गई कि अब क्या किया जायगा। बारात वाले किस प्रकार मानेंगे। उनको समझाना बड़ी टेढ़ी खोर हो जायगी। आखिर लड़की लापता कहाँ होगई? वे दोनों बुड्ढे प्राणी इसी चिन्ता में बेहोश होगये। किसी भले आदमी को दरवाजे पर बुला कर खाली हाथ लौटा देने में जो भाव किसी सहृदय में पैदा होता है, वही हाल उनका था।

बाराती लोग इस बात से विस्मित हो गये, बुड्ढ की सात दुलहिनों में इस प्रकार से एक भी लापता न हुई थी, उन्हें इस अनहोनी बात से आश्चर्य हो रहा था। लड़की के ढूँढने का अनेक प्रकार से प्रयत्न किया गया, बड़े २ धुरन्धर ज्योतिषी बुलाये गये, किन्तु उसके छिपने के स्थान का कोई भी पता न लगा सका। ये लोग दिशायें अवश्य गिना देते थे किन्तु उनमें स्थान बता देने की शक्ति न थी। सारी रात और दूसरे दिन तक यही झिरसा होता रहा किन्तु कमला का पता न लग सका।

लग्न का मुहूर्त बीत गया, वर पक्ष वालों में निराशा और कन्या पक्ष वालों में उदासी तथा चिन्ता का भाव पैदा होगया। सुकुल लोग इस चिन्ता में थे कि घर लौटने पर क्या कहा जायगा? टोले-मुहल्ले वाली स्त्रियाँ जब दुलहिन देखने आयेंगी, तब उन्हें क्या चीज दिखाई जायगी? पर

की स्त्रियाँ इसे क्या समझेंगी ? घर पहुँच कर बारात वाले थू थू मचावेंगे। अपना मुँह सदा के लिए काला हो जायगा।

अनेक प्रकार से समझाने बुझाने के बाद बराती लोग १०००) की थैली लेकर लखनऊ से वापस गये। इसके नीचे किसी प्रकार से भी आपस में समझौता हो जाना कठिन था। वर पक्ष वाले मुकद्दमा चला कर लड़की वालों से हरजाना वसूल करने के लिए तुले थे। बेचारे शास्त्री जी इन बातों से घबड़ा रहे थे। वे अपनी इज्जत-आबरू बचाने के लिए प्रत्येक शर्त मानने को तैयार थे।

बिना दुलहिन मिले बराती विदा हो गये। शास्त्री जी की घबराहट का कुछ भाग दूर हुआ। अब वे अपनी लड़की की चिन्ता कर रहे थे। पास-पड़ोस के मुहल्ले वाले और घर के सब आदमी कमला के नाम पर धिक्कार रहे थे। सभी पढ़ाने-लिखाने की प्रथा पर आलोचनाएँ कर रहे थे। कोई उसे भ्रष्ट बना रहा था, कोई दुराचारिणी और कोई निर्लज्जा।

इधर कमला के विवाह के दिन ठीक आधीरात की गाड़ी से शरद् लखनऊ आ पहुँचा था। उसने बालिका विद्यालय की प्रधान अध्यापिका द्वारा कमला को पत्र भेज कर उसे वहीं उपस्थित होने को लिखा। लग्न के एक घंटे पूर्व वह अपनी पोशाक बदलकर प्रधानाध्यापिका के साथ ताँगे में बैठकर उस घर से विदा हो गई थी।

शरद् विलायत से ही बनारस ज़िले
भेजा गया था। अतः एक सप्ताह घर पर
जाने के लिए तैयार हो गया। जिस वक्त व
उसके पीछे २ अंगरेज़ी लिबास में कोई स्त्री

८

पं० दीनानाथ का चित्त कमला के वियोग
दिन खिन्न होता गया। उनका ध्यान किसी
जमता था। मस्तिष्क में विचार-धारा कम हो गई
से रोगियों को औषधि आदि देने में प्रायः भ्रम
करता था।

गर्मी के दिन थे। गणेशगंज की पुलिस चौ
दारोग़ा ठाकुर रामसिंह की माता को क़य और द
शिकायत पैदा होगई। संयोग से शास्त्री जी का मकान
से समीप था, जिससे उन्हें ही वहाँ औषधि के लिए उ
पड़ा। रोगी की अवस्था कुछ विशेष चिन्ताजनक न थ
साधारण औषधि से ही लाभ हो सकता था, किन्तु भ्रम
व्यवश शास्त्री जी अर्क कपूर की जगह उसे कोई ऐस
औषधि दे गये, जिससे रोगी की अवस्था शिथिल पड़ने लगी
और १५ मिनट में ही उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

एक तो पुलिस के दारोग़ा, दूसरे जाति के ठाकुर, तीसरे
मद्य सेवी होने के कारण ठाकुर रामसिंह को इस बात से
बड़ा क्रोध आया। उन्हें शास्त्री

सन्देह हो गया और इस विषय की खबर उन्होंने अपने सिविल सर्जन को दी। सारी लाश काली पड़ गई थी, उसका पोस्ट मार्टम करने पर पता लग गया कि औषधि के स्थान में विष का प्रयोग किया गया है। शास्त्री जी की औषधि की परीक्षा की गई तो मालूम हुआ कि उन्होंने अर्क कपूर की जगह कुचिले का सत दे दिया था। बात की बात में शास्त्री जी के हाथों में हथकड़ियाँ डाल दी गईं और उनका चालान कर दिया गया।

शास्त्रीजी के गिरफ्तार हो जाने का समाचार सारे लखनऊ में प्रकाशित होगया। वहाँ के सुप्रसिद्ध अंगरेजी पत्र "डेली टेलीग्राफ" ने तो यहाँ तक लिख मारा कि लखनऊ शहर में गुण्डे वैद्यों की भरमार है, जिसके कारण विद्वान डाक्टरों को कोई पूछता तक नहीं। कल दोपहर को एक नमूना हमारे सामने पेश किया गया है, जिससे पता चलता है कि एक मूर्ख, वैद्य बनकर अब तक लोगों को किस प्रकार ठगता रहा था।

हिन्दी पत्र "आनन्द" ने लिखा कि हमें दुःख और आश्चर्य है कि इस साधारण रोग में शास्त्री जी किस प्रकार से भूल कर बैठे।

शास्त्री जी के सम्बन्धी इस बात से बड़े दुखी हुए। सभी कह रहे थे कि इस अभियोग में उनका बचना कठिन है। उन्हें बड़ा कड़ा दंड दिया जायगा।

सज़ा का हुक्म हो गया। कनौजिया घराने में त्राहि त्राहि मच गई। जप, तप, पूजा, अर्चना आदि सब प्रयोग निष्फल हो गये। सबके मुख उदास हो गये। शास्त्री जी की जी का हृदय इस असह्य व्यथा से विदीर्ण हुआ जा रहा था। इस मुक़दमे में औषधालय की शीशी-बोतलें तक बिक कर साफ़ हो गईं थीं, किन्तु परिणाम वही हुआ जिसका अनुमान बहुत पहिले से ही लगाया जा चुका था।

पं० हृदयनारायण वाजपेयी ने शास्त्री जी के सम्बन्धियों को इस सज़ा के विरुद्ध हाईकोर्ट में अपील करने की सलाह दी, जिसके फलस्वरूप २७ मई सन् १९१६ को वही अपील कान्यकुब्ज समाज के उस व्यक्ति के सामने पेश की गई, जिसे सारा समाज पद के बाहर निकाल चुका था, जिसे सब लोग क्रिस्तान और म्लेच्छ समझ रहे थे।

दैव की गति बड़ी प्रबल है! आज वही क्रिस्तान उस समाज का भाग्य-विधाता बना हुआ था। लोग उसकी ओर बड़ी आशा से देख रहे थे। समाज की लाज आज उसी के हाथ में थी। उस समय उसका अधिकार ईश्वर से भी अधिक समझा जा रहा था।

आध घण्टे तक सारे मिसलों पर विचार करने के बाद उस अपील के ऊपर में लिखा गया—"इस बात को सबूतों से सिद्ध है कि अभियुक्त दीनानाथ वैद्य-शास्त्री का अभियोग, उससे शास्त्री लड़की आपस हो गई है, इस

कमरे में एक दरी बिछा दी गई, जिस पर जज साहब का सारा परिवार बैठ गया। शास्त्री जी की स्त्री घर के अन्दर से अपने सजल नेत्रों से बार बार उस मूर्ति को निहार रही थीं, जिसकी बदौलत उनके पति का छुटकारा हुआ था।

जलपान आदि के अनन्तर शरद ने कमला की ओर संकेत करके शास्त्री जी से पूछा—"आप इन्हें पहिचानते हैं?" शास्त्री जी ने आँखें नीची करके कहा—"यह मेम साहिबा तो आपकी धर्मपत्नी मालूम पड़ती हैं।"

शरद ने मुसकराते हुए कहा— अच्छा, इन्हें पहिचानते हो?

बुड्ढे शास्त्री जी ने अपनी आँखें फाड़ २ कर देखना आरम्भ कर दिया, किन्तु उन्हें सफलता न मिल सकी। इसी बीच कमला ने पिता के चरणों पर गिर कर कहा— "चाचा, क्या मुझे आप भूल ही गए?"

शास्त्री जी अपनी प्यारी कन्या कमला के कंठस्वर को तुरन्त पहिचान गए और हर्ष से गद्गद् होकर चिल्ला उठे—मेरी प्यारी बेटी!......इसके आगे उनकी जबान से और कुछ न निकल सका। शास्त्री जी की स्त्री के पैर हर्ष से फूल गए। उन्होंने बड़ी मुश्किल से अन्दर का दरवाजा

खांस कर पुकारा—बिटिया कमला, क्या तुम सचमुच आज मुझे मिल गई हो ?

घर में उल्लास और हर्ष का समुद्र उमड़ आया शास्त्री जी अपनी स्त्री तथा परिवार वालों के सहित, अपने दामाद कन्या और दोनों नातियों को देख देख कर गद्गद् हो रहे थे।

चौबे की लड़की

१

कानपुर से इलाहाबाद जाने वाली रेलवे लाइन पर कंसपुर एक छोटा सा स्टेशन है। उसके स्टेशन-मास्टर पं० जगत नारायण चौबे यद्यपि मँडी दिखाते २ बुड्ढे हुए जा रहे थे, किन्तु बेचारे अभी तक अविवाहित बने हुए थे। इससे स्टेशन के कर्मचारी गण डी० टी० एस० और छोटे २ गार्ड आदि आपको "बाल ब्रह्मचारी" के नाम से पुकारा करते थे। गाड़ी से आने जाने वाले मुसाफिरों तथा कुली लोगों के अतिरिक्त आपको बाबू जी कहने वाला और कोई न था। परमात्मा को कृपा से घर में माता-पिता आदि की भी सफाई हो चुकी थी, नहीं तो कभी वे ही आपको बाबू या उसका अपभ्रंश बबुआ आदि कह कर पुकार देते, जिस से दिल का हौसला मिट जाता।

पास ही के क्वार्टर में डिपुटी स्टेशन-मास्टर अपने परिवार के साथ किल्ल-मिल्ल मचाया करते थे। कोई उन्हें बाबू जी कह कर पुकारता था, कोई स्टेशन-मास्टर और

कोई मास्टर बाबू। कभी २ उनकी धर्मपत्नी भी दरवाजे की आड़ में खड़ी होकर अपने कोमल स्वर से बोल देती थी कि 'बाबू जी, खाना तैयार है।' हमारे प्रसिद्ध बाल ब्रह्मचारी चौबे जी को इन बातों में एक प्रकार का आनन्द और वेदना भी हुआ करता थी। आनन्द मिलता था उन सबके स्वरों में और वेदना होती थी अपनी दशा पर।

कुछ काल इसी प्रकार बीता। चौबे जी रात-दिन विवाह के लिए तड़पते रहते थे किन्तु उन्हें अपनी लड़की सौंप देने वाला ससार में नजर न आता था। उनके कुल में यह रीति थी कि अगर वे किसी के यहाँ शादी करेंगे तो बदले में उन्हें भी एक लड़की उसी घर में देनी पड़ेगी। कभी इन बातों की लिखा-पढ़ी अदालत तक से हो जाया करती थी और लड़की का जन्म होते ही वह उस घर में सौंप दी जाती थी, जिसके यहाँ से कभी किसी समय कोई लड़की उस घर में आई होती थी। लेखक की आँखों ने ऐसे अनेक दृश्य देखे हैं कि जिसमें ५ या ६ महीने की लड़की एक मरणासन्न बुड्ढे के हाथों सौंप दी गई है। उसका उपभोग किसने और कब किया इसका पता लगाना जरा कठिन है।

चौबे जी जन्म से ही सफाचट थे—लड़की कहाँ से ... जिसे भेट चढ़ा कर अपना विवाह कर लेते? इसी ... अभी तक उनका विवाह करने वाला कोई नहीं पैदा

हुआ था। इस चिन्ता में वे दुबले हुए जा रहे थे। वे कभी अपने क्वार्टर में सोच किया करते, तो कभी स्टेशन के कमरे में। कभी जब बाहर अकेले घूमने को निकल जाते तो अपने दोनों हाथ सूर्य और चन्द्रमा की ओर उठा कर बड़े आर्त स्वर से चिल्ला पड़ते कि हे देव, अब मुझे तुम्हारी ही ओर से आशा है। क्या स दास का जन्म यों ही बीत जायगा ?

गुसाईं तुलसीदास जी ने बहुत ठीक कहा है कि "जा पर जा कर सत्य सनेहू, सो तोहि मिलै न कुछ सन्देहू।" एक दिन जाड़े की रात थी। चौबे जी अपनी कुर्सी पर बैठे कुछ लिखा-पढ़ी कर रहे थे। इतने में उन्हें किसी नव-जात बालक के रोने का शब्द सुनाई पड़ा। पता लगाने पर मालूम हुआ कि स्टेशन की टट्टी के अन्दर लगभग दो घंटे पहिले की पैदा हुई लड़की पड़ी रो रही थी। उसके शरीर पर कुछ सूखे पत्ते पड़े थे। आँखें बन्द थीं। सारा बदन लोहू से सना था। चौबे जी इस दृश्य को देख कर काँप उठे और उन्होंने तत्क्षण स्टेशन के कर्मचारियों को लाकर उस लड़की को दिखाया। कुछ देर तक सोचने विचारने के बाद यह निश्चय किया गया कि यह लड़की चौबे जी के सुपुर्द की जाय। वही इसे पालें पोसें। परमात्मा ने उसे उन्हीं के लिए भेजा है। ऐसे संयोग को हाथ से खो कर उसे पुलिस आदि में देने से कुछ लाभ नहीं है। लड़की हाथ से निकल

बड़ी प्रसन्नता थी। अब वे उस लड़की की ओर से बिलकुल निश्चिन्त रहने लगे। उन्हें केवल रात्रि ही में उसकी हिफ़ाज़त करनी पड़ती थी।

दाई की सच्चरित्रता पर चौबे जी कुछ ऐसे लोटपोट हो गये कि उन्होंने अपने क्वार्टर का सारा सामान उसी के भरोसे पर छोड़ दिया! अब उन्हें केवल रोटी ही बनानी पड़ती थी। घर का शेष सारा काम-काज वही दाई करती रहती थी। चौबे जी को बुढ़ापे में सहारा मिल गया। घर में बातचीत करने वाला भी आ गया, इससे अधिक इतनी जल्दी और क्या हो सकता था?

५ वर्ष इसी प्रकार बीत गए—लड़की को पालने वाली दाई इस बीच चौबे जी की घर वाली बन चुकी थी। वह अब रात को अपने घर न जाती थी। वहीं चौबे जी के क्वार्टर में सोया करती थी। पास-पड़ौस वाले उसे स्नेह की लता मान रहे थे। वे कह रहे थे कि इस प्रकार प्रेम पूर्वक पालने वाली दाई बहुत कम मिला करती हैं। चौबे जी रात-दिन उसी की तारीफ़ के पुल बाँधा करते थे।

इसी बीच चौबे जी की बदली "पनकी" स्टेशन को हो गई। वहाँ पर अब वे निश्चिन्त होकर अपने परिवार के साथ रहने लगे। घर में स्त्री थी और वह ५ वर्ष वाली लड़की। जिस संसार को वे किसी समय असार मान चुके थे, उसे ही अब स्वादिष्ट समझने लगे। वही अब सार-

प्राप्त होने वाली है। संसार चक्र में पड़कर प्रत्येक प्राणी को दुःख और सुख की परिक्रमा करनी पड़ती है। विष के बाद अमृत है, और अमृत के बाद विष। हाँ, एक बात अवश्य है कि किसी को आर्थिक कष्ट मिलता है, तो किसी को शारीरिक और किसी को आत्मिक। कोई यह नहीं कह सकता है कि वह प्रत्येक अवस्था में सुखी रहा है। उसकी आयु का एक भी क्षण दुःख में नहीं बीता। इसी प्रकार से कोई यह भी मानने को तैयार न होगा कि उसकी आयु में उसे क्षणमात्र भी सुख प्राप्त नहीं हुआ। आशाएँ पूरी हो जाना ही सुख है, और इसके प्रतिकूल होने को दुःख कहा जाता है। यह बात अवश्य है कि सुख के दिन जाते देर नहीं लगती और विपत्ति की रात्रियाँ असह्य हो जाती हैं, किन्तु जिसके हृदय में साहस है, उत्साह है, जो दुःख को आलिंगन करने का हृदय रखता है, वही कर्मवीर कहलाता है, अन्त में उसी की विजय होती है और वही देवता के समान सारे संसार का पूज्य माना जाता है। सुख की नींद में सोये हुए धनी को कभी मान और प्रतिष्ठा प्राप्त ही नहीं हुआ। यह दूसरी बात है कि उसे लाखों आदमी सलाम करते रहते हैं, उसकी हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं, किन्तु यह सब क्षणिक है, स्थायी नहीं कहा जा सकता। लोग उसे नहीं किन्तु उसके पास निवास करने वाली लक्ष्मी को प्रसन्न करने के लिए प्रणाम करते हैं।

गया! हाथ मलकर पछताने लगे। पुलिस में रिपोर्ट की गई, किन्तु कुछ भी पता न चल सका। अब फिर उसी छोटी बच्ची के साथ वे अपने नीरस दिन व्यतीत करने लगे। अब धन और जन दोनों की चिन्ता होने लगी।

माघ का महीना था। चौबे जी अपनी लड़की के साथ ही पलंग पर लेटे हुए थे। सहसा उनके मन में विचार उत्पन्न हुआ कि इसी लड़की के साथ मैं अपनी शादी क्यों न कर लूँ। हमारे घराने में तो लोग ८० प्रति शत इसी प्रकार की नन्हीं बच्चियों से विवाह कर लिया करते हैं। इसमें हर्ज ही क्या है? यह मेरी सगी लड़की तो है नहीं टट्टी में पड़ी हुई मिली थी। इसे पाल पोस कर बड़ी करके दूसरे को सौंप देना कहां की बुद्धिमानी है। परमात्मा ने मुझे दिया है, तो अपना ही समझना चाहिए। हां अगर अपनी लड़की होती तो फिर ऐसा व्यवहार करना अनुचित था।

चौबे जी की मनोवृत्ति बदल गई। अब वे उस लड़की को किसी दूसरे ही रूप में देखने लगे। उनके हृदय में उस के प्रति अब पिता का सा स्नेह न था किन्तु अब वह प्रेम उत्पन्न होगया था, जो एक पति के हृदय में अपनी पत्नी के प्रति उदय हुआ करता है। लड़की क्या थी, शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की भाँति दिन पर दिन खिल रही थी। उसकी अवस्था भी १० वर्ष की हो चुकी थी। उस दिन वसन्त-

४

हरद्वार में कुम्भ का मेला था। चौबे जी का मन भी उस तीर्थ-यात्रा के लिये मचल पड़ा—किराया भाड़ा भी जेब से देना न था, इ० आई० आर० से पास माँग कर अपनी धर्मपत्नी सहित सारे जीवन का पाप धोने के लिए गाड़ी में बैठ गये। भीड़ की भर मार थी, लोग चारों ओर से पुण्य लूटने के लिए लपके जा रहे थे। गाड़ी खचाखच भरी थी। लखनऊ से स्पेशल ट्रैनें दौड़ रही थीं। चौबे जी भी किसी प्रकार दबते-पिचकते अपनी स्त्री का हाथ मजबूती से पकड़े हुए किसी कोने में छिपे थे। आज उन्हें पता चला कि पाप धोने में भी कितना कष्ट उठाना पड़ता है। भूख प्यास तो लोगों के साथ धक्का मुक्की करने में ही चकनाचूर हो चुके थे—रह गया पेशाब करना, सो भी कठिन हो रहा था। बड़ी तपस्या से टट्टी के दर्शन मिलते थे। साँस लेने के लिये हवा तक न थी, सिगरट-बीड़ी के धुएँ में ही सारा कम्पार्टमेंट गुजारा कर रहा था। हरद्वार स्टेशन नसीब होने पर सब लोग वैतरिणी पार हुए।

उस दिन हर की पैड़ी में ही स्नान करने का महात्म्य था। लोग अपनी २ जानों पर खेल कर भीड़ में घुस जाते थे और जिस प्रकार भी होता बिना एक गोता लगाये वहाँ से वापस न लौटते। कहना न होगा कि इस गोते में कितना बड़ा पुण्य टपका पड़ता था—हाथ पैर टूटना दबकर मर

रहने का काम नहीं पड़ा था । मेला समाप्त हो जाने पर चौबे जी के पते पर तार दिया गया, जिसके उत्तर में उनके किसी मित्र ने सूचित किया कि वे अभी तक कुम्भ के मेले से वापस नहीं आये हैं। आप उनकी स्त्री को यहाँ पहुँचा जावें, उनके आ जाने पर यह उन्हें सौंप दी जायगी ।

कांग्रेस के दो स्वयंसेवक उस बालिका के साथ दिवियापुर रवाना किये गये । हरद्वार से लुक्सर पहुँचते २ काफी अँधेरा हो चुका था । भीड़ की अधिकता से लोग गाड़ी में बैठने के लिये तरस रहे थे । एक के ऊपर दूसरा गिरा पड़ता था । ऐसी ही अवस्था में दोनों स्वयंसेवक उस बालिका को एक बैंच के कोने में बिठाये हुए उसके आस पास खड़े थे ।

मनुष्य की इन्द्रियाँ चंचल हैं। चाहे कोई धुरन्धर पंडित हो, अथवा खद्दर धारी प्रतिष्ठित नेता; लाखों की संख्या में एक ही ऐसा मिलेगा जो अपनी इन्द्रियों का दास न हो । खद्दर धारण कर लेने से ही किसी के अवगुण और दोष नहीं छिप जाते—इन्द्रिय लोलुपता का त्याग करना बड़ा कठिन है। काल और स्थान अनुकूल मिल जाने से बड़े बड़े ऋषि मुनि डिग जाते हैं, बाघ की खाल ओढ़ लेने से शृगाल सिंह नहीं हो सकता। आदत बड़ी कठिनता से दूर की जाती है। दोनों स्वयंसेवक भी इसी रोग के रोगी थे । उनका मन उस बालिका पर चंचल हो उठा और रात्रि के अँधियारे में मौक़ा देख कर वे दोनों ही उसके साथ छेड़

से अधिक न थी—शरीर से हृष्ट-पुष्ट मालूम पड़ता था। उसका विवाह अभी तक कहीं नहीं हो सका था, अतः उस बालिका को पाकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। बैठे बिठाये मित्रों द्वारा उसके हाथ सोने की चिड़िया लग गई। चौबे के घर में उत्पन्न होने के कारण उसका भी विवाह होना दुर्लभ था, घर में कोई ऐसी कन्या न थी जो बदले में दी जा सके। धनी परिवार का होने पर भी उसे दुलहिन मिलना नसीब न था। बालिका भी ऐसे शिक्षित युवक को पाकर उस पर लट्टू हो गई और परस्पर एक दूसरे को पति-पत्नी के रूप में अपनाने लगे। राम अवतार ने अपने दोनों मित्र स्वयं-सेवकों को इस उपकार के बदले में कुछ रुपये देकर राजी कर लिया। दोनों का जीवन सुख से व्यतीत होने लगा। उस बुड्ढे से पीछा छूटा।

उस साल हिन्दू और मुसलमानों में दाढ़ी और चोटी का सिर-फुटौवल युद्ध हो रहा था—सारा लखनऊ एक दूसरे पर दाँत पीस रहा था। अनेक आदमी नित्य प्रति छुरे-लाठी, और काता-बल्लम के शिकार हो रहे थे। राम अवतार भी अपने दुमंजिले मकान के कमरे में बैठा हुआ सड़क पर होने वाले इस नरमेध यज्ञ को देख रहा था—पास-ही उसकी धर्म-पत्नी भी विराजमान थीं। इसी बीच में किसी बुड्ढे हिन्दू फकीर के वक्षस्थल में एक मुसलमान

उद्धार

१

कलकत्ते की केनिंग स्ट्रीट पर दो युवक आपस में बातें करते हुए जा रहे थे। दोनों ही समवयस्क थे। २२-२३ वर्ष से अधिक आयु न थी। शरीर से तन्दुरुस्त और देखने में खूब सूरत जान पड़ते थे। एक का नाम था चन्द्रमौलि और दूसरे का श्रीधर। चलते चलते चन्द्रमौलि ने एक मकान की ओर इशारा करके कहा—"बस, यही मेरा मकान है।" श्रीधर ने उस ओर देख कर कहा—"अच्छा, फिर कभी मिलूँगा। मैं भी अब घर जा रहा हूँ।"

चन्द्रमौलि बोला—कल तो सन्डे है, स्कूल बन्द ही रहेगा। क्या आप कल आ सकते हैं?

श्रीधर ने उत्तर दिया—देखो, प्रयत्न करूँगा।

चन्द्रमौलि—जहाँ तक हो सन्ध्या के ४ बजे के पहिले ही आइयेगा, क्योंकि फिर घूमने भी तो जाना पड़ेगा।

श्रीधर—बहुत अच्छा, नमस्कार।

चन्द्रमौलि ने कहा—"नमस्कार भाई" और अपने मकान की सीढ़ियों पर पैर रखने लगा।

सुनाई पड़ा था। पास आने पर उसे दिखाई पड़ा कि एक युवक के सामने किसी स्त्री की लाश पड़ी हुई थी। उसने उसकी ओर देख कर पूछा— "इस की हत्या कैसे हो गई ?"

युवक ने काँपते हुए स्वर में उत्तर दिया—"मुझे कुछ भी मालूम नहीं। मैं तो इस रास्ते से अपने घर जा रहा था, यहाँ आने पर जब यह हाल देखा तो भय से चिल्ला उठा।

पास-पड़ोस वाले गली में इकट्ठे हो गये। वे सब के सब उस लाश को पहिचानने का प्रयत्न करने लगे किन्तु सब व्यर्थ हुआ। बिना सिर देखे लाश का पता लगा लेना कोई आसान काम न था।

सिपाही ने युवक का हाथ पकड़ कर कहा—ठीक ठीक बताओ क्या बात है ?

युवक का हाथ काँप रहा था। उसका मुख सूख गया। किसी प्रकार बड़ी मुश्किल से उसने जवाब दिया—"भाई, मैं तो ठीक ही कह रहा हूँ, इसके आगे मुझे कुछ भी मालूम नहीं है।

सिपाही युवक की ऐसी अवस्था को देखकर उस पर सन्देह करने लगा। भीड़ वाले भी उसे ही इस खून का कारण समझ बैठे। अभाग्य इसे कहते हैं कि उसकी जेब से एक बड़ा चाकू भी बरामद हो गया जिसे वह अपनी

आत्मरक्षा के लिए साथ रखता था। फिर क्या देर थी! तुरन्त ही वह इस हत्या का अपराधी ठहरा दिया गया। सिपाही उसका हाथ पकड़े हुए आगे २ चल रहा था और पीछे २ भीड़ चली जा रही थी। चौराहे पर आकर सीटी बजाते ही कई एक कान्स्टेबिल दौड़ पड़े, जिन्हें साथ लेकर वह फिर उस जगह वापस आ गया, जहाँ पर स्त्री की लाश खून में भीग रही थी।

तब तक शहर कोतवाल भी वहाँ आ डटे और उस लाश की बाबत पास-पड़ोस वालों से पूछ-ताछ करने लगे। दो घंटे तक यही क़िस्सा होता रहा, किन्तु उन्हें सफलता न मिल सकी। अन्त में उस युवक का चालान उसी लाश के साथ कर दिया गया।

२

काकूपुर के तिवारी पं० अयोध्या प्रसाद कलकत्ते में कपड़े का व्यवसाय करते थे। घर में चौथी स्त्री, दो छोटे बच्चे और एक २० वर्ष की आयु वाली विधवा बहिन के अतिरिक्त और कोई न था। हरीसन रोड पर आपकी दूकान थी और घर किसी गली में था। आमदनी अच्छी थी, नौकर चाकर भी लगे रहते थे।

तिवारी जी नित्य प्रातः काल ८ बजे नहा-धोकर घर से निकल जाते थे और फिर दोपहर को केवल २ घंटे के लिए वापस आते। उसके बाद १२ बजे रात को फुरसत

मिलती थी। घर में एक १२ वर्ष का गोरखपुरी लड़का नौकर था, वही चौका-बरतन किया करता था और बाज़ार से खाने-पीने का सामान भी लाया करता था।

तिवारी जी की बहिन का नाम कौशल्या था। जब वह दस वर्ष की थी, तभी विधवा होगई थी। उसकी ससुराल में कोई न था। ससुर सन् १९१४ की जर्मनी वाली लड़ाई में भेंट हो गये थे और पति देवता हैज़े से चल बसे थे। केवल यही दो प्राणी उसने अपनी ससुराल में देखे थे, इसके अतिरिक्त और कोई न था जो बचा होता। इसी कारण वह अपने बड़े भाई के साथ आकर यहाँ रहने लगी थी। घर का सारा काम-धन्धा अपने ही हाथों से करती रहती थी। भोजन बनाकर खिलाना, घर वालों की धोती छाँटना, घर की सफ़ाई रखना और अपने भतीजों का लालन पालन करना तो उसके नाम ही लिख दिया गया था। महीने में केवल ५ ही दिन ऐसे मिलते थे, जब उसे इन बातों से छुट्टी रहती थी।

तिवारिन पास के मकान में रहने वाली किसी बंगालिन के यहाँ अपना सारा दिन बिता देती थीं। वे भी ८॥ बजे प्रातः घर से निकल जाती थीं और ११॥ बजे वापस आकर फिर २ बजे चली जाती थीं, इसके बाद शाम को ७-८ बजे लौटती थीं। यही उनकी दिन चर्या थी। घर के काम-काज से उन्हें मतलब न था। महीने में केवल ५ ही दिन उन्हें

यनानी होती थी, जिसमें भी वे काँप उठती थीं। बड़ी मुश्किल से अधपकी दाल और जली हुई रोटियाँ बना पाती थीं। संगीत से उन्हें बड़ा प्रेम था, उसी बंगालिन के यहाँ हारमोनियम के स्वर के साथ अपना स्वर मिलाती रहती थीं।

बाबू सुरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती डाक्टरी किया करते थे। उन्हें भी संगीत से इतना अधिक प्रेम था कि तिवारिन तथा अपनी स्त्री-बच्चों को हारमोनियम के निकट बैठे हुए पाकर मचल पड़ते थे और बिना एक-आध गीत गाये कभी भी न हटते। यद्यपि तिवारिन की अवस्था चक्रवर्ती बाबू की स्त्री से कम थी और इस हिसाब से उन्हें कुछ संकोच करना चाहिये था, किन्तु राग-रागिनी की लय में पड़कर किसी को किसी की खबर न रहती थी। कुछ दिन तक तो अवश्य इस संकोच का ढोंग रचा गया था, किन्तु जब चक्रवर्ती बाबू ने पर्दा प्रथा का विरोध किया, उस दिन से खुले रूप से गाना-बजाना प्रारम्भ हो गया था।

तिवारिन की आयु भी २२ वर्ष से अधिक न थी। दोनों बच्चे तिवारी जी की तीसरी स्त्री से पैदा हुए थे। अभी तक उनके कोई संतान न हुई थी। स्वर सुरीला था। चक्रवर्ती बाबू उनके एक ही गीत पर लट्टू हो जाते थे। यद्यपि यह सत्य है कि वे उनके सौन्दर्य पर मुग्ध न हुए थे, किन्तु तिवारिन के कंठ से निकला हुआ प्रत्येक शब्द बाण बन कर उनके हृदय को छेद रहा था।

में आकर नौकर से बोले—"उस हरामजादी को यहाँ बुला लाओ।"

कुछ ही मिनटों में तिवारिन आ पहुँची। तिवारी जी ने क्रोध से काँपते हुए कहा—लुच्ची, तू रण्डी बनकर क्या मेरी नाक कटाना चाहती है?

बूढ़े पति की तरुण स्त्री अपने पति के बल और साहस से भलीभाँति परिचित होती है। उसे उसका भय उसी भाँति रहता है, जैसा भय किसी हाथी के हृदय में कुत्तों की ओर से होता है।

जब स्वयं प्रकृति भी बुड्ढे की परवाह न कर उसे नित्य प्रति अपने चरणों पर झुकाने का प्रयत्न करती रहती है, तब फिर उन जवानों के जोरा का ठिकाना ही क्या है, जो बड़े बड़े पहलवानों को अपने नैन के एक ही नैन से घायल कर देते हैं। तिवारी जी बुड्ढे थे, और तिवारिन जवान। पति की ओर से उनके हृदय में स्वप्न में भी चिन्ता न थी। पति के बल को कई बार पराजित कर चुकी थीं। उन्होंने तिवारी जी की ओर देखकर पूछा—"आखिर बात क्या है? आप इस प्रकार बक-बक क्यों कर रहे हैं?

तिवारी जी की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। उन्होंने काँपती हुई जबान से कहा—हरामजादी, चोरी करके कोतवाल को डाँटने का प्रयत्न कर रही है? क्या मुझे अपना गुलाम समझ रक्खा है?

तिवारिन ने कहा—बस, बस, शान्त हो जाओ। मुझे तुम्हारी इस बन्दर-घुड़की की परवाह नहीं है।

तिवारी जी बोले—परवाह नहीं है, तभी तो तुम दूसरे के घर में ऐश करती रहती हो। मुझे तो आज मालूम हुआ है कि तुम्हारे कैसे नीच कर्म हैं।

तिवारिन ने जवाब दिया—क्या करूँ, तुम्हारे पाछे मैं अपनी जिन्दगी खाक में नहीं मिला सकती। तुम एक नपुंसक हो, सारी दुनिया तो वैसी नहीं है। आखिर तरुण स्त्री के सामने बूढ़े पति की ही हार हुई। तिवारी जी अपनी स्त्री की निर्लज्जतापूर्ण बातों के आगे गड़-से गये और कुछ ही मिनटों में उनकी सारी तड़क-भड़क हवा हो गई। बुढ़ापे में शादी कर लेने पर पछताने लगे।

दूसरे दिन से उनकी दूकान प्रत्येक रात्रि को दस बजे से ही बन्द हो जाया करती थी।

३

चन्द्रमौलि सारे दिन भोधर की राह देखता रहा किन्तु उसकी मूर्ति उसे कहीं न दिखाई पड़ी। दूसरे दिन स्कूल जाने पर भी वह उसे न मिल सका। रजिस्टर में उसके नाम के आगे उस दिन के खाने में गैरहाजिरी भर दी गई थी। स्कूल बन्द हो जाने पर वह अपने मित्र के कुशल समाचार प्राप्त करने के लिए बाइसिकिल को बेतरह तेजी से बढ़ाता हुआ भागा जा रहा था। पर पहुँचने पर किवाड़

एक ओर फेंककर जीने से चटपट नीचे उतरकर श्रीधर के मकान की ओर चल पड़ा। ज्यों ही वह उस खून वाले मुहल्ले में घुसा वहाँ लोगों की भीड़ दिखाई पड़ी, सबके मुख पर चिन्ता व्याप्त हो रही थी। पूछने पर मालूम हुआ कि परसों रात्रि को वहाँ किसी स्त्री का खून हो गया है और एक नवयुवक इस अपराध में गिरफ़ार किया गया है। शहर कोतवाल कह गये थे कि मुहल्ले वालों से उस स्त्री की लाश का पता लगाना चाहिए, नहीं तो प्रत्येक घर के अन्दर पुलिस के सिपाही घुस कर छानबीन करेंगे।

"एक युवक गिरफ़ार किया गया है" इन शब्दों से चन्द्रमौलि के हृदय में एक प्रकार की चिन्ता उत्पन्न हो गई। उसका दिल कह रहा था कि वह और कोई नहीं है, वह श्रीधर ही है। फिर विचार होता था कि वह भला ऐसा कर्म क्यों करेगा? घर का अकेला है। पढ़ने की लालसा से ही यहाँ आया है। किसी प्रकार ट्यूशन आदि करके अपनी गुजर करता है। उसे किसी के भले-बुरे से क्या मतलब है! वह ऐसा काम कभी नहीं कर सकता।

आगे बढ़ने पर देखा गया कि श्रीधर की कोठरी के दरवाजे पर ताला लटक रहा था और उसका कहीं पता न था। घर के और किरायेदारों से पूछने पर पता चला कि ... तो परसों रात्रि से ही पता नहीं है। कोई २ यह भी ... था कि यह परसों के "नारायण प्रसाद बाबू लेन"

वाले हत्याकाण्ड में गिरफ़ार करके ले जाया गया था।

चन्द्रमौलि के मुख पर उदासी दौड़ गई। उसने जैसी शंका की थी, वही बात सामने आई। तब भी उसका चित्त गवाही दे रहा था कि ऐसा सुशील, सीधा और गरीब लड़का किसी की हत्या कभी नहीं कर सकता। परसों रात के १० बजे तक तो वह मेरे साथ घूमता ही रहा था।

बाइसिकिल का हैंडिल पुलिस लाइन की ओर घुमा दिया गया। उस समय सायंकाल के ६ बजे चुके थे। लगभग आधा घंटे तक दौड़ लगाने के बाद चन्द्रमौलि वहाँ पहुँचा। श्रीधर पास ही की हवालात में बन्द था। तीन-चार सिपाही अपनी २ बन्दूक़ों पर संगीनें चढ़ाये उसके आस-पास चक्कर लगा रहे थे। बरामदे के बाहर एक दारोगा जी कुर्सी पर बैठे हुए थे। उनके सामने वाली कुर्सियों पर दो तीन खुफ़िया पुलिस वाले भी बैठे थे।

बाइसिकिल खड़ी करके चन्द्रमौलि ने दारोगा जी को सलाम किया और पूछा—क्या आप ने परसों किसी युवक का हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में चालान किया है ?

दारोगा जी ने एक बार उसकी ओर देखा और फिर तेज होकर बोले—हाँ, क्या तुम्हारा भी उससे कुछ सम्बन्ध है ?

चन्द्रमौलि ने उत्तर दिया—वह युवक मेरा सहपाठी है। मैं उससे मिलना चाहता हूँ।

दारोगा जी ने कहा—बिना शहर कोतवाल की इजाज़त लिए ऐसा नहीं हो सकता।

चन्द्रमौलि ने बड़ी नम्रता से पूछा—तो क्या मैं उसे देख भी नहीं सकता ?

दारोगा जी ने कड़क कर कहा—तुम्हारा मतलब क्या है ?

चन्द्रमौलि फिर बोला—यही कि मैं उसे एकबार अपनी आँखों से देखना चाहता हूँ।

दारोगा—आप कोई आज्ञा पत्र लाये हैं ?

चन्द्रमौलि—आज्ञा पत्र तो कोई नहीं है। हाँ, अगर आप एकबार मुझे उसकी सूरत देख लेने दें तो मैं आपका बड़ा अहसान मानूंगा।

इसी बीच श्रीधर अपने मित्र की आवाज पहिचान कर भीतर से बोल उठा-"चन्द्र बाबू, मैं परसों रात को निरपराध पकड़ लिया गया। मेरा इस हत्या से ज़रा भी सम्बन्ध नहीं है। खैर, आप मेरी चिन्ता न करें, परमात्मा मेरा मालिक है।"

दारोगा जी कुर्सी पर से तमक कर उठ खड़े हुए और हाथ का हण्टर हिलाते हुए हवालात के सिकचों के पास पहुँचकर अभियुक्त से बोले—चुप रहता है हरामजादा, या नहीं ? मारे हण्टरों के खाल उधेड़ दूँगा। अगर तूने हत्या की थी तो यह चाकू क्या मेरे घर से आ गया था ?

[illegible] शान्त हो गया—दारोगा के भय से उसके

मुँह से एक शब्द भी न निकल सका। उसने अपना मस्तक नीचे झुका लिया।

बरामदे से बाहर निकल कर दारोगा जी ने देखा कि बाइसिकिल वाला युवक भी उस समय तक वहाँ न था. जिससे लाचार होकर हण्टर समेट कर रख लेना पड़ा—काम में न लाया जा सका।

४

तिवारिन अपनी उस दिन की फजीहत का कारण कौशल्या को ही समझ बैठीं। वे अब उसे दूसरी दृष्टि से ताकने लगी थीं, जिस प्रकार एक बिल्ली चूहे पर दृष्टि रखती है। वे सर्वदा उसे क्रोध की नजरों से देखा करती थीं—मामूली-मामूली बातों पर गालियों की बौछार लगा देती थीं। भोजन के प्रत्येक पदार्थ में कुछ न कुछ दोष अवश्य निकाल देतीं। कभी कहती थीं कि आज आटा अच्छी तरह से नहीं गूँधा गया है, कभी दाल पतली हो जाती थी, कभी नमक की मात्रा अधिक पड़ जाती थी, कभी साग में मिर्च ज्यादा पड़ जाती थी, और कभी २ रोटी भी स्वाद रहित मालूम पड़ती थी। फलतः कुछ दिन इसी प्रकार बीत गये। एक का हृदय कठोर था और दूसरे का सरल, जिससे अत्याचार की यह धींगा-धींगी बिना रोक-टोक चलती रही, महात्मा ईसा के मतानुसार एवं महात्मा गाँधी के सिद्धान्त के अनुकूल, एक गाल पर चपत बैठते ही, विधवा ...

अपना दूसरा भी गाल सामने कर देती थी। वह अपनी भौजाई की प्रत्येक पशुता को सहन करने के लिए तैयार थी, क्योंकि उसे यह बात अच्छी तरह याद थी कि उस घर के अतिरिक्त संसार में उसका कहीं भी ठिकाना नहीं है। अत्याचार का प्रतिकार करके किसके दरवाजे पर जाकर खड़ी हूँगी ? कौन हृदय मुझ विधवा को आश्रय देगा ? इन्हीं बातों को सोच कर, किसी प्रकार से अपनी मनोवृत्तियों को दबा-दबा कर, एकान्त में बैठ कर, वह खून के आँसुओं को पोंछती रहती थी । अपने भाई से यह सब कथा कह देने का साहस न होता था। कुत्ते की भाँति सारे दिन घर वालों की आज्ञा पालन करके रात को कुछ रोटी के सूखे टुकड़े पानी के घूँटों के साथ निगल जाया करती थी।

अत्याचारी को अत्याचार करने के लिए उसका कारण ढूँढने में देर नहीं लगती—मामूली २ बातों पर ही वह तिल का ताड़ खड़ा कर देता है। व्यर्थ और निष्प्रयोजन के साधनों से ही वह क्रूरता की चादर सी-कर तैयार कर देता है।

तिवारिन उस बेचारी विधवा को नेस्त-नाबूद कर देने के लिए तैयार थीं। संयोगवश, एक दिन प्रातःकाल नींद में उसकी आँख लग गई, जिससे रोटी बनाने में कुछ विलम्ब हो गया। फिर क्या था ? बस इसी बात पर उन्होंने रौद्र रूप धारण कर लिया। रसोईघर का चूल्हा फोड़ डाला

गया। बर्तन भांड़े फेंक दिये गये। रोटियाँ जला दी गईं। बाल्टियों में भरा हुआ पानी ढड़ेल दिया गया और उस बेचारी विधवा का सारा शरीर डंडों की मार से काला कर दिया गया। उसकी अँगुलियाँ चूल्हे की आग में घुसेड़ दी गईं। आँखों में मिर्चा मल दिया गया।

इतना सब हो जाने पर भी उस असहाया के मुख से चूं तक न निकला। वह अपने भाग्य को ही दोषी ठहरा कर अपने आँसुओं को पोंछने लगी।

तिवारी जी दोपहर को रोटी खाने के लिए आये तो घर को इस अवस्था में पाकर बिचारे चुप चाप खामोश हो कर बैठ गये। तिवारिन ने गर्ज कर कहा "तुम अपनी इस कुलवती को मेरी आँखों के सामने से हटा दो।

मैं इसका मुख तक देखना पसन्द नहीं करती।

तिवारी जी ने पूछा—बात क्या है?

तिवारिन कड़क कर बोली-बात क्या! यह सारे दिन खसम को तलाश किया करती है। समझाने-मना करने पर उल्टे गालियाँ सुनाने को तैयार हो गई। मैं इसकी रखेली तो नहीं जो इसकी गालियाँ सुनूं। तुम भले ही इसे रानी महरानी बनाते रहो।

तिवारी जी—मुझे भला क्यों दोष देती हो? मैं तो इससे मुंह से भी नहीं बोलता हूँ।

तिवारिन—यह सब तुम्हारी ही करतूत है। तुम्हीं ने

तो इसे सिर पर चढ़ा रक्खा है। कोई भी बात कही जाती है मानों कुछ खबर ही नहीं है।

तिवारी जी—अच्छा तो फिर शान्त हो। यह बेचारे तो बोलती तक नहीं है।

तिवारिन—बोले क्या ? जो इसके गुन न जानता हो उसके सामने जा कर बोले। यहाँ तो छठी पसनो तक यार किये बैठी हैं। आज उस छोकड़े के साथ सोई थी, कल किसी दूसरे को ढूंढ़ेगी। ऐसी ही औरतें तो खसम को मार कर सती का रूप धर लेती हैं। तुम्हारे सामने चुप हो गई तो देवी बनी हुई है—घर से बाहर पैर बढ़ाओ तब पता चले कि कितने ज़ोर से डींकती है।

तिवारी जी—हाँ ! ऐसा है ?

तिवारिन—तो क्या मैं झूठ कह सकती हूँ ?

तिवारी जी—तब तो बड़ी नालायक निकल गई। मैं तो इसे पूरी देवी समझ रहा था।

तिवारिन—बस कुछ दिन इसी तरह और समझते रहो। ९ महीने पूरे हो जाने पर आँखों से भतीजे का मुख लूट लेना।

कौशिल्या संकोच, भय और लज्जा के कारण मरी जा रही थी। उसे अपने मुंह से इस अत्याचार का भण्डा फोड़ कर देने का साहस न हो सका। वह घर की कोठरी के कोने में छिपी हुई पृथ्वी माता के वक्षस्थल को अपने आंसुओं

से धो रही थी। उसने यमराज का आवाहन किया किन्तु उस समय उन्होंने भी उसकी ओर न देखा, और देखते कैसे ? "दैवोऽपि दुर्बल घातकः" की लोकोक्ति मिथ्या न हो जाती ?

इस घटना के कुछ ही दिनों बाद तिवारिन ने अपने बुड्ढे पति देव से निवेदन किया कि कौशिल्या के गर्भ रह गया है और कुछ ही दिनों में इसका भण्डा फोड़ होने वाला है। तिवारी जी क्रोध से लाल हो गये और दो कलकतिये गुण्डों को ५००) देकर बिना सोचे समझ उसे कत्ल करवा दिया। उसकी लाश पड़ोस वाले मुहल्ले में फेंक दी गई और सिर काट कर घर के किसी कोने में गाड़ दिया गया।

५

चन्द्रमौलि का स्कूल जाना बन्द हो गया। किताबें जहाँ की तहाँ पड़ी बिखर रही थीं। उनके सजाने की फ़िक्र उसे न थी। सारे दिन अपने कमरे के अन्दर पड़ा-पड़ा वह किसी भारी चिन्ता में मग्न रहने लगा। उसका पिता कलकत्ते में एक नामी वकील था। घर की अवस्था अच्छी थी, जिससे उसे पढ़ने के अतिरिक्त और किसी प्रकार की चिन्ता न थी। किन्तु जब से उसका अभिन्न हृदय मित्र हवालात के सीकचों में बन्द कर दिया गया था, उसका मन किसी भी बात में न लगता था। वह अपने मित्र के छुटकारे लिये तड़फ रहा था।

उसकी माता ने पूछा—आज कल तुम उदास क्यों रहते हो बेटा? स्कूल भी नहीं जाते। कुछ तबियत तो खराब नहीं है?

चन्द्रमौलि ने इस प्रश्न का कुछ भी उत्तर न दिया। वह अपने बिस्तर पर पड़ा हुआ तकिये पर आँसू गिराने लगा।

माता का सरल हृदय दया से पिघल गया, उसने नेत्रों के आंसू अपने अंचल से पोंछ कर पूछा—क्या बात है बेटा? इस प्रकार रो क्यों रहे हो?

चन्द्रमौलि के मुख से फिर भी कोई शब्द न निकला, उसका गला रुंध गया और वह अपने अश्रुपूर्ण नेत्रों से माता की ओर देखने लगा।

माता ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए फिर पूछा—कुछ कहो तो सही मेरे लाल, आखिर इस प्रकार से रोने का कारण क्या है? मैं भी तो समझूं! अबकी बार चन्द्रमौलि बड़े जोर से उठा उसका सारा दुःख आंसुओं के रूप में परिणित होकर बाहर निकलने लगा। लग भग १५ मिन्ट तक यही दशा रही। माता का हृदय दया से फटा जा रहा था और चन्द्रमौलि के कलेजे का बोझ कम हो रहा था।

रोने से दुःख की वेदना घट जाती है। कुछ देर में चन्द्रमौलि का रुँधा हुआ गला साफ होगया। उसने किसी

प्रकार सिसकते सिसकते सारा किस्सा अपनी माता को सुना दिया।

इन बातों से उसकी माता का हृदय शिथिल पड़ गया। वह विचार करने लगी "बेचारा परदेशी, गरीब लड़का, निरपराध होने पर भी हथकड़ियों में ठूंस दिया गया। उसका चित्त क्या कह रहा होगा !! यहाँ उसका कौन बैठा है जो छुटा सकेगा !! बेचारा आया था पढ़ने के लिए और पड़ गया जेल के अन्दर !!

उस समय ४ बज थे। वकील साहब कोट-पैंट डाटे हुए कचहरी से वापस आ पहुँचे, अपनी स्त्री और पुत्र को किसी प्रगाढ़ दुःख में दुखी पाकर एक बार उनका भी मन मलीन हो गया और उन्होंने उनसे इसका कारण पूछा।

चन्द्रमौलि की माता ने बड़ी कातरता से सारा हाल कह कर उस लड़के के छुटकारे के लिए प्रयत्न करने की प्रार्थना की।

वकील साहब ने हँस कर उत्तर दिया "अरे तुम लोग भी किस चक्कर में पड़े हो, यह तो संसार है ! इन बातों को कहाँ तक देखोगे ?

चन्द्रमौलि ने हाथ जोड़ कर पिता से कहा "चाहे जो कुछ हो, वह बिलकुल निरपराध है। मैं उसे अपनी आँखों के सामने इस अपराध का अपराधी नहीं देख सकता

वकील साहब ने कहा—वह छोकड़ा अपना लगता कौन जो मैं उसके लिए मारा मारा फिरूँ ?

चन्द्रमौलि—वह मेरा मित्र है। बिना उसे छुटकारा दिलाए मैं जीवित नहीं रह सकता। मुझे अपनी जान की परवाह नहीं है। भूख प्यास से तड़प तड़प कर यहीं पर प्राण दे दूँगा।

वकील साहब—तुम लोग मूर्ख हो। अपना काम देखो। ऐसे मित्र कितने ही पैदा होते रहते हैं!

इतना कह कर वे अपने कमरे में चले गये।

६

मनुष्य पर जब विपत्ति पड़ती है, तभी उस में आपदाओं के सहने की शक्ति का भी सञ्चार होता है। भय का सामना करने पर ही निर्भयता उत्पन्न हो सकती है। कमज़ोर से कमज़ोर हृदय भी किसी भयानक स्थिति में पड़ कर अति शीघ्र सिंह-हृदय बन सकता है। ठीक यही दशा श्रीधर की हो गई। जब पहिले पहिल उसे कान्स्टेबिल से बात करनी पड़ी थी, उसकी जीभ जबान में चिपकी जाती थी। सारा शरीर काँपने लगा था। मुख पर उदासी दौड़ गई थी और इन्हीं कारणों से वह हवालात के सीकचों में बन्द कर दिया गया था। किन्तु, दस सात दिन तक हवालात के सीकचों में बन्द रहने पर, पुलिस की नृशंसता देखने पर, अब उस में इतना साहस उत्पन्न हो गया था कि वह बे धड़क होकर निर्भयता से प्रत्येक प्रश्न का उत्तर भली प्रकार दे सकता था। शरीर में दृढ़ता आ गई थी, मुख का तेज पूर्ववत् स्थिर था।

रहता था, उस पर फीकापन जरा भी न मालूम पड़ता था।

पुलिस इस मामले में उसके विरुद्ध सबूत जुटाने के लिए एड़ी और चोटी का पसीना एक कर रही थी। उसे उस मुहल्ले का प्रत्येक मकान ढूँढ़ डालने पर भी, अच्छी तरह खोज करने पर भी पता न मिला कि वह लाश किस के यहाँ की थी। श्रीधर का चाकू रातों रात उसी लाश के खून में डुबो लिया गया—और उसके सोते समय उसके कपड़ों पर भी कुछ खून की छींटें इधर उधर छिड़क दी गई। इतना सब कर लेने पर भी पुलिस वालों को उस लाश के पता लगाने में सफलता न मिल सकी। उसका कटा सिर न मिल सका कि जिससे आगे की कार्रवाई की जा सके। लाचार हो कुछ दिन के लिए और मुहलत माँगनी पड़ी। सारे कलकत्ते में खुफिया पुलिस के आदमी छान बीन करते फिर रहे थे।

कहा जाता है कि खून सिर पर सवार होकर चिल्लाने लगता है। तिवारी जी का मन इस हत्या काण्ड से इतना उदास रहने लगा कि उनका चित्त किसी भी बात में न लगता था। दूकान जाते थे अवश्य, किन्तु केवल नाम करने के लिए कुछ ही घंटों में फिर वापस आ जाते और सारे दिन इस प्रकार के नीच कर्म पर, अपनी स्त्री की बर्बरता पर आँसू बहाया करते थे। रात को कभी २ उन्हें वैसा स्वप्न भी देख पड़ता था जिसके भय से वे एक बारगी

पड़ते थे। दूसरी ओर पुलिस का भी भय था, अतः सोते समय अपने मुँह में कपड़ा ठूँस लिया करते थे कि जिससे चिल्लाने पर भी मुँह के बाहर कोई शब्द न निकल सके। गर्मी के दिन होने पर भी अँधेरी कोठरी में जाकर सोते थे—बाहर छत पर लेटने में भय हो रहा था। आकाश का चन्द्रमा और नक्षत्र गण उन्हें घृणा की दृष्टि से देख रहे थे।

एक दिन तिवारी जी दूकान जा रहे थे—सामने से कई पुलिस के सिपाही अपनी ड्यूटी से वापस लौट रहे थे। नजर पड़ते ही बूढ़े तिवारी जी कुछ सिटपिटा से गये—मुख पर उदासी दौड़ गई और अपना मुख दूसरी ओर घुमाकर चलने लगे। पास ही खुफिया पुलिस का दारोगा फ़कीर का रूप बनाये खड़ा हुआ भीख मांग रहा था। तिवारी जी के बदलते हुए रंग-रूप को देख कर उसे कुछ सन्देह हो गया और वह भी उनके पीछे २ चलने लगा। दूकान पर पहुँचते ही उस फ़कीर ने तिवारी जी से पूछा—बच्चा, तुम इतने उदास क्यों रहते हो ? क्या घर में सन्तान का दुःख है ?

तिवारी जी ने एक बार उस फ़कीर की ओर देखा और उसे कोई सिद्ध समझ कर उत्तर दिया "बाबा जी, आप की कृपा से मुझे किसी बात का भी दुख न था। अभी कुछ दिन हुए मेरी छोटी बहिन का देहान्त हो गया जिससे चित्त उदास रहता है।

फ़कीर बोला—राम ! राम ! उसकी उमर क्या थी ? शायद २०-२२ वर्ष के लग भग होगी।

तिवारी जी ने सरल स्वभाव से उत्तर दिया—हाँ, हाँ, बाबा जी ! बस, इससे अधिक न थी।

फ़कीर—शरीर का रंग शायद कुछ २ साँवला था ?

तिवारी जी—बाबा जी, आप तो कोई सिद्ध मालूम पड़ते हैं, बिना बताये सारा हाल कह रहे हैं। खैर अब आप इस किस्से को आगे न बढ़ाइये। अपने मन की बात मन ही में रखिए। अब उससे सिवाय हानि के लाभ ही क्या है ?

फ़कीर ने धीरे से कहा—लेकिन, किया बच्चा तुमने बड़ा खराब काम ! उसकी हत्या करना उचित न था। खैर, जो हो गया सो होगया, अब चिन्ता क्यों कर रहे हो ? ईश्वर का भजन करो। वही सब कल्याण करेगा। चिन्ता करने से अब होता क्या है ?

तिवारी जी बाबा जी के चरणों पर गिर पड़े और हाथ जोड़ कर बोले—भगवन्, अब मेरी लाज आप के ही हाथ में है। क्या करूँ स्त्री के चक्कर में पड़कर बड़ी भारी गलती कर बैठा।

बाबा जी ने अपने झोले से एक पुड़िया निकाली और उसमें से कुछ भस्म तिवारी जी के हाथों पर रख कर बोले—"इसे नित्य प्रातःकाल अपने मस्तक पर लगा लिया

करो। उस हत्या का अपराध घट जायगा और तुम्हारी सारी चिन्ता दूर हो जायगी।

तिवारी जी ने हाथ पसार कर उस प्रसाद को स्वीकार कर लिया और बदले में १०) का एक नोट बाबा जी के चरणों पर रख दिया—फकीर उसे उठा कर चलता बना।

७

घर वालों के सत्याग्रह के आगे वकील साहब को झुकना पड़ा और उन्होंने श्रीधर को इस मामले से बचाने का पूर्ण रूप से संकल्प कर लिया। उस दिन संध्या समय जब वे कोतवाल साहब से उसके विषय में परामर्श कर रहे थे, उन्होंने देखा कि कोतवाल साहब का चित्त प्रसन्न न था। वे किसी भारी विपत्ति में घिरे हुए जान पड़ते थे। मित्र-भाव से पूछने पर उन्होंने बताया—वकील साहब, यद्यपि मैं उस युवक के विरुद्ध कोई भी सच्चा सबूत अब तक नहीं जुटा सका हूँ। सारे केस बनावटी रंग में रँग गए हैं, किन्तु क्या करूँ, लाचार हूँ. उसे छोड़ कैसे दूँ जब तक कि इस सम्बन्ध का असली हत्यारा मेरे हाथ न लग जाय? सारे दिन दौड़ धूप की जाती है किन्तु पता नहीं लगता कि वह थी किस घर में रहती थी। सुपरिन्-टेन्डेन्ट साहब तथा मजिस्ट्रेट साहब हम लोगों पर चिढ़ चिढ़ा रहे हैं। अभी उस दिन सोहनलाल सर्किल उन्होंने कहा था बड़े अफसरों की बात है कि मामूली

बात का अभी तक पता न लग सका। ऐसी हालत में उस युवक मुलजिम को मैं निर्दोष कैसे सिद्ध कर दूँ? किसी प्रकार उल्टा सीधा करके सबूत तो जुटाना ही पड़ेगा!

उपरोक्त शब्द पूरे होते २ सामने एक पुलिस का कान्स-टेबिल आ पहुँचा और बड़ी प्रसन्नता से बोला—"हुजूर, जगदीश चन्द्र ख़ुफ़िया पुलिस के दारोगा साहब ने उस दिन वाले खून का पता लगा लिया है। दारोगा जी १०-१२ सिपाहियों के साथ उस मकान पर छापा मारने गये हैं। आशा है कि हत्यारा बहुत शीघ्र गिरफ़ार कर लिया जायगा।

इसी बीच टेलीफोन की घंटी बज उठी। कोतवाल साहब ने चोंगा उठा कर कान में लगा कर कहा—"हलो, सुनाई पड़ा—मैं हूँ नादिर अली, हुजूर!

कोतवाल साहब बोले—कहाँ से बोल रहे हो?

उत्तर मिला—हरीसन रोड की पुलिस चौकी से।

कोतवाल—हाँ क्या बात है?

सुनाई पड़ा—हुजूर, उस दिन के हत्या काण्ड वाला मुलजिम पकड़ लिया गया है। घर की तलाशी लेने पर नाबदान के पास लाश का सिर गड़ा था। मुलजिम को गिरफ़ार करके शीघ्र लाया जा रहा है।

कोतवाल साहब ने हँसते हुए कहा—"बधाई?

किया।" और टेलीफ़ोन का चोंगा कीलो पर टाँग दिया।

वकील साहब ने कोतवाल साहब से हाथ मिला कर कहा—अब तो आप उस युवक के छुटकारे की उम्मेद दिला सकते हैं?

कोतवाल साहब ने मुस्कराकर उत्तर दिया—मैं नाहीं कब कर रहा था? आप उसे अभी लिया जा सकते हैं।

वकील साहब बोले—अच्छा, अब ऐसी बातें!

कोतवाल साहब—क्या करूँ बाबू, रोबों का भी तो ख़याल करना पड़ता है! यह नौकरी ही ऐसी है कि बिना झूठ, छल और प्रपञ्च का ढोंग रचे काम नहीं निकलता।

वकील साहब ने कहा—अच्छा, गुडनाइट, कल आप से फिर मिलूँगा।

कोतवाल साहब ने हाथ मिलाकर कहा—बहुत अच्छा गुड नाइट!

वकील साहब के चले जाने के बाद कुछ ही मिनटों जेल की लॉरी कोतवाली के सामने आ खड़ी हुई। हाथों हथकड़ियाँ पहिने हुए अभियुक्त अयोध्याप्रसार नीचे और कोतवाल साहब के सामने पेश किये गये। नेत्रों से आँसुओं की धारा निकल रही थी। कटा सा सिर देख देखकर हृदय फटा जा रहा था। कोतवाल साहब को देखते ही वे चिल्ला उठे—मैं ही बस बेचारा

खून का कारण हूँ। मुझे ही दण्ड मिलना चाहिये। मैं उस पाप का प्रायश्चित्त करने के लिये सहर्ष तैयार हूँ।

जब अभियुक्त अपना बयान लिखा रहा था, उसका हृदय रह रह कर घृणा से भरा जा रहा था। उसने एक बार लम्बी साँस ले कर ज्यों ही कोतवाल साहब की ओर देखा तो उनके पास ही दूसरी कुर्सी पर उसे वह मूर्ति दिखलाई पड़ी, जिसे कुछ दिन पहिले उसने फ़कीर के रूप में देखा था।

अभियुक्त उस मूर्ति के चरणों पर गिर कर बोला—"भगवन् आप ने मेरे साथ बड़ा अच्छा खेल खेला।

मुक़द्दमा चलने पर तिवारी जी को आजन्म काले पानी का कठिन कारावास का दंड मिला और वे कुछ ही दिनों 'अण्डमन' द्वीप में रवाना कर दिये गये।

८

कई वर्षों के बाद एक दिन सन्ध्या समय दोनों नवयुवक घूमते घामते तिवारी जी के मकान के नीचे से गुज़र रहे थे कि किसी रमणी कंठ ने उन्हें धीरे से पुकारा "बाबू, आओ न!"

युवकों ने देखा कि मकान के दरवाज़े पर किवाड़ों की आड़ में एक सजी सजाई स्त्री खड़ी थी। वे पहिले कुछ ठिठके किन्तु फिर विचार करने लगे कि चल कर वहाँ देखना तो चाहिये कि क्या हाल है, इस में अपना हर्ज ही क्या है?

दोनों बिना संकोच के मकान के अन्दर घुस पड़े। सारा घर सुनसान पड़ा था। एक कमरे में एक फटी दरी बिछी हुई थी, जिस पर बैठने के लिए उस स्त्री ने उनसे संकेत किया। दोनों ही उस पर बैठ गये।

स्त्री ने युवकों की ओर देख कर कहा—आप लोग शायद यू० पी० के मालूम पड़ते हैं।

युवकों ने उत्तर दिया—हाँ, हम लोग उसी तरफ़ के हैं।

स्त्री ने फिर पूछा—यहाँ क्या काम धन्धा होता है?

इस पर दोनों बोल उठे—अभी तो इस साल पढ़ कर निकले हैं। आगे जो कुछ हो, अभी कुछ पता नहीं है।

स्त्री ने पूछा—क्या आप लोग मुझे पहचानते हैं?

दोनों ने एक बार उसके चेहरे पर अच्छी तरह से दृ[illegible] डाल कर देखा और लापरवाही से उत्तर दिया—"नहीं।

स्त्री की आंखों में आंसू आ गये। उसने कहा—ठी[illegible] है। अब मैं पहिली सी रही भी तो नहीं। अगर आप ले[illegible] मुझे न पहिचान सके तो इस में दोष ही क्या है?

युवकों ने कहा—कसूर माफ हो, मैं बिलकुल [illegible] जानता हूँ।

स्त्री ने कहा—आप न जानें, मैं तो जानती हूँ। [illegible] श्रीधर की ओर देख कर कहा—आप को मेरे ही [illegible] हवालात में कष्ट उठाना पड़ा था।

अब युवकों की समझ में आ गया कि यह कौन[illegible]

युवक—क्या जिस शरीर से पाप होसकता है उससे पुण्य नहीं किया जा सकता?

स्त्री—लेकिन अब मेरी गति ही क्या है? मैं तो पतित हूं—कौन मुझे पवित्र कह सकता है?

दोनों युवक कुछ देर के लिये किसी गम्भीर विचार धारा में गोते लगाने लगे। कुछ देर के बाद चन्द्रमौलि ने श्रीधर की ओर देख कर कहा "भाई अब आप की, क्या इच्छा है?"

श्रीधर ने चन्द्रमौलि की ओर देखते हुए "उत्तर दिया-मैं इन्हें अपनाने के लिये तैयार हूं।" अगर आप मेरा साथ दें तो।

चन्द्रमौलि बोला—मित्र, प्राण रहते तो मैं तुम से अलग नहीं हो सकता—समाज चाहे कितना ही विरोध करता रहे, इसकी मेरा मात्र चिन्ता नहीं है। परमात्मा का नाम लेकर अपना प्रण पालन करो। ईश्वर सहायता करेगा। श्रीधर ने उस स्त्री का हाथ पकड़ कर कहा—आज से मैं तुम्हें अपनी पत्नी बनाता हूं। मुझ से अपनी आँखों के सामने समाज का यह नग्न चित्र नहीं देखा जा सकता, मैं तुम्हारा उद्धार करूंगा, तुम्हें पुण्य के पथ पर ले चलूंगा तुम्हें अन्य इच्छा न करने दूंगा।

...र के पैरों पर गिर पड़ी और बोली—आप, ...हैं। मुझे आशीर्वाद दो कि मैं आपके चरणों

का प्रायश्चित करती हुई, आपकी सेवा के योग्य शक्ति प्राप्त कर सकूँ।

श्रीधर ने अपना कर-पल्लव उसके मस्तक पर रखकर कहा—प्रिये, आयुष्मानवती हो, परमात्मा तुम्हारा मंगल करें।

दोनों युवक उसे साथ लिवा कर घर से बाहर होगये।

अब आजकल श्रीधर कलकत्ते में एक प्रसिद्ध डाक्टर है। उसकी स्त्री समस्त बंगाल में राष्ट्रीयता की प्रतिष्ठित मूर्ति समझी जाती हैं, चारों ओर उसका सम्मान है। गत् १९३० के आन्दोलन में वह एक साल का कारावास भी भोग चुकी है। यहाँ पर उसके नाम का उल्लेख करके, उसकी दिव्य-ज्योति पर वृथा कीचड़ उछालने की अधम धृष्टता हम नहीं कर सकते।

पुण्य-प्रताप से ही इस गति को प्राप्त कर सके हैं, अतएव इन्हें केवल कुत्ता कह देना योग्य नहीं जान पड़ता—"समाज के कुत्ते" अगर कहा जाय तो बहुत ठीक रहेगा।

ये "समाज के कुत्ते" मनुष्य के रूप में विचरते हैं। भाग्य प्रबल है जिससे पूँछ नहीं होती, शेष सब अंग कुत्तों के ही बराबर होते हैं। इस प्रकार के कुत्ते प्रत्येक समाज में पाये जाते हैं। भाग्य से कान्यकुब्ज समाज में भी इनकी संख्या किसी प्रकार कम नहीं है। अच्छे से अच्छे और खराब से खराब घर में भी एक-आध ऐसा कुत्ता थोड़े ही परिश्रम से हाथ लग सकता है।

कान्यकुब्जों के प्रसिद्ध स्थान, भगवन्तनगर, मुरादाबाद, ऊगू, बिगहपुर, हड़हा, बररका, बेथर, गेगांसो, नारायण दास' खेड़ा, मौरावाँ, पुरवा खोंटिआवाँ (गौसगंज), सिधौली, बालामऊ, कोटरा, जहाँगीराबाद, शिवराजपुर, काकूपुर, बांगरमऊ, रैवापुर, मैंधना, नरवल, धौकलपुर, कल्यानपुर, मांमगाँव, नवाबगढ़, फतेहपुर, असनी, मीरा सराय, कन्नौज, फर्रुखाबाद, बछरावाँ, लखनऊ, कुंदौली, कटारा, कटेहरा, सुमेरपुर, बंथर, हँसवो, अमौसी, महराजपुर, जगदीशपुर, चन्दनपुर, पड़ो, रिवाड़ो, कानपुर, पटना, बनारस, इलाहाबाद, इटावा, और रामनगर इत्यादि में इस प्रकार के कुत्तों की संख्या अधिकता से पाई जाती है। गाँव के जमींदार, नम्बरदार, और सेठ साहूकार

है। दोनों ओर से तनातनी हो जाती है। घर का सारा धन दो अंगुल के टुकड़े पर पानी की भाँति बहा दिया जाता है। कुत्ते अपना पेट भरते रहते हैं, परिणाम स्वरूप दोनों भाई भिखमंगे हो जाते हैं और दाने-दाने के लिये भटकने लगते हैं। यह सब उन्हीं "समाज के कुत्तों" की कूट-नीति का परिणाम है।

पिता अपनी कन्या का विवाह निश्चय कर आता है, लग्न समीप आ जाती है, लड़की के घर में तैयारियाँ होने लगती हैं, इसी बीच वर के यहाँ पत्र पहुँच जाता है कि लड़की काली है, चेचक-मुँह वाली है, अन्धी है, लूली है और अधिक अवस्था वाली है, आप इस के साथ अपने लड़के की शादी न करें।" सारा खेल बात की बात में बिगड़ जाता है, लड़के वाले भड़क जाते हैं, समझाने बुझाने और सन्तोष दिलाने पर भी उनको विश्वास नहीं आता। विवाह स्थगित हो जाता है। सारा सामान रद्द कर दिया जाता है। "समाज के कुत्ते" तमाशा देखते हैं। लड़की के पिता को विपत्ति से घिरा देख कर आनन्द से फूले नहीं समाते। यह सब उन्हीं "समाज के कुत्तों" की पशुता का नमूना है।

सयानी लड़कियाँ घर से बाहर नहीं निकल सकतीं, घर की छत पर नहीं जातीं। मुँह से बोल तक नहीं सकतीं, क्यों कि समाज के कामान्ध कुत्ते रात-दिन उनको तलाश

है। दोनों ओर से तनातनी हो जाती है। घर का सारा धन दो अंगुल के टुकड़े पर पानी की भाँति बहा दिया जाता है। कुत्ते अपना पेट भरते रहते हैं, परिणाम स्वरूप दोनों भाई भिखमंगे हो जाते हैं और दाने-दाने के लिये भटकने लगते हैं। यह सब उन्हीं "समाज के कुत्तों" की कूट-नीति का परिणाम है।

पिता अपनी कन्या का विवाह निश्चय कर आता है, लग्न समीप आ जाती है, लड़की के घर में तैयारियाँ होने लगती हैं, इसी बीच वर के यहाँ पत्र पहुँच जाता है कि लड़की काली है, चेचक-मुँह वाली है, अन्धी है, लूली है और अधिक अवस्था वाली है, आप इस के साथ अपने लड़के की शादी न करें।" सारा खेल बात की बात में बिगड़ जाता है, लड़के वाले भड़क जाते हैं, समझाने बुझाने और सन्तोष दिलाने पर भी उनको विश्वास नहीं आता। विवाह स्थगित हो जाता है। सारा सामान रद्द कर दिया जाता है। "समाज के कुत्ते" तमाशा देखते हैं। लड़की के पिता को विपत्ति से घिरा देख कर आनन्द से फूले नहीं समाते। यह सब उन्हीं "समाज के कुत्तों" की पशुता का नमूना है।

सयानी लड़कियाँ घर से बाहर नहीं निकल सकतीं, घर की छत पर नहीं जातीं। मुँह से बोल तक नहीं सकतीं, क्यों कि समाज के कामान्ध कुत्ते रात-दिन उनको ताड़ा

में फिरते रहते हैं—उन्हें घूरते हैं और उनके सतीत्वहरण का प्रयत्न करते हैं। सम्बन्ध, रिश्तेदारी, इज्जत और आबरू को तृण समान भी नहीं मानते। इससे अधिक पाजीपन का उदाहरण और क्या हो सकता है ?

अगर किसी के घर में विधवा होती है, उसे वे नरक में कोई भ्रष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। उसके पास दूतों द्वारा पत्र पहुँचाते हैं। मिलन के लिए प्रार्थनाएं करते हैं। धन का लोभ देते हैं। अपनी प्रभुता दिखलाते हैं और कूट-नीति का जाल बिछा कर अन्त में उसे पतित ही करके दम लेते हैं। गर्भ रह जाने पर आप अलग खड़े हो जाते हैं, गाँव वालों से अपनी मुचंडता बयान करते हैं, लोगों को तमाशा देखने के लिए बुला लाते हैं, फल स्वरूप बेचारी विधवा पापों का फल भोगने के लिए घर से अलग कर दी जाती है। कोई वेश्या बन जाती है, कोई काशी आदि स्थानों में पहुँच कर गर्भ गिरा कर विधर्मियों के यहाँ रहने लगती है, और कोई लज्जावश आत्महत्या कर लेती है। "समाज के कुत्तों" की बन आती है, पुलिस में खबर हो ती है, घर वाले तंग किये जाते हैं, भ्रूण हत्या करने ती, गर्भ फेंकने वाली बेचारी विधवा गिरफ़्तार की जाती पुलिस के भूत उसके साथ मनमानी करते हैं, घर वाले फिरते हैं और वे नीच पतित समाजी कुत्ते गुलछर्रे हैं।

दहेज कम मिलने पर, कोई नियम परिपालन न होने से, बेचारी ग़रीब दुलहिन पर अत्याचार के बादल बरसाये जाते हैं। पीठ पर डण्डे पड़ते हैं, जूठन के अतिरिक्त और कुछ खाने को नहीं मिलता। रोज नया कौतुक रचा जाता है—कभी-कभी प्राण तक हर लिये जाते हैं। "धोबी से न जीतने पर गदहे के कान उमेठने" वाली कहावत उस नई दुलहिन के साथ सिद्ध की जाती है। समाज के कुत्तों की नीचता पर कहाँ तक विलाप किया जाय!

घर में स्त्री मौजूद है, सन्तान भी है, किन्तु कामान्ध कुत्ते दूसरी और स्त्री लाकर बिठा देते हैं। दूसरी के बाद तीसरी, और तीसरी के बाद चौथी तक नम्बर पहुँच जाता है। सबकी सब मौजूद रहती हैं। नई के साथ रास-विहार किया जाता है। शेष पहिले वाली दासी बना दी जाती हैं। जन्म-भर उन पशुओं की पशुता पर वे अपनी आँखों से आँसू गिराती रहती हैं।

समाज के हृदय-हीन कुत्ते उनकी ओर आँख तक उठाकर नहीं देखते।

"समाज के कुत्ते" दस-दस बारह २ तक विवाह करते चले जाते हैं। प्रत्येक स्त्री को किसी न किसी प्रकार प्रति वर्ष काल के गाल में पहुँचाते रहते हैं। उधर दहेज का भी लाभ रहता है। हिसाब लगाने से पता चला है कि सैकड़ा पीछे २५ व्यक्ति ऐसे निकल सकेंगे कि जिन्होंने जीवन-

करते हैं, सिगरेट उड़ाते हैं, लेकिन लोगों की आँख में धूल झोंकने के लिए वे हत्यारे २० बिस्वा की मर्यादा से नीचे नहीं गिराये जाते।

स्वयं तो नपुंसक हैं, शरीर में वीर्य का पता तक नहीं है, वेश्यागामी बन कर सारा बल खो चुके हैं, किन्तु नर-पिशाच "समाज के कुत्ते" सन्तानहीन होने का ढोंग रचकर अबोध बालिकाओं का गला मरोड़ डालते हैं।

परदेश में ईसाई बने रहते हैं, टेबुल पर बैठ कर होटल की रकाबियों में अण्डा-रोटी खाते हैं, गायत्री न्त्र का भूल से भी नाम नहीं लेते, शिखा का श्राद्ध कर चुके हैं, जनेऊ का वजन २ माशे से अधिक नहीं है, दांतों में सुअर के बालों वाला ब्रुश रगड़ा जाता है, किन्तु अपने स्थान पर पहुँच कर चन्दन पाटा लगा कर "भारद्वाज" की साक्षात मूर्ति बन जाते हैं। इन कुत्तों की लीला बड़ी अद्भुत है।

किसी का इष्ट होते देख कर दिल में दर्द होने लगता है, शुभ कार्य में बुखार आ जाता है, धर्म सभा में जाने के समय पाखाना लगता है। रुचि होती है कलह से, वेश्या-नृत्य से, शराब-कबाब के भरे हुए प्याले और रकाबियों से, सिगरेट, माँस, और दूसरे की स्त्री तथा कन्या का सतीत्व नष्ट करने के साधन से। सुबाहु और ताड़का की भाँति सारे दिन शुभ कार्य्यों में विघ्न पहुँचाया करते हैं।

[

देखने में स्वरूपवान, वाणी में मधुर, बातचीत में प
होते हैं, किन्तु उनके हृदय के अन्दर ढाई फीट गाढ़ा कीच
भरा रहता है, जिसमें सीधे सादे मनुष्य बड़ी सुगमता
फँस जाते हैं। बाद में प्राण तक निछावर कर देने पर भी
उन पागल कुत्तों से छुटकारा नहीं मिलता।

नित्य प्रातःकाल किसी भले आदमी का अनिष्ट करने
लिए षड्यन्त्र रचा जाता है, बड़े २ पोथाधारी पंडित
महारथी बनाये जाते हैं, क्रूरता, पशुता और नृशंसता का
व्यापार करके इन्हीं कुत्तों की विजय होती है, इनके नीच
कर्मों को कोई तब भी नहीं पहिचानता।

इन कुत्तों के पास कोई काम-काज नहीं रहता है, सारे
दिन आवारा घूमा करते हैं, बड़े सज-धज से रहते हैं,
तम्बाकू और भंग को इनकी मंडली में भरमार रहती है,
कितने ही अफीम के गोले भी निगलते हुए देखे गये हैं,
सारे दिन हँसी-ठट्ठा करने के अतिरिक्त और किसी भी बात
में कुत्ते होशियार नहीं पाये गये हैं।

बातें दुनियां भर की करेंगे, किन्तु करने के नाम पर रो
देंगे। दूसरों को फँसा देंगे, आप दूर से खड़े होकर तमाशा
देखेंगे। आग लगा देंगे, फिर उसे बुझाने का ढोंग रचेंगे।
पंडित बने रहेंगे, किन्तु इज्जत-आबरू पर हाथ चला देंगे;
साधु का रूप धरेंगे किन्तु बहू पर छापा मार देंगे। इन
खतरनाक कुत्तों से परमात्मा ही रक्षा करे।

उपरोक्त बातें कान्यकुब्ज समाज के कुत्तों के विषय में बड़ी खोज के साथ लिखी गई हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने गांव क़स्बे और शहर में पता लगाये तो वह तुरन्त इन साधनों के द्वारा उनकी पहिचान कर सकता है। प्रत्येक सज्जन को इन पिशाचों से सावधान रहना चाहिए। देश के नवयुवकों को अधिक सावधानी की आवश्यकता है। इन कुत्तों के काटने से जीवित बच जाना बहुत मुश्किल है, अतएव नौजवानो, देश के सुधारको, हृदय रखने वालो और कान्यकुब्ज समाज के वीरों, सावधान !

समाप्त

छप रहा है! छप रहा है !!

सयाना

लेखक—पं० रामविलास शुक्ल "उदय"

(सचित्र सामाजिक उपन्यासों का शिरोमणि)

क्या है ???

सर्व-श्रेष्ठ मौलिक-कथानक; रोचक, और स्वाभाविक चरित्र-चित्रण; सरस, सरल और मनोहारिणी भाषा—घटना वैचित्र्य और प्रवाह आदि-आदि सारी बातें अनोखी हैं। —और—

धर्म और सभ्यता की आड़ में जीने वाली रूढ़ियों का भयानक भण्डाफोड़! अविद्या का कुफल और उससे पैदा होने वाली भीषण अनर्थ की मार्मिक व्याख्या! कङ्गाली के आँसू और अमीरी की मुस्काहट का ऐसा प्रसंग है—जो जंग की तरह आपके सीने पर जम जाएगा। पढ़ने से बहोशी उठती है। ऐसी बहोशी जो हमारी ही उद्दण्डता, अज्ञान और लापरवाही से पैदा होती है। जो, और—

हमारी नस-नस में फोड़े की तरह दुखती है।

आप पढ़िए और अपने बच्चों को पढ़ाइए। जिनके सिर पर गृहस्थी का बोझ पड़ेगा और जिन्हें आप थाली सौंपकर परलोकवासी बनेंगे। इसलिए कि वे तुम्हारी पसीने की कमाई को—ठगों और ढोंगापन्थियों से बचाये रहें! आज-ही, 1) रु० खचिये। यह एक रुपया जाने, कितने रुपये बचायेगा। हम छाप रहे हैं—